लेखक जार्ज डबल्यू क्रोनिन

अनुवादक जगदीश चन्द्र

नेशनल एकाडमी दिल्ली

कम्यूनिज़्म पर प्रथम पुस्तक

दो सौ प्रश्न तथा उत्तर

लेखक

जार्ज डब्ल्यू. क्रोनिन

अनुवादक

जगदीश चन्द्र

प्रकाशक

नेशनल एकाडमी

९, अंसारी मार्केट, दरियागंज,

दिल्ली-६

प्रकाशक
नेशनल एकाडमी,
६, अंसारी मार्केट,
दरियागंज, दिल्ली-६

प्रथम संस्करण : जून १९६४

मूल्य : एक रुपया

मुद्रक
नया हिन्दुस्तान प्रेस,
चांदनी चौक, दिल्ली-६
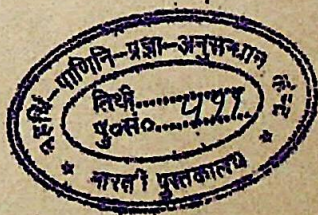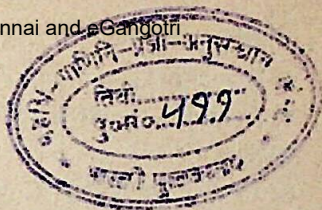
परिचय

इस बात का निर्णय तो विश्व-जनमत से ही होगा कि मानवता अन्त में अपने लिए स्वतन्त्रता का मार्ग चुनती है या कम्यूनिज़्म का। परन्तु एक बात स्पष्ट है कि यदि यह निर्णय तथ्यों के आधार पर हुआ तो हमें परिणाम के बारे में कोई संदेह नहीं है। परन्तु दुर्भाग्य से जनमत और निर्णय का आधार कम्यूनिज़्म द्वारा फैलाई हुई मिथ्याएं भी हो सकती हैं। कम्यूनिज़्म का प्रचार आशाजनक परन्तु गलत धारणाओं के कारण होता है। कम्यूनिज़्म का स्वर्ण-जाल बहुत चतुरता से उन भोले-भाले लोगों को फांसने के लिये बिछाया जाता है जो उज्ज्वल भविष्य के स्वप्न देखते हैं। यह पुस्तक कम्यूनिस्टों के छलकपट तथा माया-जाल को पूर्णतया नंगा कर देती है। यह कम्यूनिज़्म के असली उद्देश्यों पर कोरा सैद्धान्तिक तर्क करने की बजाय इसके व्यावहारिक पहलुओं का सिंहावलोकन करती है।

अन्तर्राष्ट्रीयता, कम्यूनिज़्म के बहु लक्षणों में से एक लक्षण है। इसकी हम सहज ही उपेक्षा कर जाते हैं। सोवियत यूनियन एक राष्ट्र या राज्य नहीं है। इसके स्वार्थ और लालसा की सीमाएं बहुत दूर तक फैली हुई हैं यह उस अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट आन्दोलन का केन्द्र भी है जो धार्मिक उन्माद के साथ स्वतंत्र संसार को गुलामी की बेड़ियाँ पहनाना चाहता है। कम्यूनिज़्म का खतरा युद्ध या इसकी धमकी से भी बड़ा है और हर समय सर पर सवार रहता है। पर परम्परागत कूटनीति का काम यह है कि विभिन्न देशों के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध पैदा करे और इसके फलस्वरूप जब मैत्री, शान्ति, न्याय तथा समृद्धि के संचार का विश्वास हो जाए तो प्रतीयमान संरक्षण का अनुभव स्वाभाविक है। परन्तु अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिज़्म इस प्रतीयमान शान्ति के वाता-वरण से लाभ उठाता है। युद्धकाल हो या शान्तिकाल, उसे यही धुन रहती है कि स्वार्थ-सिद्धि का कोई अवसर हाथ से न जाने पाए। मानव की स्वतंत्रता तथा प्रगति का जहाँ कहीं आभास मिले, उसे खत्म कर दिया जाए।

जोड़-तोड़ तथा घातपूर्ण चालें सोचने में कम्यूनिस्ट बल के प्रयोग को

न्यायसंगत तथा अपरिहार्य तो मानते ही हैं परन्तु उनकी कोशिश यह रहती है कि कूटनीति से अपनी विरोधी शक्ति को कमजोर और शिथिल कर दिया जाए। उनकी मुस्कानों से स्वतन्त्र जगत् की सुरक्षा की व्यवस्था कमज़ोर पड़ सकती है। उनकी ओर से सांस्कृतिक तथा प्रोपेगण्डा आक्रमण की आशा की जा सकती है वह उत्पादन में उन्नति की नुमाइश करके उसे कम्यूनिज़्म का चमत्कार बताते हैं। यदि असन्तोष और गड़बड़ से लाभ होने की आशा हो तो आर्थिक सहायता भी देते हैं। यदि बल प्रयोग अधिक लाभकारी जान पड़े तो वह इससे भी नहीं चूकते।

आन्दोलन शक्ति तथा विस्तार के दृष्टिकोण से कम्यूनिज़्म विश्व-इतिहास में बहुत अजीब लेकिन सबसे अधिक साम्राज्यवादी शक्ति बन चुका है। आज भी करोड़ों व्यक्ति ऐसे हैं जो इसकी बर्बरता तथा अत्याचार से पूरी तरह परिचित नहीं, और इसका मुकाबला करने के लिए तैयार नहीं हैं।

यह पुस्तक इसी सूझ-बूझ को फैलाने का सशक्त शस्त्र है।

फ्रैंकलिन एल० बैंडटे
प्रोफेसर तथा डायरेक्टर, सरकारी अनुसंधान ब्यूरो,
मेरीलैण्ड विश्वविद्यालय।

विषय-सूची

परिचय ७
प्राक्कथन ९
१. कम्यूनिज़्म की रूपरेखा ११
२. कम्यूनिस्ट शासन-प्रणाली १९
३. कम्यूनिज़्म और मज़दूर ३०
४. कम्यूनिज़्म के अन्तर्गत ज़मीन तथा जायदाद की मिल्कियत ३८
५. कम्यूनिज़्म में समता ४६
६. कम्यूनिज़्म के अधीन न्यायालय तथा न्याय ५०
७. साम्यवाद का लौह आवरण ५७
८. कम्यूनिज़्म और धर्म ६२
९. कम्यूनिज़्म के अधीन शिक्षा-प्रणाली ७१
१०. कम्यूनिज़्म के अधीन खाद्य वस्तुओं तथा माल का उत्पादन ८२
११. कम्यूनिज़्म के अधीन पारिवारिक जीवन स्त्रियां और बच्चे ९१
१२. कम्यूनिज़्म में व्यापार १०२
१३. कम्यूनिज़्म का विस्तार ११३
१४. शांतिपूर्ण सहअस्तित्व और सैन्यवाद १२५
१५. कम्यूनिज़्म और स्वतन्त्र संसार १३९
१६. कम्यूनिज़्म का मुक़ाबिला कैसे किया जाए १४९
अमरीका के राष्ट्रपति का यूनियन की दशा के विषय पर भाषण १५८

प्राक्कथन

"कम्यूनिज़्म पर प्रथम पुस्तक" में अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिज़्म पर दो सौ से अधिक प्रश्नों के उत्तर दिए गए हैं। ये सभी प्रश्न महत्वपूर्ण हैं क्योंकि कम्यूनिज़्म के विषय पर प्रायः यही पूछे जाते हैं। उत्तर सरल भाषा में दिए गए हैं और इनका अभिप्राय यह है कि कम्यूनिज़्म के सिद्धान्त पर विचारात्मक तर्क-वितर्क में न पड़ते हुए इस सम्बन्ध में पाठकों को प्रारम्भिक जानकारी दी जाए। सोलहवें अध्याय में, जिसका शीर्षक है, "कम्यूनिज़्म का मुकाबिला कैसे किया जाए" कम्यूनिज़्म का मुकाबिला करने के कुछ स्पष्ट तथा ठोस सुझाव देने का प्रयास किया गया है। यद्यपि इस प्रथम पुस्तक को कम्यूनिज़्म सम्बन्धी प्रश्नों का अन्तिम तथा पूर्ण उत्तर नहीं कहा जा सकता तथापि इतना अवश्य है कि इस विषय पर प्रारम्भिक जानकारी के लिए यह एक उद्धरण पुस्तक अवश्य है जिससे तुरन्त ही लाभ उठाया जा सकता है।

आधुनिक कम्यूनिज़्म के अध्ययन में जिन मूल सूत्रों से फायदा उठाया गया है उनमें संयुक्त राष्ट्रमण्डल की सरकारी रिपोर्टें, अमरीकी सरकार के प्रकाशन और उस देश में प्रकाशित अन्य प्रामाणिक पुस्तकें इत्यादि शामिल हैं। इसके साथ ही कम्यूनिस्ट देशों के अनगणित प्रकाशनों से भी कुछ तथ्य उद्धृत किए गए हैं।

पहला अध्याय

कम्यूनिज़्म की रूपरेखा

१. कम्यूनिज़्म क्या है ?

आधुनिक कम्यूनिज़्म की नींव मार्क्स तथा एंजल्ज़ ने रखी है। उन्होंने इसे वैज्ञानिक समाजवाद का नाम दिया। साधारण शब्दों में यह सिस्टम इस बात का द्योतक है कि उत्पादन तथा विभाजन के सब साधनों पर जन साधारण (अर्थात् राज्य-स्टेट) का सामूहिक आधिपत्य हो। (परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि निजी प्रयोग की वस्तुएं भी इनमें शामिल हों)। सैद्धान्तिक रूप में कम्यूनिज़्म का आधार नीचे लिखे नियमों पर है :

१. सारी जनता मिलकर सार्वजनिक कल्याण के लिए काम करे और कुल उत्पादन से उन्हें अपने परिश्रम का फल मिले। वितरण का नियम यह हो। "हर एक से उसकी योग्यता अनुसार काम, हर एक को उसकी आवश्यकताओं के अनुसार उजरत।"

२. वर्गहीन समाज में हर किस्म के काम को, चाहे वह बौद्धिक हो या शारीरिक, समान मान्यता दी जाए। वर्गभेद मिटते ही स्टेट के अस्तित्व का अन्त हो जाएगा अर्थात् केन्द्रीय सत्ता अनावश्यक हो जाएगी।

कम्यूनिज़्म इस रूप में वस्तुतः कहीं भी मौजूद नहीं है और न ही भविष्य में इस मंजिल को पा लेने की आशा की जा सकती है।

इस युग के कम्यूनिज़्म में उत्पादन की सुविधाएँ, साधन तथा सामग्री स्टेट या इससे सम्बन्धित किसी संस्थापन—जैसे कारखाने अथवा सामूहिक फ़ार्म—के हाथ में होती हैं। सोवियत यूनियन में ज़मीन भी स्टेट के अधिकार में है। अधिकार को इतना केन्द्रित कर दिया गया है कि सोवियत यूनियन एकाधिकारी राज्य बन गया है। तमाम मानव तथा भौतिक साधनों पर एक जटिल सरकारी प्रशासन ढांचे द्वारा कम्यूनिस्ट पार्टी और उसके आन्तरिक नेतृत्व का अधिकार सुदृढ़ रूप में बना रहता है। काम तथा सेवाओं के आधार पर नए वर्गीय भेद

पैदा होते हैं। इस वर्गीकरण में अधिकारी वर्ग से सामीप्य तथा दूरी का बहुत बड़ा हाथ रहता है।

रूस के अतिरिक्त अन्य कम्यूनिस्ट देशों में (विशेपतया पूर्वी यूरोप, उत्तरी वियेतनाम और उत्तरी कोरिया के तथा कथित गणराज्यों में कम्यूनिस्ट आर्थिक प्रणाली बहुत कम प्रगति कर पाई है। उदाहरण के लिए, इन देशों में अभी तक निजी सम्पत्ति तथा व्यवसाय ग्रहण करने की स्वतंत्रता है, यद्यपि प्रतिवंध कठोर हैं, और सरकारी नियन्त्रण कड़ा है। कम्यूनिस्ट चीन में प्रचलित कम्यूनिज़्म की रूपरेखा भिन्न है। (प्रश्न नम्बर दस देखिए)

पिछले दिनों रूस से वाहर के कुछ कम्यूनिस्ट नेताओं ने मत प्रकट किया है कि सोशलिज्म (कम्यूनिज़्म) तक पहुँचने के लिए अलग-अलग राहें हो सकती हैं। परन्तु यह "राष्ट्रवादी" कम्यूनिस्टों का मतभेद कम्यूनिज़्म के वास्तविक अभिप्राय से नहीं, केवल उस तक पहुँचने के तरीकों से है।

७. आधुनिक कम्यूनिज्म के स्रोत क्या हैं ?

सांझी मिल्कियत का नियम कम्यूनिस्टों की कोई नई उपज नहीं है। हज़ारों वर्ष पूर्व इस नियम को मानने वाले तथा इसका पालन करने वाले लोग मौजूद थे। कुछ असभ्य कवीलों में अब भी ज़मीन सांझी मिल्कियत समझी जाती है।

मार्क्स तथा एंजल्ज़ ने उन्नीसवीं शताब्दी के पूंजीवाद का अध्ययन करके अपना दृष्टिकोण पेश किया। उन्नीसवीं शताब्दी के अर्ध तक पूंजीवाद में कुछ विशेपताएं ऐसी थीं जिनसे मार्क्स के अन्तरवर्गीय संघर्ष के सिद्धान्त की पुष्टि हुई।

सबसे पहले मार्क्स ने पूंजीवाद के "वैज्ञानिक" विश्लेषण तथा उसके "अंत-विरोध" पर ज़ोर दिया। उनका मत था कि इन "अन्तर्विरोधों" के कारण श्रमजीवी वर्ग और वुर्जुआ (उत्पादन के साधनों के मालिक) वर्ग के बीच संघर्ष वढ़ता जाएगा। मार्क्स ने यह भी कहा कि इस संघर्ष के फलस्वरूप 'मज़दूर या सर्वहारा क्रान्ति' हो जाएगी जो एक नई समाजी व्यवस्था—कम्यूनिज़्म को जन्म देगी।

१८४८ में मार्क्स तथा उनके सहयोगी एंजल्ज़ ने "कम्यूनिस्ट मैनीफेस्टो" प्रकाशित किया। इसमें सोशलिज़्म के मूल सिद्धान्त लिखित हैं जिन्हें बाद में रूस के क्रान्तिकारी नेताओं—लेनिन तथा स्टालिन—ने कम्यूनिज़्म का रूप दिया। १९१८ में रूसी वोलशेविक पार्टी ने निकोलाई-लेनिन के नेतृत्व में

अपना नाम बदल कर "अखिल रूस कम्यूनिस्ट पार्टी" रख लिया। बाद में यह सोवियत यूनियन की कम्यूनिस्ट पार्टी (सी. पी. एस. यू.) कहलाने लगी।

३. कम्यूनिज़्म की समाजी व्यवस्था में व्यक्ति का क्या स्थान है ?

कम्यूनिस्ट समाज में व्यक्ति पर अनगणित प्रतिबन्ध लगे होते हैं। उसे अपने व्यवसाय तथा पारिश्रमिक के विषय में कुछ कहने का अधिकार नहीं है। काम के हालात तथा शर्तों के सम्बन्ध में उसकी कोई आवाज़ नहीं। अवकाश का समय उसका अपना नहीं होता। वह अपने बच्चों की परवरिश, अपनी तथा अपनी पत्नी की इच्छानुसार, नहीं कर सकता।

कम्यूनिज़्म के अन्तर्गत साधारण गृहणी घर से बाहर काम करने पर विवश है, ताकि उसका कुटुम्ब जीवित रह सके। सोवियत यूनियन में भारी साधारण काम प्रायः स्त्रियाँ ही करती हैं। सोवियत परिवार इस हद तक तो आज़ाद हैं कि किसी भी धर्म के अनुयायी बनें परन्तु इस स्वतन्त्रता के प्रयोग पर उन्हें काफ़ी परेशानी तथा खतरा हो सकता है।

कम्यूनिस्ट समाज में व्यक्ति को कोई अधिकार, मूल अधिकार के रूप में प्राप्त नहीं है। जो सीमित अधिकार उसे मिले हुए हैं वह सरकार की देन हैं और अपनी इच्छानुसार वह उन्हें किसी समय भी सीमित कर सकती है या उन्हें पुर्णतया खत्म कर सकती है। इसके अतिरिक्त व्यक्ति पर कई प्रकार के राजनीतिक दबाव डाले जाते हैं। पुलिस उसकी निगरानी करती रहती है। वह राज्य के अधिकारारूढ़ अधिकारवादी एजन्सियों की दया का पात्र बन कर ही रह सकता है। रूस में पुलिस का नियन्त्रण कुछ कम कर दिया गया है परन्तु चीन में इसे और भी कठोर बना दिया गया है।

व्यक्ति की आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं की ओर कम्यूनिज़्म बहुत कम ध्यान देता है, परन्तु यदि मज़दूरों की उत्पादन क्षमता में वृद्धि करनी हो तो सरकार तुरन्त ही कदम उठाती है। ऐसी स्थिति में कभी-कभी यह भी आवश्यक हो जाता है कि काम करने वाले लोगों को कुछ सुविधाएँ दी जाएँ ताकि पैदावार में वृद्धि हो और सरकार की आवश्यकताएँ पूरी हों।

राज्य, कम्यूनिस्ट पार्टी का बाहरी चोला है। यही सोवियत समाज तथा अन्य कम्यूनिस्ट देशों की राह है, मंजिल है। अन्य कम्यूनिस्ट देशों में विभिन्न संस्थान सोवियत सिस्टम के ही प्रतिरूप हैं।

किसी कम्यूनिस्ट स्टेट (जैसे युगोस्लाविया) में यदि उसका ढांचा कुछ अलग भी है तो भी बुनियादी बातों में रूस से मिलता-जुलता है।

४. क्या कम्यूनिस्ट पार्टी पर सदैव कम्यूनिस्ट लेबल लगा होता है ?

बहुत से कम्यूनिस्ट देशों में कम्यूनिस्ट पार्टी किसी और नाम से काम करती है। कहीं यह "वर्कर्ज़ पार्टी" का स्वरूप धारण करती है तो कहीं "पीपुल सोशलिस्ट पार्टी" का भेष बदलती है और कहीं कोई दूसरा ही नाम ग्रहण कर लेती है।

दूसरा नाम धारण करने के कई अभिप्राय हो सकते हैं। (१) जनता का अधिक सहयोग पाने के लिए कम्यूनिस्ट लेबल के स्थान पर कोई और नाम रखना। (२) जब सांझे मोर्चे बनाने के कार्यक्रम पर चल रही हो तो उसके अधिक से अधिक अनुयायी बनाना। अथवा (३) पार्टी के अवैध हो जाने की स्थिति में कानून से बचने के लिए और नाम रखना।

५. कम्यूनिस्ट कौन हैं और अन्य लोगों से किस प्रकार भिन्न होते हैं ?

कम्यूनिस्टों का कोई भी व्यवसाय हो सकता है। वे विद्यार्थी, अध्यापक, मजदूर संगठन के सदस्य अथवा सरकारी कर्मचारी भी हो सकते हैं। अपने साथियों से इसलिए भिन्न होते हैं कि उनका राजनीतिक दृष्टिकोण मास्को-पेपिंग "पार्टी लाइन" के अनुकूल होता है। मास्को-पेपिंग लाइन का अन्तिम आशय यही है कि स्वतन्त्र देशों का विनाश कर दिया जाए।

यह सम्भव है कि कोई कम्यूनिस्ट अपने व्यवहार तथा आचरण से अपने कम्यूनिस्ट होने की स्पष्ट घोषणा न करे। प्रायः वह छिप कर ही काम करता है या यदि खुल्लम-खुल्ला काम कर रहा है, तो वह यह कहता है कि वह जन-हित में कार्यग्रस्त है, परन्तु इसके साथ ही, अधिकार हासिल करने की मुहिम में कम्यूनिस्टों की सहायता भी करता रहता है। पार्टी के संगठन तथा नीति पर स्थानीय कम्यूनिस्ट कभी खुलकर आलोचना नहीं करता। वह आमतौर पर मास्को-पेपिंग या उनके एजेण्टों की हिदायतों पर अमल करने के लिए हर समय तत्पर रहता है और सुव्यवस्थित सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए प्रयत्नशील रहता है।

यह तो सम्भव है कि पार्टी की आंतरिक तब्दीलियाँ (जैसे उथल-पुथल जो स्टालिन के वैभव को खत्म करने के बाद हुई) मास्को लाइन के प्रति पूर्ण निष्ठा पर प्रभाव डाले, परन्तु मार्क्सवाद, लेनिनवाद के मूल सिद्धांतों का खण्डन

न तो नए नेता करते हैं और न ही वह जो एलान करते हैं। उन्होंने "राष्ट्रवादी कम्यूनिज़्म" का स्वतन्त्र मार्ग अपना रखा है।

फिर भी १९५६ में हंगरी में रूस के सशस्त्र हस्तक्षेप के कारण लौह आवरण से बाहर बहुत-सी कम्यूनिस्ट पार्टियों में मतभेद तथा परित्याग की भावना उत्पन्न हो गई।

६. चीनी! सोवियत गुट से बाहर कम्यूनिस्ट पार्टी का गठन कैसे होता है?

कम्यूनिज़्म को अमली प्रोग्राम के तौर पर पेश करने वाले लोग वे होते हैं जो हालात से संतुष्ट न हों और सरकार का तख्ता उलट कर उसे बदलना चाहें। किसी न किसी समय वह कम्यूनिस्ट प्रचार से या कम्यूनिस्ट पार्टी के मेम्बरों से प्रभावित होते हैं और उनकी सहायता से कम्यूनिस्ट आन्दोलन में और भी खुब जाते हैं। आन्दोलन को प्रारम्भ करने वाले अधिकतर लोग मास्को, पेकिंग या किसी अन्य कम्यूनिस्ट केन्द्र में भेजे जाते हैं ताकि कम्यूनिस्ट सिद्धान्तों तथा क्रान्ति की विधियों में निपुणता प्राप्त कर सकें।

ऐसे आदर्शवादी भी कम्यूनिज़्म के मायाजाल में फंस जाते हैं जो ईमानदारी से किसी बेहतर समाजी व्यवस्था की तलाश में हों। वह कम्यूनिज़्म की वास्तविक वृत्ति से अनुभूत नहीं होते। परन्तु ऐसे कम्यूनिस्ट जो पार्टी अनुशासन का पालन नहीं करते, स्थानीय पार्टी के जन्मदाता नहीं बन सकते।

कभी-कभी पार्टी का गठन मास्को या पेकिंग के एजेन्ट भी करते हैं। उन्हें इसी विशेष उद्देश्य के लिए ही भेजा जाता है। उदाहरण के लिए मध्य अमरीका के देश गोयण्टेमाला में कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना विदेशी कम्यूनिस्टों ने की थी।

पूर्वी यूरोप में भी जिन लोगों ने वहाँ की वैध सरकारों का विध्वंस किया है, उनमें से अधिक वह थे जो काफी समय तक रूस में रह चुके थे; बहुत से तो रूसी नागरिक भी थे।

७. कम्यूनिज़्म तथा सोशलिज़्म में क्या अन्तर है?

आधुनिक सोशलिज़्म किसी हद तक मार्क्स तथा एंजल्ज़ के सिद्धान्तों पर आधारित था। परन्तु धीरे-धीरे यह पुराने नियम छोड़ दिये गए। जुलाई १९५९ में सोशलिस्ट इन्टरनैशनल की एक मीटिंग हैम्बर्ग (जर्मनी) में हुई। इसमें रूढ़िवादी मार्क्सिज़्म से नाता तोड़ने की घोषणा की गई और निर्णय किया गया कि कम्यूनिस्ट पार्टियों के साथ मिलकर काम न किया जाए। सोशलिस्टों से

राजनीतिक गठ-सांठ के जितने प्रयत्न मार्क्स ने किए, वह सब असफल रहे । सोशलिस्ट डिक्टेटरशिप के विरुद्ध हैं। सोशलिस्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वे वैध तरीके अपनाते हैं। वे स्वतन्त्र चुनाव के समर्थक हैं। एक हद तक निजी व्यवसाय की इजाजत देते हैं, परन्तु वह यह अवश्य चाहते हैं कि देश के प्राकृतिक तथा मूल साधन राज्य के अधिपत्य में हों। लोकसेवा संस्थानों तथा उत्पादन साधनों पर राज्य का ही नियन्त्रण रहे।

कम्यूनिस्ट जहां कहीं अधिकारारूढ़ हैं वहां केवल एक ही (अर्थात उनकी अपनी पार्टी) संस्था को जीवित रहने की इजाज़त है, या उन पार्टियों को जीवित रहने दिया जाता है जो पूर्ण रूप से उनके नियन्त्रण में रहें। चुनाव में उम्मीदवार खड़े करने का अधिकार भी ऐसी पार्टियों को ही दिया गया है। चुनाव के लिए उम्मीदवारों की एक सूची प्रकाशित कर दी जाती है। इन सबको कम्यूनिस्ट पार्टी स्वयं ही चुनती है। यदि उसे किसी अन्य पार्टी ने चुना हो तो कम्यूनिस्ट पार्टी उसका समर्थन करती है। कम्यूनिस्ट बल पूर्वक अधिकारारूढ़ रहने में विश्वास रखते हैं। सोशलिस्टों का दृष्टिकोण इस विषय में उनसे भिन्न है।

८. कम्यूनिज़्म तथा गणतन्त्रवाद में विशेष मतभेद क्या हैं ?

कम्यूनिज़्म में सरकार व्यक्ति को केवल राज्य के लिए काम करने वाला एक श्रमिक समझती है। उसकी हैसियत सरकारी मशीन के पुर्ज़े से अधिक नहीं होती। सच्चे गणतन्त्र में स्टेट अपने नागरिकों की भलाई के लिए प्रयत्नशील रहती है। उसके अन्तर्गत शासन मशीनरी निश्चित अवधि के पश्चात स्वतन्त्र चुनाव के ज़रिए बदलती रहती है। परन्तु कम्यूनिस्ट स्टेट में सरकार अपने आपको स्थायी रूप से सत्तारूढ़ रखने के लिए तदबीरें करती रहती है। कभी-कभी किसी नेता की मृत्यु के कारण या अधिकार के संग्राम स्वरूप अधिकारी बदल जाते हैं।

सोवियत संविधान अपने नागरिकों के अधिकार तथा कर्त्तव्य निर्धारित तो करता है, परन्तु उनका प्रयोग सरकार की इच्छानुसार सीमित किया जा सकता है या बिल्कुल खत्म किया जा सकता है। गणतन्त्रीय सरकार, इब्राहिम लिंकन के शब्दों में "ऐसी सरकार है जो जनता की हो, जनता के ज़रिए हो तथा जनता के लिए हो।"

कम्यूनिस्टों का विश्वास है कि मार्क्स और एंजल्ज़ की हिदायतों पर अमल करते हुए यदि मज़दूर वर्ग या सर्वहारा को सत्तारूढ़ करना है तो सब गैर-

कम्यूनिस्ट सरकारों को खत्म करना पड़ेगा। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए, कम्यूनिस्टों की नज़र में सब साधन उचित हैं। लेनिन ने लिखा था, "यह अति आवश्यक है कि प्रत्येक कम्यूनिस्ट पार्टी अन्य राजनीतिक संस्थाओं की भांति साधारण संस्था नहीं होती। बल्कि वह मौजूदा सरकार के विरुद्ध संगठित षड़यन्त्र होती है।"

९. क्या आधुनिक कम्यूनिज्म ने अपने उद्देश्य बदल दिए हैं ?

फरवरी, १९५६ में सोवित यूनियन की कम्यूनिस्ट पार्टी (सी० पी० एस० यू०) की बीसवीं कांग्रेस हुई। इसमें निर्णय किया गया कि कम्यूनिस्ट अपनी नीतियों में समयानुसार परिवर्तन करें परन्तु उनका अन्तिम उद्देश्य वही रहे जो पहले से निर्धारित है। पार्टी नेता निकिता ख्रुश्चेव ने नए सी० पी० एस० यू० की "कार्य प्रणाली" की व्याख्या की। इसके अन्तर्गत "पूंजीवादी" देशों के श्रमिकों की बड़ी संख्या स्वयं ही कम्यूनिज़्म को स्वीकार कर लेगी। इसलिए हिंसात्मक कार्यविधियों और गृह संग्राम को प्रचण्ड करना आवश्यक नहीं है।

ख्रुश्चेव ने एलान किया कि "सोशलिज़्म (कम्यूनिज़्म) की मंजिल सुस्थापित संसदीय बहुसंख्या द्वारा भी हासिल की जा सकती है, जिसके समर्थन तथा सहायता के लिए सर्वहारा की महान क्रान्तिकारी संस्था मौजूद हो।"

इस प्रकार कुछ समय के लिए हिंसा पर भरोसा रखने की बजाए इस बात पर बल दिया गया कि कम्यूनिस्ट प्रत्येक स्थान पर सांझे राजनीतिक सार्वजनिक मोर्चों का समर्थन करें।

जून १९६० में प्रधान आइज़न हावर के प्रस्तावित दौरे से पूर्व टोकियो में जापानी कम्यूनिस्टों तथा बामपक्षी पार्टियों ने बड़े पैमाने पर दंगे कराए। इससे कम्यूनिज़्म के इस मूल सिद्धान्त की अभिव्यक्ति हुई कि बातें शान्ति की करो परन्तु लोगों को हिंसात्मक कार्यवाइयों के लिए उत्तेजित करते रहो।

कम्यूनिस्ट सरकारों ने संसार भर में राजनीतिक गांठ-सांठ करने के लिए अपने सदस्य छोड़ रखे हैं और षड्यंत्रकारियों तथा जासूसों की टोलियां नियुक्त कर रखी हैं।

१३ जून, १९६० को अमरीका के स्टेट विभाग ने एक रिपोर्ट प्रकाशित की जिसमें कहा गया था कि "एक विश्वसनीय अनुमान के अनुसार कम्यूनिस्ट गुट तथा स्वतंत्र संसार में चीनी सोवियत गुट के देशों के जासूसी तथा सुरक्षा के २७ संस्थानों में लगभग ३ लाख निपुण अधिकारी काम कर रहे हैं।

स्टेट विभाग ने अपनी रिपोर्ट में यह भी जिक्र किया कि पिछले कुछ वर्षों में स्वतंत्र संसार के ११ देशों में १३० सोवियत जासूस पकड़े गए हैं। इनमें से १३ अमरीका में पकड़े गए। रिपोर्ट में दर्ज है कि "जासूसी तथा अवैध कार्य-विधियों के कारण ४७ सोवियत कर्मचारी स्वतंत्र संसार तथा संयुक्त राष्ट्रमंडल से बाहर निकाले जा चुके हैं।"

१०. क्या कम्यूनिस्ट चीन में कम्यूनिज़्म का कोई विभिन्न रूप है ?

कम्यूनिस्ट चीन में कम्यूनिज़्म का विकास चीनी-सोवियत गुट के अन्य देशों से कुछ विभिन्न ही रहा है। चीन ने लेनिन के इस फारमूले पर अमल नहीं किया कि "क्रांतिकारी नेतृत्व" शहरी सर्वहारा को सौंपा जाए। इसने "सोशलिज़्म" (कम्यूनिज़्म) के निर्माण के लिए किसान जनता को बुनियाद बनाया।

पेपिंग सरकार ने भूमि सुधार दो स्टेजों में करने के बाद १९५८ में तीसरा और बहुत ही कठोर प्रोग्राम अपनाया। यह कम्यून सिस्टम था। पहली स्टेज में जमींदारों से भूमि छीन कर छोटे-छोटे क्षेत्रों के रूप में भूमिहीन किसानों तथा मुज़ारों में तक़सीम कर दी। दूसरी स्टेज में छोटे-छोटे टुकड़ों को एकत्रित करके "सामूहिक फार्म" या मज़दूरों के कोआपरेटिव बना दिए गये। यह सब सोवियत नमूने पर बनाए गये थे। इस प्रोग्राम के अन्तंगत सामूहिक खेतों की मिल्कियत में किसानों का भी हिस्सा था। इन्हें खेती बाड़ी के औज़ार और निजी ज़रूरत की चीज़ें रखने की आज्ञा थी। साधारण गांव की चिर प्रचलित व्यवस्था में कोई मूल परिवर्तन भी नहीं किया गया।

१९५८ में पेपिंग सरकार ने एक नये दौर का प्रारम्भ किया। एलान हुआ कि "उन्नति की ओर लम्बी छलांग" के लिए आन्दोलन आरम्भ किया जायेगा और तथाकथित कम्यून स्थापित किए जाएंगे। चुनाचे भूमि की व्यक्तिगत मिल्कियत को खत्म कर दिया गया। गांव के गांव थोड़े ही समय में उठा दिए गये और उनके स्थान पर बैरिक किस्म की इमारतें बना दी गईं जिनमें सैकड़ों परिवार एक ही स्थान पर रहने लगे। निजी आवश्यकता की वस्तुएं जनता की मिल्कियत घोषित कर दी गईं भूमि के टुकड़ों तथा आदमियों को इकट्ठा करके कम्यून बनाए गए। अब इन पर कम्यून के अधिकारियों की कड़ी निगरानी रहती है, जिन्हें चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी नियंत्रित करती है। (चौथा तथा दसवां अध्याय देखिए)।

मास्को के सोवियत नेताओं ने कम्यून सिस्टम को अपनाने के लिए कुछ अधिक जोश नहीं दिखाया है, ताहम वह पेपिंग के इस अधिकार को मानते हैं कि वह "सोशलिज़्म" तक पहुँचने के लिए स्वयं ही अपनी राह निश्चित करे।

दूसरा अध्याय

कम्यूनिस्ट शासन-प्रणाली

१. सोवियत यूनियन में कितने आदमी कम्यूनिस्ट हैं ?

सोवियत यूनियन की इक्कीस करोड़ की आबादी में अस्सी लाख से भी कम (लगभग चार प्रतिशत) कम्यूनिस्ट पार्टी (सी० पी० एस० यू) के सदस्य हैं। चौदह और छब्वीस वर्ष के बीच की आयु के कोई एक करोड़ अस्सी लाख युवक ऐसे हैं जो युवक कम्यूनिस्ट लीग (कोमसोमोल) के सदस्य हैं। यह संस्था सोवियत युवकों को कम्यूनिज़्म की सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक प्रशिक्षा देती है। शेष करोड़ों सोवियत नागरिक कम्यूनिज़्म को इसलिए स्वीकार करने पर विवश हैं क्योंकि किसी और सिस्टम का उन्हें पता ही नहीं और उन्हें सिखाया गया है कि कम्यूनिज़्म के मूल सिद्धान्त खोज तथा परख से ऊपर हैं।

कम्यूनिस्ट पार्टी और कोमसोमोल के सदस्यों में से बहुत से इन संस्थाओं में इसलिए शामिल होते हैं कि ऊंची पदवियाँ प्राप्त कर सकें, या राजनीतिक मैदान में अपने भविष्य को उज्ज्वल बना सकें। नवस्थापित कम्यूनिस्ट देशों में तो अवसरवादी लोग इतनी बड़ी संख्या में शामिल हुए कि वहां की पार्टी को "संशोधन" की मुहिम चला कर अपने सदस्यों की संख्या घटानी पड़ी। पिट्ठू कम्यूनिस्ट देशों में जनता की अत्यधिक बहुसंख्या गैर कम्यूनिस्ट है।

२. क्या सोवियत रूस में कम्यूनिस्टों को सोशलिज़्म इत्यादि के विषय पर राजनीतिक विचार प्रगट करने की अनुमति है ?

रूस का दण्ड विधान कम्यूनिज़्म के अतिरिक्त किसी और राजनीतिक सिद्धान्त के प्रचार को जुर्म मानता है। इस दण्ड विधान के अन्तर्गत इस प्रकार का आरोप लगने पर "क्रान्ति विरोधी अथवा राज्य विरोधी" कार्यवाहियों के आधार पर मुकद्मा चलाया जा चुका है। और दण्ड भी दिए गए हैं। १९३७-३८ रक्तयुक्त "सफाई के मुकदमों" के शिकार और बाद के कुछ दूसरे लोग इसी सूचि में शामिल थे।

मास्को के वर्तमान नेताओं ने सफाई के मुकदमों की निन्दा की है और उन्हें स्टालिन का 'कारनामा' ठहराया है। १९३० के दशक में जिन राजनीतिक कैदियों को दण्ड दिए गए थे उन्हें अब मुक्त कर दिया गया है। कुछ कैदियों के लिए इतनी सज़ा भुगतने के पश्चात् "पुनस्थापिन तथा पुनर्वास" की तदबीरें की गई हैं। परन्तु वर्तमान अधिकारियों ने भी यह प्रत्यक्ष रूप में जता दिया है कि रूस में केवल कम्यूनिज़म ही का प्रचार किया जा सकता है और किसी सिद्धान्त को सहन नहीं किया जाएगा। पिट्ठू देशों में भी किसी हद तक निन्दित राजनीतिक नेताओं का "पुनर्वास तथा पुनर्स्थापन" किया गया है।

३. क्या यह ठीक है कि कम्यूनिस्ट शासन में मज़दूरों का राज होता है ?

नहीं। रूस में जनता के असली शासक मज़दूर नहीं, सोवियत यूनियन की कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के सदस्य होते हैं। अल्प सख्या में होते हुए भी उनके अधिकार असीमित होते हैं। यही ग्रुप नीति का निर्णय करता है, फैसले तथा हिदायतें देता है। यही स्वयं कम्यूनिस्ट पार्टी का नेतृत्व करता है। इसके निर्णय ही पार्टी के निर्णय होते हैं। पार्टी का प्रोग्राम विधान सभाओं और प्रशासकीय नौकरशाही तक पहुँचाया जाता है जो प्रत्येक सरकारी स्तर पर उसे कार्यान्वित करती हैं।

स्टालिन ने १९२६ में कहा था "सर्वहारा (श्रमिक) वर्ग की डिक्टेटरशिप अपने आप नहीं चलती, इसे पार्टी की ताकतें इसके (पार्टी के) निर्देशन में चलाती हैं।" उन्होंने यह भी कहा "कोई महत्त्वपूर्ण राजनीतिक तथा इन्तज़ामी समस्या ऐसी नहीं है जिसे स्थानीय सोवियत या कोई और अवामी संस्थापन पार्टी के निर्देश के बिना हल कर सकें।" सोवियत यूनियन की कम्यूनिस्ट पार्टी इस नियम पर बहुत सख्ती से अमल करती है।

अन्य कम्यूनिस्ट देशों में भी कम्यूनिस्ट पार्टियों का काम करने का तरीका यही है। परन्तु पिट्ठू देशों में एक बात और बढ़ जाती है कि देशी पार्टियों का नेतृत्व भी सी० पी० एस० यू० करती है।

तमाम कम्यूनिस्ट देशों में काम का सारा बोझ श्रमिक वर्ग के कंधों पर पड़ता है। राज्य की ओर से निश्चित काम उन्हें कम्यूनिस्ट पार्टी की नौकरशाही की निगरानी में तथा उसके निर्देशानुसार पूरा करना पड़ता है।

४. क्या यह ठीक है कि कम्यूनिस्ट वर्ग हीन या एक वर्गीय समाज स्थापित करने में सफल हो गए हैं ?

प्रारम्भ में कम्यूनिस्टों ने कल्पना की थी कि "सर्वहारा क्रान्ति" के पश्चात् सब वर्ग खत्म हो जाएंगे और वर्गहीन समाज बन जाएगा। परन्तु वास्तविक रूप में तमाम कम्यूनिस्ट देशों में, चाहे उनके संविधान में कुछ भी लिखा हो, बहुत सख्त वर्गीय भेद मौजूद हैं। ये नए भेद कभी काम तथा सेवाओं की किस्म पर आधारित होते हैं और कभी किसी व्यक्ति की सैनिक व्यवस्था या नौकरशाही में पदवी से उत्पन्न होते हैं।

सोवियत समाजी व्यवस्था में उच्च कम्यूनिस्ट अधिकारी, शासक, उच्च सैनिक अफसर इत्यादि सबसे ऊंचे स्तर पर हैं। यह ग्रुप नौकर शाही तथा सैनिक व्यवस्था में मध्यम स्तर के लोगों से बिल्कुल भिन्न होता है। फैक्ट्री मैनेजर, सामूहिक फार्मों के अध्यक्ष, व्यवसायी जैसे वकील, डाक्टर, प्रोफैसर, वैज्ञानिक, प्रमुख कलाकार, सरकारी व्यापारिक-संस्थापनों के डायरेक्टर, सबके सब साधारण मज़दूरों तथा किसानों से बहुत ऊंचा समाजी रुतबा पाते हैं।

आमदनी, शिक्षा तथा अन्य सुविधाओं में कमी-बेशी से इस वर्गीय भेद का पता चलता है। सोवियत आबादी का केवल दस प्रतिशत हिस्सा ऐसा है जिसे विशेष सुविधाएं प्राप्त हैं।

५. कम्यूनिस्ट देशों में शासन विधि क्या है ?

कम्यूनिस्ट पार्टी सब अधिकार अपने हाथ में रखती है। वही सरकार की नीतियां निर्धारित करती है, वही इन पर अमल कराती है। पार्टी पर केन्द्रीय समिति का नियंत्रण होता है। परन्तु वास्तविक रूप कुछ भी हो, तमाम कम्यूनिस्ट देशों के संविधान (जो सोवियत विधान के नमूने पर बनाए गए हैं) एक वैध प्रशासन की रूपरेखा अवश्य पेश करते हैं।

उदाहरण के लिए, १९३६ के सोवियत संविधान में एक सुप्रीम सोवियत या दो विधानसभाएँ बनाई गई हैं। एक सभा में सोवियत जनता के सदस्य बैठते हैं और दूसरी में सोवियत गणतन्त्रों को सदस्यता दी जाती है।

संविधान के अन्तर्गत चुनाव यद्यपि प्रत्यक्ष तथा गुप्त मतदान के आधार पर होते हैं, परन्तु मतदाताओं को उम्मीदवारों का निर्वाचन पार्टी द्वारा दी गई सूची में से ही करना होता है। यदि किसी, मतदाता को मतभेद प्रकट करना हो तो उसे एक विशेष बूथ पर जाकर प्रत्यक्ष रूप में नापसन्दीदा

उम्मीदवार का नाम कटवा सकता है । जाहिर है यह तरीका खतरे से खाली नहीं । इसलिए "गुप्त मतदान" का वास्तविक अस्तित्व कोई नहीं है ।

सुप्रीम सोवियत को अधिक अधिकार नहीं दिये गए हैं, वह तो केवल समर्थन तथा पुष्टि करता का रबर स्टैंप है । इसके अधिवेशन आम तौर पर पांच दिन के लिए होते हैं । आंतरिक अधिकारी वर्ग ने जो बातें पूर्व निश्चित कर रखी हों इन अधिवेशनों में उन पर पुष्टि की मुहर लगवा ली जाती है । मत-भेद प्रकट करने की कोई गुंजाइश नहीं होती । किसी प्रकार का विरोध सहन नहीं किया जाता हालांकि मेम्बरों को बहस करने का अधिकार दिया गया है ।

सुप्रीम सोवियत बयालीस मेम्बर चुनती है जो प्रीज़िडयम कहलाते हैं, जिन दिनों सुप्रीम सोवियत के अधिवेशन नहीं होते उन दिनों प्रीज़िडयम ही को अधिकार होता है कि आदेश जारी करे, कानूनों की व्याख्या करे, सुप्रीम सोवियत का अधिवेशन बुलाए, या उसे तोड़ दे, कर्मचारी नियुक्त करे या उन्हें बरखास्त कर दे, प्रीज़िडयम का अध्यक्ष नाम को रूस का राष्ट्रपति होता है परन्तु उसकी हैसीयत रूसी प्रधान मन्त्री तथा कम्यूनिस्ट पार्टी के मन्त्री से कहीं कम होती है ।

रूस में मन्त्री मण्डल उच्चतम विधायक तथा प्रशासकीय संस्था है । इसका आदेश कानून का दर्जा रखता है, खु्श्चेव मन्त्रीमण्डल के अध्यक्ष हैं ।

१९४० तक रूस में १३ यूनियन गणराज्य शामिल थे । तीन बाल्टिक गणतन्त्र लातविया लिथुआनिया तथा एस्ट्रोनिया जो पहले स्वतन्त्र देश थे, इसी वर्ष में बलपूर्वक रूस में शामिल कर लिए गए । यूनियन गणतन्त्र का प्रशासन ढांचा सोवियत यूनियन से मिलता-जुलता है परन्तु यह गणतंत्र हर मामले में सोवियत यूनियन के अधीन होते हैं हालांकि दिखावे के लिए उन्हें अब पहले से अधिक आंतरिक स्वाधीनता दे दी गई है ।

सुप्रीम सोवियत के जुलाई, १९५६ के अधिवेशन में कमेलो फिनिश सोवियत सोशलिस्ट गणतंत्र ने अनुरोध किया था कि उसका दर्जा घटा कर उसे रूसी गणतंत्र के अन्दर स्वायत्त गणराज्य का दर्जा दे दिया जाये । इससे यूनियन गणतंत्रों की संख्या केवल पन्द्रह रह गई ।

१९४४ में सोवियत संविधान में जो संशोधन किए गए, उनके अनुसार "प्रत्येक यूनियन गणतंत्र को अधिकार है कि वह विदेशी सरकारों से प्रत्यक्ष रूप में सम्बन्ध स्थापित करे, सन्धियां करे, दूत भेजे और बुलाए" और यह भी कि "प्रत्येक यूनियन अपनी अलग सेना रख सकती हैं ।" परन्तु यह संशो-

धन केवल अर्थहीन शब्दों का संग्रह था, इसका यह लाभ अवश्य हुआ कि युक्रानिया तथा बाइलो रूस की सरकारें संयुक्त राष्ट्र मण्डल की सदस्य बन गईं।

सुप्रीम सोवियत, प्रीज़िडयम और मन्त्री मण्डल की ओर से दिए गए आदेश यूनियन गणतंत्रों को पहुँचा दिए जाते हैं। फिर इन पर "ओबलास्ट" (प्रादेशिक) से लेकर "रईयो" (ज़िल) स्तर के प्रशासन के ज़रिए अमल कराया जाता है।

६. कम्यूनिज्म में सरकारी कंट्रोल कैसे लागू किया जाता है ?

सोवियत यूनियन के सरकारी कर्मचारियों तथा अन्य नागरिकों पर कंट्रोल रखने वाली सबसे बड़ी ताकत स्वयं कम्यूनिस्ट पार्टी है। इसकी प्रमुखता का प्रभुत्व संविधान का परिच्छेद १२६ है जिसमें लिखा है : "श्रमिक वर्ग के प्रतिनिधियों तथा श्रमिकों में जो लोग सबसे क्रियाशील तथा राजनीतिक तौर पर जागरूक हैं वे सब सोवियत कम्यूनिस्ट पार्टी में एकत्रित हो गए हैं। पार्टी श्रमिक वर्ग का अग्र दल है। सोशलिस्ट पद्धति को मजबूत बनाने में, उसे बढ़ाने और फैलाने में, यह जनता का पथ प्रदर्शन करती है, श्रमिक जनता की सारी सरकार और गैरसरकारी संस्थाओं का यह प्रतिनिधि दल है।"

यद्यपि संविधान में लिखा है कि कम्यूनिस्ट पार्टी श्रमिक जनता की तमाम संस्थाओं का अग्रदल है तो भी कुछ समय पहले तक यह हालत नहीं बतायी थी। उदाहरण के लिए १६२० में पार्टी के सदस्यों की नगरों में बहुत संख्या थी परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में कहीं-कहीं पार्टी सदस्य थे। अलबत्ता अब पार्टी के प्रतिनिधि प्रत्येक स्तर पर मौजूद हैं। कोई कारखाना, कोई सामूहिक फार्म इन से खाली नहीं है। इन्हीं पार्टी मेम्बरों को मिला कर वह संस्था बनती है जो तमाम योजनाओं तथा नीतियों पर अमल की प्रत्यक्ष निगरानी करती है।

सी० पी० एस० यू० की केन्द्रीय समिति में एक और छोटा-सा ग्रुप होता है। रूस में उसे प्रीज़िडयम और कुछ अन्य देशों में पोलित-ब्यूरो कहते हैं। साधारण स्थिति में प्रीज़िडयम, केन्द्रीय समिति या पूरी पार्टी की ओर से निर्णय करता है। कभी-कभी इसके निर्णय केन्द्रीय समिति के पूरे अधिवेशन ने रद्द भी किए हैं। केन्द्रीय समिति के सौ से अधिक मेम्बर हैं।

केन्द्रीय समिति ने अपना प्रभुत्व आप ही स्थायी बना रखा है परन्तु पार्टी के अंतर्द्वन्द्व और अन्य कारणों से इसके मेम्बर बदलते रहते हैं। परन्तु केन्द्रीय

समिति कायम रखती है।

कम्यूनिज़्म के अधीन कोई निश्चित गणतंत्रीय कार्य विधि तो होती नहीं, इसलिए पार्टी के अन्दर अधिकार के लिए युद्ध जारी रहता है। इस युद्ध में जो जीतता है, पार्टी का नेतृत्व उसी को प्राप्त होता है। १९३६-३८ में स्टालिन ने "शोधन" के जो निष्करुण अभियान चलाए उनके फलस्वरूप सारी ताकत उनके हाथ में आ गई। स्टालिन की मृत्यु के पश्चात् खुश्चेव ने धीरे-धीरे सी० पी० एस० यू० में अपना अधिकार जमा लिया। १९५७ में उन्होंने अपने पार्टी-प्रतिद्वन्द्वियों को "पार्टी-विरोधी समूह" सिद्ध करके उनका पार्टी से बहिष्कार करा दिया और पार्टी पर पूरी तरह कब्जा कर लिया। इस टोली में पार्टी के भूतपूर्व प्रसिद्ध नेता मालेन्कोव मोलोटोव और कागनोविच शामिल थे। इन के अतिरिक्त भूतपूर्व विदेश मन्त्री शेपीलोव और भूतपूर्व प्रधान मन्त्री बुलगानिन भी इसी टोली में थे।

निरीक्षण तथा नियंत्रण की दूसरी महत्वपूर्ण संस्था राष्ट्र सुरक्षा समिति (के० जी० बी०) है। यह कमेटी मन्त्री-मण्डल के प्रति सीधी उत्तरदायी है। इसके कर्त्तव्य हैं; विदेशों में मुखबिरी, सुरागरसानी तथा जासूसी करना और देश के अंदर गुप्त पुलिस का अत्याचारी तहकीकाती प्रशासन बनाए रखना। के० जी० बी० के विशेष महत्व ने इसका दर्जा गृह मन्त्रालय से भी ऊंचा कर दिया और १९६० में यह मन्त्रालय तोड़ दिया गया।

सोवियत समाज की प्रत्येक संस्था पर गुप्त पुलिस निगाह रखती है। शहरी संस्थान हों या कारखाने, यूनियन या गणराज्यों के दफ्तर हों या केन्द्रीय मन्त्रालय, कोई इसकी निगरानी से बाहर नहीं, के० जी० बी० का किसी को पकड़ लेना उसे अपराधी सिद्ध कर देने के तुल्य है। के० जी० बी० ने देश भर में मुखबरों का जाल बिछा रखा है। पुलिस के अत्याचार और मनमानी धर-पकड़ अब इतनी आम नहीं परन्तु यह कार्य-क्रम किसी समय भी बड़े पैमाने पर आरम्भ किया जा सकता है।

निरीक्षण तथा नियंत्रण की कुछ और विधियां भी हैं। वित्त मंत्रालय के द्वारा रूस भर की आर्थिक व्यवस्था को काबू में रखा जाता है। राजकीय नियंत्रण के मंत्रालय के ज़िम्मे सरकारी जायदाद की देख-रेख करना, सरकारी खर्च पर नजर रखना तथा योजनाओं और प्रोग्रामों की पूर्ति का हिसाब रखना है। इसके कर्मचारी राज्य की पूरी शासन व्यवस्था में फैले हुए हैं।

७. कम्यूनिस्ट गुप्त पुलिस का उद्देश्य क्या है और उसकी कार्यविधि क्या है ?

गुप्त पुलिस का प्रथम उद्देश्य यह है कि कम्यूनिस्ट पार्टी की सरकार की रक्षा करे और उसे कायम रखे। १९१८ के बाद ही से गुप्त पुलिस के अधिकार बढ़ते गए। सोवियत प्रशासन के लिए इसका महत्त्व भी बढ़ता गया। इसने प्रत्येक गांव तथा कारखाने में अपना आतंक फैला दिया। सरकार के तमाम दफ्तरों और मंत्रालयों में गुप्त पुलिस के कार्यकर्ता मौजूद हैं। सेना में इसके एजन्ट भरे पड़े हैं जिनका इन्तजाम सेना से पूर्णतया पृथक् है।

के० जी० बी० का उच्च अधिकारी पहले जनरल इवान सेरोव था जिसका बाल्टिक और हंगरी की पुलिस के आतंक तथा अत्याचार से गहरा सम्बन्ध रहा है। १९५८ में इसका स्थान अलक्सान्द्र शेलीपिन ने लिया जो कभी कोमसोमोल का अध्यक्ष रहा था और कम्यूनिस्ट नवयुवकों की तहरीक में उसका भाग महत्त्वपूर्ण था। (नवां अध्याय देखिए)

भूतपूर्व गृहमंत्रालय (एम० वी० डी०) के कर्त्तव्यों में कैदखानों तथा दण्ड देने के अन्य केन्द्रों की व्यवस्था, नागरिक पुलिस विभाग की देखरेख तथा नागरिक सुरक्षा के कुछ भाग शामिल थे। बेगार के कैम्प (तीसरा अध्याय देखिए) बहुत समय तक एम० वी० डी० के अधीन एक उप-विभाग जी. यू. आई. टी० (भूतपूर्व जी० यू० एल० ए० जी०) के सुपुर्द रहे। जबरी बेगार के कुछ विभाग १९५३ में वित्त-मंत्रालयों के अधीन कर दिए गए। १९६० में एम० वी० डी० को तोड़ दिया गया। इसका काम यूनियन गणतन्त्रों को दे दिया गया।

८. गिरफ्तारियों के लिए गुप्त पुलिस कौन-कौन से विशेष तरीके इस्तेमाल करती है ?

गिरफ्तारियों के सिलसिले में ऐसे ढंग अपनाए जाते हैं कि अभियुक्त भयभीत हो जाए। पुलिस प्रायः रात के समय पूछगछ करती है। तहकीकात से पहले ही मान लिया जाता है कि अभियुक्त ने सचमुच ही अपराध किया है। इसलिए तहकीकाती अफसर की यही कोशिश होती है कि कैदी से "अपराध स्वीकार" कराले और उसे विवश करके 'अपराध में साथियों' का पता चलाले।

सोवियत नेताओं की "उदार" नीति के अनुसार सी० पी० एस० यू० ने राज्य पुलिस के अधिकार कुछ कम कर दिए हैं और न्यायिक विधियां भी कुछ नर्म कर दी हैं परन्तु गुप्त पुलिस का ढांचा अभी कायम है। पहले से अब पुलिस

एजन्ट कम नजर आते हैं। परन्तु विदेशी यात्रियों से मिलने-जुलने में रूसियों को अब भी बहुत सावधान रहना पड़ता है। (सातवां अध्याय देखिए)

पिट्ठू देशों में पुलिस के अत्याचार के कई दर्जे हैं। हंगरी में स्थिति बहुत ही बुरी बताई जाती है। कम्यूनिस्ट चीन में पुलिस का नियंत्रण इतना कड़ा है कि रूस में स्तालिन के काल में भी ऐसा न था। देश भर में गैर सरकारी मुखबरों का जाल बिछा हुआ है जो पुलिस को हर प्रकार की सूचना देते हैं। यह जाल प्रत्येक कारखाने और स्कूल में, प्रत्येक कम्यून और नगर में मौजूद है।

९. क्या कम्यूनिस्ट देशों में कम्यूनिस्टों की सरकार अनिश्चित समय तक अधिकारारूढ़ रहती है ?

जब तक अधिकारारूढ़ कम्यूनिस्ट पार्टी का सेना, गुप्त पुलिस तथा यातायात के साधनों पर नियंत्रण रहता है और जनता उसकी आवाज़ के अतिरिक्त कोई दूसरी आवाज़ न सुन सके, उस समय तक यह निर्दयता से विरोधियों को कुचलती रहती है—और उसी समय तक अधिकार इसके हाथ में रहता है।

१०. कम्यूनिस्ट पार्टी का गुप्त पुलिस से क्या सम्बन्ध है ?

सोवियत यूनियन में कम्यूनिस्ट पार्टी की लीडरशिप ने कोशिश की है कि इस डिक्टेटूरशिप में गुप्त पुलिस को किसी समय भी इतना बल शाली नहीं बनने दे कि यह सीधी टक्कर लेने का साहस कर सके।

गुप्त पुलिस (के० जी० बी०) को केन्द्रीय समिति के अधीन रखने के कई तरीके अपनाए गए हैं। गुप्त पुलिस के मेम्बरों का पार्टी का सदस्य होना अनिवार्य है। पार्टी संस्थाओं के मंत्री के० जी० बी० में मौजूद रहते हैं। सी० पी० एस० यू० की केन्द्रीय समिति उन्हें अपने कानों तथा आंखों के तौर पर इस्तेमाल करती है। के० जी० बी० की निगरानी के लिए पार्टी कन्ट्रोल कमेटी के खास ग्रुप नियुक्त किए जाते हैं।

नव युवकों, खिलाड़ियों और कलाकारों के ग्रुप, अथवा सोवियत नागरिक जब विदेश यात्रा करते हैं तो के० जी० बी० के एजेन्ट उनके संग चलते हैं इन पर कड़ी निगरानी रखते हैं, विदेशियों के साथ उन्हें मेल मिलाप बढ़ाने नहीं देते। जैसे जुलाई, अगस्त, १९५९ में वियाना में नवयुवकों का विश्व उत्सव हुआ। सोवियत गुट से आने वाले सब शिष्ट मण्डल अलग रखे गए ताकि गैर कम्यूनिस्ट देशों के प्रतिनिधियों के साथ उनका स्वतन्त्र मेल मिलाप सम्भव न हो।

११. क्या कम्यूनिस्ट देशों में जनता को सरकारी कानूनों के विरुद्ध प्रतिवाद करने का अधिकार है ?

सरकारी कानूनों को लागू करने की विधियों के विरुद्ध तो जनता प्रतिवाद कर सकती है परन्तु मूल आदेशों या नीति निर्णयों के विरुद्ध वह एक भी शब्द नहीं बोल सकती। विरोध प्रकट करने की कुछ राहें खुली हैं। उन्हें "आत्म-आलोचना" का नाम दिया गया है। कम्यूनिस्ट पार्टी इस तरीके को प्रोत्साहित करती है ताकि स्थानीय कर्मचारियों पर इसका दवाव वना रहे।

"आत्म आलोचना" की अनुमति इसलिए भी है कि इससे नागरिकों की शिकायतों और निराशाओं को अभिव्यक्ति की राह मिल जाती है। पार्टी के उच्च नेता आलोचना से बच जाते हैं और निचले स्तर पर पार्टी के निरर्थक अधिकारी ही जनता के प्रकोप का शिकार बनते हैं।

१२. क्या कम्यूनिस्ट देशों में आम, या किसी और किस्म के चुनाव होते हैं ?

कम्यूनिस्ट देशों में स्थानीय प्रादेशिक तथा राष्ट्रीय स्तर पर प्रायः चुनाव होते रहते हैं। मत देना प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। उम्मीदवारों की एक ही सूचि के अधीन लड़े गए चुनाव के सरकारी परिणाम सदैव कम्यूनिस्ट पार्टी की विजय व्यक्त करते हैं। यह विजय ९७ प्रतिशत या इससे भी अधिक वोटों से होती है।

हर चुनाव, चाहे वह ट्रेड यूनियन का हो, या ग्राम चुनाव, कम्यूनिस्ट कोशिश करते हैं कि "सर्व समिति" से हो। इस प्रकार विरोध तथा प्रतिवाद की सब राहें बन्द हो जाती हैं।

कम्यूनिस्ट देशों में चुनाव इसलिए कराए जाते हैं कि लोग यह समझें कि सरकार की सब नीतियों को जनता का समर्थन प्राप्त है। यद्यपि वास्तव में उनका कोई दखल ही नहीं होता।

१३. क्या कम्यूनिस्ट प्रशासन के अधीन देशों में जनता कम्यूनिज्म को पसन्द करती है ?

कम्यूनिस्ट यह प्रचार करते हैं कि कम्यूनिज्म जहां सत्तारूढ़ है, वहाँ जनता इसे बहुत पसंद करती है। सोवियत यूनियन में अब एक ऐसी पीढ़ी पैदा हो चुकी है जिसे किसी अन्य शासन प्रणाली का न अनुभव है और न ज्ञान। उन्हें सिखाया पढ़ाया गया है कि कम्यूनिज्म के अतिरिक्त शासन की अन्य प्रणालियां बुरी तथा घृणा योग्य हैं।

परन्तु कम्यूनिज़म की इससे बढ़ कर निन्दा और क्या हो सकती है कि १९१७ की बोल्शेविक क्रान्ति के उपरान्त करोड़ों व्यक्तियों ने कम्यूनिज़्म के जबड़ों से भाग निकलने के प्रयत्न किए हैं। द्वितीय महायुद्ध के बाद ही से एक करोड़ से ऊपर व्यक्ति सोवियत गुट के देशों से भाग चुके हैं।

१४. क्या यूरोप के कम्यूनिस्टों के अधीन देशों में विद्रोह हुए हैं ?

१९१८ के बाद से रूस में कम्यूनिस्ट प्रशासन के विरुद्ध अनेकों विद्रोह हो चुके हैं। १९५३ में स्तालिन की मृत्यु के बाद पिछलग्गू देशों में कम्यूनिज़्म का विरोध इस हद तक बढ़ा कि राष्ट्रीय विद्रोह होने लगे।

१७ जून, १९५३ को बर्लिन के सोवियत क्षेत्र में जनता ने विद्रोह किया। इसके बाद पूर्वी जर्मनी और पूर्वी यूरोप के अन्य देशों में हड़तालें और उपद्रव आम होने लगे।

एक और क्षोभकारी उपद्रव पोज़नान (पोलेण्ड) में २८।३० जून, १९५६ को हुआ। यह उपद्रव बाहरी उत्तेजना के बिना स्वयं ही फूट पड़ा। उपद्रव करने वाले मज़दूरों का नारा था। "रोटी और आज़ादी।" यह उपद्रव शीघ्र ही सशस्त्र विद्रोह में बदल गया। विद्रोही तूफ़ान की-सी तीव्र गति से आगे बढ़े और उन्होंने कम्यूनिस्ट पार्टी के मुख्य कार्यालय, नगरपालिका और केन्द्रीय जेल पर अपना झंडा फहरा दिया। परन्तु सोवियत कंट्रोल के अधीन पोल सेना के दो सशस्त्र डिवीजनों ने विद्रोह को ध्वंस कर दिया। सेना और पुलिस ने बहुत सी गिरफ्तारियां कीं। जिस पर भी विद्रोही होने का संदेह हुआ, उसे तुरन्त ही पकड़ लिया गया।

बुडापेस्ट, हंगरी का सशस्त्र विद्रोह २३ अक्टूबर, १९५६ को आरम्भ हुआ। प्रचण्डता तथा मरने वालों की संख्या की दृष्टि से यह पूर्वी बर्लिन तथा पोज़नान के विद्रोहों से बहुत आगे था।

हंगरी के विद्रोह का प्रारम्भ नवयुवकों के प्रदर्शनों से हुआ। इन प्रदर्शनों की प्रचण्डता २२, अक्तूबर, को अपनी चरमसीमा पर पहुँच गई जबकि तीन विश्वविद्यालयों के सहस्रों विद्यार्थियों ने सड़कों तथा बाजारों में यह जोरदार प्रदर्शन किया कि हंगरी की सरकार मास्को की गुलामी को छोड़ दे। पश्चिमी गणतन्त्रों में नागरिकों को जो अधिकार प्राप्त हैं, उन्हें भी दिए जाएँ।

धीरे-धीरे मज़दूर और अन्य नागरिक विद्रोह में शामिल हो गए शहर में सब काम ठप हो गया २४ अक्तूबर तक यह ज्वाला सारे देश में भड़क उठी।

प्रत्येक दिशा से कम्यूनिज़्म के अत्याचार को ख़त्म करने की आवाज़ें आने लगीं। ३१ अक्तूबर को मास्को से एलान हुआ कि रूस अपनी अभिधारी सेना को वापस बुलाने के "प्रस्ताव पर विचार कर रहा है।" परन्तु तीन दिन पश्चात् पूर्व चेतावनी दिए विना ही सोवियत टैंक हंगरी में प्रविष्ट हो गए और हंगरी की जनता के इस विद्रोह को निर्दयता से कुचल दिया।

१५· क्या कम्यूनिस्ट चीन में भी विद्रोह हुए हैं ?

चीन में कम्यूनिस्ट सरकार के विरुद्ध स्थानीय विद्रोह प्रायः होते ही रहे हैं। परन्तु सबसे बड़ा तथा लम्बा विद्रोह १९५० में तिव्बत में शुरू हुआ। पेकिंग सरकार ने तिव्वत के स्वतन्त्र कवाईली इलाकों में, अजनवी चीनियों को बसाना शुरू कर दिया था। इस पर सारे कवीले भड़क उठे और आठ साल तक वह यत्रतत्र चीनियों के विरुद्ध छापा मार लड़ाई लड़ते रहे। मार्च, १९५९ में तिव्वती कवीलों का विद्रोह वहुत जोर पकड़ गया जव तिव्वत के धार्मिक तथा सांसारिक पेशवा दलाईलामा को आदेश मिला कि वह अकेले ही, अपने सेवकों तथा अंग-रक्षकों के विना, कम्यूनिस्ट चीन के फौजी कमाण्डर के सामने पेश हों।

चीनियों के इस अपमानजनक तथा अमंगलसूचक आदेश ने बौद्ध-भिक्षुओं को उत्तेजित कर दिया और उन्होंने चीन की आधिपत्य सेना के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह आरम्भ कर दिया।

१७ मार्च, १९५९ को दलाईलामा अपने कुछ अनुयायियों को साथ लेकर तिव्वत की राजधानी ल्हासा से निकल पड़े और एक मास की कठिन यात्रा के पश्चात् भारत पहुँच गए। इस समय तक विद्रोह सारे तिव्वत में फैल गया था। कई मास के रक्तपात के पश्चात् चीन की सशस्त्र सेना ने इस विद्रोह को ठंडा कर दिया। उन्होंने वौद्ध मठों को खण्डहर बना दिया और तिब्बती जनता पर नृशंस अत्याचार किए।

तीसरा अध्याय

कम्यूनिज़म और मज़दूर

१. क्या यह ठीक है कि कम्यूनिस्ट एक सर्वहारा राज्य बनाने का प्रयास करते हैं ?

कम्यूनिस्टों का दावा है कि उनका असली अभिप्राय वर्गहीन समाज की स्थापना है। १८४८ में मार्क्स और एंजल्ज़ ने कहा था :

"श्रमिक वर्ग की क्रान्ति की पहली मंजिल यह है कि सर्वहारा वर्ग का आधिपत्य स्थापित किया जाए ताकि प्रजातंत्रवाद का संग्राम जीता जा सके" परन्तु स्टालिन ने १९३६ में घोषणा की "अब (रूस) में कोई पूंजीपति वर्ग नहीं है जो श्रमिक वर्ग को लूट सके...। ऐसी स्थिति में क्या हमारा श्रमिक वर्ग सर्वहारा कहला सकता है ? व्यक्त है कि नहीं।"

तो भी कम्यूनिस्ट प्रचारक तथा प्रवक्ता आज भी कम्यूनिस्ट देशों के "सर्वहारा अधिनायक तंत्र" का ज़िक्र करते हैं। वास्तव में ऐसी बातें करते समय उनके मस्तिष्क में कम्यूनिस्ट पार्टी की अधिनायकता होती है।

आज के कम्यूनिस्ट समाज में सुविधाएं (यदि मौजूद भी हैं) "सर्वहारा वर्ग" के लिए नहीं बल्कि उच्च वर्ग के लिए हैं, जिसमें नौकरशाही और कम्यूनिस्ट अधिकारी शामिल हैं जो राज्य की शासन-व्यवस्था करते हैं और सरकार उनके नियंत्रण में होती है। या फिर इसमें उच्च स्तर के विद्वान् और फौजी अफसर आते हैं। वर्गीय विभाजन आज भी उतना ही कड़ा है जितना कि ज़ार के युग में था।

२. कम्यूनिस्ट राज्य में कौन से ग्रुप सबसे अधिक वेतन पाते हैं ?

उच्च सरकारी अधिकारी, बड़े फौजी अफसर, बड़े सरकारी व्यापारिक संस्थाओं के मैनेजर, रंगमंच और अन्य कलाओं में प्रतिष्ठित लोग, बड़े-बड़े वैज्ञानिक, अधिक वेतन पाते हैं और सुखी जीवन व्यतीत करते हैं।

नौकरशाही और शासन करने वाले अन्य अधिकारियों की आय भी अच्छी खासी होती है। अधिमानित उद्योगों में काम करने वाले दक्ष श्रमिक भी अति-स्पर्धात्मक आधार पर अंशत: कार्य करके अच्छा बना पाते हैं।

सोवियत आबादी के बहुत बड़े भाग को अर्थात् साधारण श्रमिकों तथा कृषकों को बहुत कम वेतन मिलता है। कम्यूनिज़्म के अन्तर्गत प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति को बहुत श्रम करना पड़ता है ताकि परिवार की आमदनी गुज़र-बसर के लिए काफी हो सके।

३. क्या कम्यूनिस्ट देशों में जनसाधारण अपना व्यवसाय स्वयं चुन सकते हैं ?

कम्यूनिस्ट देशों में जनता को चुनने का अधिकार ही नहीं है। सोवियत रूस में व्यवसाय का प्रशिक्षण छोटी आयु में ही शुरू हो जाता है। बाद में तो बहुत कम लोग व्यवसाय बदलते होंगे।

छूट केवल उसी समय मिलती है जब राज्यों को स्वयंसेवक की आवश्यकता हो। जैसे कुछ नगरों मे हजारों युवक "स्वयं सेवक" मध्य एशिया के दूर के उजाड़क्षेत्रों में भेजे गये ताकि सरकारी भूमि पर काम कर सकें जिसको हल की नोक पहली बार छू रही थी।

एक नए सोवियत आदेश के अनुसार मालिक को दो सप्ताह का नोटिस देकर कर्मचारी व्यवसाय बदल सकता है, परन्तु यदि वह किसी नए स्थान पर जाता है तो उसकी (ज्येष्ठता) और एकत्रित अवकास खत्म हो जाते हैं। नए व्यवसाय में प्रथम छ: मास तक उसे डाक्टरी सुविधाएं नहीं मिलती। मज़दूर को कुछ पता नहीं होता कि कब उसे बेगार के लिए जबरदस्ती भेज दिया जाएगा। मध्य एशिया और अन्य स्थानों पर लोगों को ज़बरदस्ती भेजा जा चुका है।

४. क्या सोवियत यूनियन में हड़तालें होती हैं ?

मज़दूरों के हड़ताल करने पर कोई कानूनी प्रतिबन्ध नहीं है परन्तु कुछ दूसरे जैसे आर्थिक तोड़फोड़, अनुपस्थिति या क्रान्ति विरोधी कार्यविधियां आदि आरोप लगाकर उन्हें कठोर दण्ड दिए जाते हैं। व्यवहार में हड़तालें निषिद्ध हैं "क्योंकि उत्पादन के सब साधन मज़दूरों के आधिपत्य से हैं, इसलिए वे स्वयं अपने विरुद्ध हड़ताल नहीं कर सकते।"

वैसे यह दलील ठीक नहीं। उत्पादन साधनों पर राज्य का अधिकार होता है। वही यह निर्णय करती है कि किसी प्रकार की हड़ताल और विरोध सहन

नहीं किया जाएगा। इसके बावजूद उत्तरी यूरोप में (विशेष रूप से नवम्बर, १९५६ में हंगरी में) हड़तालें हुई थीं।

५. कम्यूनिज्म किस प्रकार मजदूरों का शत्रु है ?

जब ग़ैर कम्यूनिस्ट देशों में मज़दूर आन्दोलन पर कम्यूनिस्ट कब्ज़ा जमाना चाहते हैं, या मज़दूर यूनियनों पर अधिकार करने का प्रयास करते हैं तो उन्हें इसकी रत्ती भर चिन्ता नहीं होती कि मजदूरों को कुछ आर्थिक सुविधाएं मिलती हैं या नहीं। उनका पहला अभिप्राय तो यह होता है कि मज़दूर संघ इनके लिए राजनीतिक मुहरे बनें। एक बार अधिकार इनके हाथ में आ जाए तो फिर वे यूनियन के नेतृत्व को दबा कर अपनी पार्टी का नियन्त्रण स्थापित करने में लग जाते हैं।

रूस में ट्रेड यूनियनें सरकार का ही एक भाग हैं। उनका मुख्य उद्देश्य यह रहता है कि मज़दूरों में अनुशासन रहे ताकि उत्पादन बढ़ाने का आन्दोलन जारी रहे। सब यूनियनें कम्यूनिस्ट पार्टी की निगरानी में काम करती हैं।

अन्य कम्यूनिस्ट देशों में भी यही हाल है। वेतन तथा काम का समय निश्चित करने में कम्यूनिस्टों की चलाई हुई यूनियनों के सदस्यों की वहां कोई आवाज़ नहीं होती। काम की शर्तें और हालात के सम्बन्ध में वे कुछ नहीं कर सकते। यूनियन के अधिकारियों का निर्वाचन पार्टी के आदेश के अनुसार होता है।

ट्रेड यूनियनों की विश्व फैडरेशन, जो कम्यूनिस्टों के कब्ज़े में है, संसार भर की ट्रेड यूनियनों को अपने काबू में करने के लिए प्रयत्नशील रहती है ताकि उन्हें राजनीतिक स्वार्थों के लिए प्रयोग में ला सके।

६. कम्यूनिज्म के अधीन जब प्रत्येक व्यक्ति काम करने पर विवश है तो पारिवारिक जीवन पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है ?

यों तो सरकारी तौर पर "नए" सोवियत परिवार की एकता पर बड़ा ज़ोर दिया जाता है। परन्तु वास्तव में ऐसा होता नहीं। पारिवारिक सम्बन्धों को खत्म करने के लिए बहुत से तरीके प्रयोग में लाए जाते हैं। माताएं प्रायः काम करती हैं। इनके बच्चे दिन भर सरकारी शिशु-पालनालयों में रहते हैं। बच्चे छोटी आयु से माता-पिता के प्रभाव से वंचित हो जाते हैं। उनके मस्तिष्क में यह बात बिठा दी जाती है कि स्टेट उनकी संरक्षक है। अभिप्राय यह होता है कि अनुशासन को सतर्कता से ग्रहण करने वाले कम्यूनिस्ट पैदा हों।

कम्यूनिज़्म का उद्देश्य यह है कि मज़दूर की मानसिक तथा शारीरिक शक्ति एक विशेष सांचे में ढल जाए। उनका सारा जीवन पार्टी की सेवा में व्यतीत हो। उसकी व्यावसायिक निपुणता पार्टी और स्टेट के लाभ के लिए अर्पित हो (नवां तथा ग्यारहवां अध्याय देखिए)।

७. सोवियत ट्रेड यूनियनें अपने अधिकारों से किस प्रकार वंचित हुईं ?

१९१८ में द्विवर्षीय गृह-युद्ध आरम्भ हुआ था। लेनिन ने युद्ध सम्बन्धी कुछ आदेश जारी किए इनसे सोवियत यूनियन में जन-गठन के नाम पर बेगार का रिवाज प्रचलित हुआ। इन आदेशों के अन्तर्गत हर व्यक्ति के लिए कार्य का आदर्श कोटा निश्चित किया गया। हर पेशे और प्रत्येक उद्योग में कार्य का स्तर निर्धारित किया गया। काम के अनुसार पारिश्रमिक का ब्योरा तैयार किया गया। निर्धारित कार्य से अधिक काम करने वालों के लिए 'बोनस' देने का निश्चय किया गया। "मज़दूरों में अनुशासन" भंग करने वालों को कठोर दण्ड देने की व्यवस्था की गई।

१९२० तक बोलशेविक सरकार ने ट्रेड यूनियनों की स्वतंत्रता को काफी सीमित कर दिया। इसके पश्चात् दस वर्ष के भीतर ही स्टालिन ने रहे-सहे अधिकार भी उनसे छीन लिए। ट्रेड यूनियनों के अधिकारी अब पार्टी की स्वीकृति से ही रखे जाने लगे या पार्टी के सदस्यों को ही ट्रेड यूनियनों का अधिकारी बना दिया गया। कारखानों की कमेटियों में पार्टी के सरगर्म सदस्यों का हस्तक्षेप बहुत बढ़ गया। और राज्य सरकार स्वयं ही ट्रेड यूनियन नीतियाँ निर्धारित करने लगी।

दूसरे महायुद्ध के दौरान में सुस्ती, काम से अनुपस्थिति और इस प्रकार के छोटे-छोटे दोषों के लिए भी दण्ड दिए जाने लगे। युद्ध के पश्चात् इस संबंध में छूट दी जाने लगी। परन्तु अब भी मज़दूरों में सख्त डिस्पिलिन रखा जाता है। १९५९ में तथाकथित कामरेड न्यायालय बनाए गए ताकि छोटे-छोटे अपराध करने वालों पर तुरन्त ही मुकदमे चलाए जा सकें।

८. क्या स्टालिन के युग की अपेक्षा आज सोवियत ट्रेड यूनियनों को अधिक अधिकार प्राप्त हैं ?

कुछ मामलों में सोवियत ट्रेड यूनियनों को पिछले कुछ दशकों की अपेक्षा अधिक अधिकार प्राप्त हैं। परन्तु यह बात पूर्णतया स्पष्ट है कि कम्यूनिस्ट

नौकरशाही प्रबन्धकों को दबाने के लिए इस्तेमाल करती है ताकि राज्य की उत्पादन योजनाएँ पूरी हो सकें। जुलाई, १९५८ के एक सरकारी आदेश के अनुसार स्थानीय कारखानों की यूनियनों को प्रबन्ध सम्बन्धी कामों में अधिक दख़ल देने का अधिकार मिल गया है। एक और आदेश के अनुसार बेजान उत्पादन सम्मेलनों को फिर से जीवित किया गया है।

पहले आदेश के अनुसार कारखाने की कमेटी को प्रबन्ध अधिकारी नियुक्त करने का हक़ दिया गया। जो मैनेजर अपने कर्तव्य-पालन में लापरवाही दिखाए वह उसके विरुद्ध कारवाई की मांग कर सकती है। उसे मज़दूरों की छांटी पर विरोध प्रकट करने का अधिकार है। ओवर टाइम तथा मज़दूरों की भलाई की योजनाओं और प्रतिरक्षा सम्बन्धी कार्यों में उनसे विचार विमर्श किया जाता है।

उत्पादन कार्यवाहियों का अभिप्राय यह है कि सरकारी कारोबारी संस्थान उत्पादन लक्ष्यों को पूरा करें, बल्कि इनसे भी आगे बढ़कर दिखाएँ।

मास्को का दावा है कि इस प्रकार के हुक्मों से औद्योगिक प्रजातंत्रवाद को प्रोत्साहन मिला है। परन्तु इसके बावजूद कारखानों की कमेटियों पर पार्टी का नियंत्रण ढीला नहीं पड़ा। कारखानों की कमेटियों पर पार्टी का पूरा कंट्रोल है। उन्हें अधिक अधिकार देकर उत्पादन सम्बन्धी निर्देशों पर अमल कराना स्टेट के लिए आसान हो जाता है।

९. चालू सप्त वर्षीय योजना में मज़दूरों का क्या कार्य है ?

सप्त वर्षीय योजना के अन्तर्गत (दसवां अध्याय देखिए) श्रम सम्बन्धी नियमों में कहा गया है कि—

१. पांच करोड़ तीन लाख श्रमिकों की वर्तमान संख्या में एक करोड़ पंद्रह लाख श्रमिकों की वृद्धि की जाय।

२. उत्पादनों की लागतों में ११.५ प्रतिशत की कटौती की जाए। इसके लिए स्वचालित मशीनें अधिक संख्या में प्रयोग में लाई जायें और प्रति श्रमिक उत्पादन बढ़ाया जाए। अनुमान था कि प्रत्येक श्रमिक ४५ से ५० प्रतिशत तक अधिक उत्पादन दिखाएगा।

१०. मज़दूरों की उत्पादन योग्यता बढ़ाने के लिए सोवियत स्टेट की योजना क्या है ?

उत्पादन बढ़ाने के एिल सोवियत योजनाओं में स्वचालित मशीनों के प्रयोग पर तो ज़ोर दिया ही जाता है, इनके अंतर्गत प्रति श्रमिक उत्पादन में वृद्धि के

लिए भी प्रयत्न किए जाते हैं।

१९५९ के आरम्भ में खु्रुश्चेव ने इक्कीसवीं सी० पा० एस० यू० कांग्रेस में सप्त वर्षीय योजना की घोषणा की। इसके पश्चात् पार्टी ने "कम्यूनिस्ट मज़दूर ब्रिगेड" स्थापित किए। ये उत्पादन संगठनों के ऐसे मज़दूर ग्रुप थे जो अपने नियुक्त लक्ष्य को पूरा करने और उनसे आगे बढ़ने का प्रण लेते थे। परंतु उस वर्ष के प्रथम छ: महीनों में ही इस बात का पता चल गया कि "मज़दूर ब्रिगेड" का आंदोलन भी नौजवान मजदूरों में इसी प्रकार ही असफल रहा जैसे स्टौखानोवाईट पद्धति (अथवा तीव्र गति आंदोलन) १९३० में रही थी।

जून, १९५९ में खु्रुश्चेव ने एक नए मज़दूर आंदोलन की नींव रखी। इसका आरम्भ इस प्रकार हुआ कि एक कौमसोमोल मजदूर युवति वैलेन्टीन गगानोवा ने स्वेच्छा से अपनी तवदीली एक ऐसे ब्रिगेड में करा ली जो उत्पादन में पिछड़ गया था ताकि मज़दूर यूनिट का उत्पादन बढ़ाने में सहयोग दे।

सोवियत प्रौपेगण्डा साधनों द्वारा गगानोवा के इस कदम को बहुत उछाला गया। इसे "परिश्रम के सम्बन्ध में कम्यूनिस्ट दृष्टिकोण में नई प्रवृत्ति" का नाम दिया गया। १ जुलाई, १९५९ को प्रावदा में समाचार छपा था कि सी० पी० एस० यू० की ओर से पार्टी, ट्रेड यूनियन और कौमसोमोल की सब संस्थाओं को हिदायत दी जा रही है कि "देश-भक्ति के इस आंदोलन में बढ़-चढ़कर भाग लें"। गगानोवा को "सोशलिस्ट मजदूरों की हीरो" की उपाधि दी गई। परन्तु पिछले अनुभवों के आधार पर कहा जा सकता है कि गगानोविज़्म का आंदोलन भी खानोविज़्म की राह पर जाएगा।

११. क्या सोवियत यूनियन में काम करने की सुविधाओं में वृद्धि हुई है ?

१९५३ में स्टालिन की मृत्यु के बाद से बहुत से सोवियत उद्योगों में काम के हालात कुछ सुधरे हैं। परन्तु अभी तक वह पश्चिमी यूरोप और अमरीका के कम से कम स्तर तक भी नहीं पहुँचे हैं।

वहाँ के औद्योगिक केन्द्र जिन विदेशियों ने देखे हैं, उनका कहना है कि वहाँ काम का वातावरण आज भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक और खतरनाक है। दुर्घटनाओं से बचाव का सामान या तो है ही नहीं, या घटिया प्रकार का है। इंग्लैंड के खनिकों के एक मण्डल ने १९५७ में रूस में कोयले की खानों का दौरा किया था। उनकी रिपोर्ट के अनुसार वहाँ रिहाईश का बन्दोबस्त अच्छा नहीं है। खानों के अन्दर कठिन कामों के लिए महिलाओं को भरती

कर लिया जाता है। खानों में दुर्घटना से बचाव का सामान नहीं है। इंग्लैंड के खनिकों ने यह भी बताया कि रूसी खनिक महीने में जितने ज़्यादा दिन कान करते हैं, उसका उदाहरण संसार भर में कहीं नहीं मिलता।

स्मरण रहे कि कोई कम्यूनिस्ट सरकार औद्योगिक दुर्घटनाओं के आंकड़े प्रकाशित नहीं करती जबकि पश्चिमी सरकारें इस प्रकार के आंकड़े पाबन्दी से प्रकाशित करती हैं।

अक्तूबर, १९५९ में सुप्रीम सोवियत ने इन प्रस्तावों पर विचार किया कि कारखानों और दफ्तरों में काम करने वालों का सप्ताह चालीस घंटे का हो और सरकार ने और सरकार द्वारा निश्चित न्यूनतम मजदूरी की दरों को लागू किया जाए। ये शर्तें वर्तमान हालात से अधिक उदार मालूम पड़ती हैं परन्तु खु़श्चेव का यह वक्तव्य इनको कुण्ठित कर देता है कि मजदूरों की सामूहिक मजदूरी में वृद्धि नहीं की जाएगी।

अर्थशास्त्र के स्विस विशेषज्ञ अरनैस्ट कुक्स ने कहा है कि "खु़श्चेव का कहना है कि मजदूरों की मजदूरी घटाए बिना काम का समय कम किया जाएगा परन्तु तथ्य यह है कि मजदूरों की वास्तविक आय में अवश्य ही कमी हो जाएगी।" इस सम्मति के सत्य होने का एक प्रमाण यह भी है कि निश्चित अंश से अधिक काम करने पर बोनस देने की प्रथा खत्म की जा रही है।

१२. कम्यूनिस्ट बेगार का प्रयोग किस प्रकार करते हैं ?

बेगार, श्रम कैम्पों के बन्दियों से ली जाती है। सब कम्यूनिस्ट देशों में यह रिवाज आम है। रूस में जब बेगार लेने का रिवाज ज़ोरों पर था (१९३६-४६) तो इन कैम्पों में रहने वालों की संख्या एक करोड़ से डेढ़ करोड़ तक थी।

कम्यूनिस्ट देशों में बेगार से कई एक राजनीतिक तथा आर्थिक लाभ उठाए जाते हैं। कम्यूनिस्ट परिभाषा में, जिन लोगों को (धनवान लोगों को जो पूंजीपति थे और दूसरों को मुलाजिम रखते थे) 'समाज दुश्मन' वर्ग कहा जाता है, उन्हें पूर्ण रूप में ख़त्म करने का ढंग यह भी है। चीनी सोवियत ब्लाक में जिन करोड़ों लोगों को जबरी बेगार का शिकार होना पड़ता है, उनमें वह मजदूर और किसान भी शामिल हैं जो किसी समय कम्यूनिज़्म के विरोधी थे। इनके अतिरिक्त बेगार के कैंपों में आने वाले लोगों में कम्यूनिस्ट सरकार से मत-भेद रखने वाले व्यक्ति, सोशलिस्ट, कृषि व्यवसायी, संत, महात्मा और

उनके अनुयायी, रूस के राज्यद्रोही, दूसरे महायुद्ध के जंगी कैदी, रूस के पिट्ठू देशों से निकाले हुए व्यक्ति शामिल होते हैं।

सोवियत यूनियन में बेगार आर्थिक व्यवस्था का महत्व पूर्ण अंग बन चुकी है। प्राकृतिक साधनों पर आधारित उद्योगों (जंगलात, खानों, मछली पकड़ने) में बेगार का प्रयोग सामान्य प्रथा है। रेल की पटरियां बिछाने, सड़कें तथा जल मार्ग बनाने में, नहरों और सिंचाई की परियोजनाओं के निर्माण में बेगार चिर समय से काम आती रही है।

अक्तूबर १९५६ में सोवियत सरकार ने ऐलान किया कि बेगार के कैम्प खत्म कर दिए जाएंगे। इनके स्थान पर "मजदूरों के सुधार" की कालोनियाँ और बंदीगृह बनेंगे, परन्तु यह आदेश प्रकाशित ही नहीं किया गया और इस बात की पुष्टि किसी प्रकार भी नहीं हो सकती कि इस आदेश के सब पहलुओं पर अमल किया गया है।

१९५७ के बाद से रूस की दण्डित जनसंख्या में कमी का कारण यह है कि कुछ बन्दियों के मुकदमों के पुनर्निरीक्षण के पश्चात् उन्हें छोड़ दिया गया था। इसके अलावा युद्धबंदी अपने-अपने देशों को लौटा दिए गए थे। गुप्त पुलिस की गिरफ्तारियों में भी कमी आ गई थी।

यद्यपि दण्डित लोगों की कालोनियाँ पहले की तरह जगह-जगह फैली हुई नहीं मालूम होतीं फिर भी क़ैदखानों में बेगार करने वालों की संख्या कुछ बढ़ी ही है। इसके साथ नए क़ैदखानों के निर्माण का काम भी जारी है। बेगार की बहुत सारी कालोनियों में अब हालात पहले से बेहतर बताए जाते हैं। कम्यूनिस्ट जान गए हैं कि हत्भाग्य, अधभूखे तथा थके हुए बन्दी आर्थिक दृष्टि-कोण से लाभदायक सिद्ध नहीं होते। (स्टालिन के दौर में क़ैदियों का १२ प्रतिशत प्रतिवर्ष मौत के मुंह में चला जाता था)।

कम्यूनिस्ट चीन की योजनाओं में बेगार का प्रयोग बहुत बड़े पैमाने पर होता है, परन्तु वहाँ इस प्रकार के दण्डित श्रमिकों और जबरी भरती से इन योज-नाओं पर लगाए गए मज़दूरों के दलों में अधिक अन्तर नहीं है। दोनों सामान्य रूप से अत्याचार की चक्की में पिसते हैं।

चौथा अध्याय

कम्यूनिज़्म के अन्तर्गत ज़मीन और जायदाद की मिल्कियत

१. सोवियत रूस में ज़मीन किस की मिल्कियत है ?

सारी ज़मीन सोवियत राज्य की है। दूसरे कम्यूनिस्ट देश भी ज़मीन को राज्य की मिल्कियत बनाने में प्रयत्नशील हैं। परन्तु वहाँ ज़मीन की ज़ब्ती का जबरदस्त विरोध हुआ है। ज़मीन की सामूहिक मिल्कियत और खेती बाड़ी, जिसके प्रोत्साहन के लिए सब कम्यूनिस्ट सरकारें प्रयास कर रही हैं, ज़मीन पर राज्य के आधिपत्य से बिल्कुल भिन्न है। फिर भी सामूहिक फार्म प्रायः स्टेट की प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष निगरानी में रहते हैं।

२. कम्यूनिस्ट सरकारें ज़मीन की मिल्कियत की समस्या को किस तरह निपटाती हैं ?

सोवियत यूनियन में बोलशेविक क्रान्ति के तुरन्त बाद सरकार ने सब बड़ी जागीरें जब्त कर लीं थीं। इनमें बहुत-सी जमीन भूमिहीन किसानों में बांट दी गई।

१९२१ में लेनिन ने नई आर्थिक नीति (एन० इ० पी०) की घोषणा की। यह नीति अनाज की जबरी वसूली के विरुद्ध किसानों के विरोध और दुर्भिक्ष के खतरे के कारण बनाई गई थी। अब किसानों और कारीगरों को अपनी पैदावार और रचनाओं को खुले बाजार में बेचने की अनुमति मिल गई।

लेनिन की मृत्यु के पश्चात् स्तालिन ने १९२९ से ज़मीन की सामूहिक मिल्कियत का कानून बनाया। कलक (खाते-पीते किसान) को खत्म करने की और मिल्कियत के अधिकार इससे छीन लेने का आंदोलन शुरू किया गया। इस सम्बन्ध में बड़ी सख्ती बरती गई। कृषि व्यवस्था बिगड़ गई। १९३१-३२ में ऐसा दुर्भिक्ष पड़ा कि लाखों किसान और ग्रामीण मौत का शिकार हो गए।

रूस की कृषि योग्य जमीन का ९७ प्रतिशत भाग आज सामूहिक और स्टेट फार्मों में बँटा हुआ है। सरकारी खेतों पर जो लोग काम करते हैं, स्टेट के मुलाजिम होते हैं और प्रतिदिन पारिश्रमिक पाते हैं। सामूहिक खेतों के सदस्य अपने प्रधान द्वारा भूमि की व्यवस्था में नाममात्र का दखल तो अवश्य रखते हैं परन्तु वास्तव में फार्मों की शासन व्यवस्था में उनका कोई हिस्सा नहीं होता। १९५३ और १९५४ में स्थापित नए फार्मों और लाखों एकड़ अकृष्टपूर्व भूमि पर फैले हुए खेतों का प्रबन्ध तथा देखरेख सरकार की ही जिम्मेदारी है।

१९५० के बाद से सामूहिक फार्म धीरे-धीरे क्षेत्रफल में बड़े और संख्या में कम होते जा रहे हैं। इससे सी० पी० एस० यू० का नियंत्रण और भी मज़बूत हो गया है। कम्यूनिस्टों का दावा है कि बड़ी इकाइयाँ आर्थिक दृष्टिकोण से लाभदायक रहती हैं। परन्तु इस सामूहिकता से केवलमात्र आर्थिक लाभ ही नहीं, राजनीतिक लाभ भी तो मिलते हैं।

कम्यूनिस्ट नेताओं के वक्तव्य के अनुसार, सरकारी खेती की व्यवस्था ही, जिसमें किसान केवल मज़दूर बन कर स्टेट के लिए काम करता है, सोवियत भूमि तथा कृषि कार्यक्रम की अन्तिम मंजिल है।

पूर्वी यूरोप में बल्गारिया में सामूहिक कृषि की पद्धति काफी उन्नत हो चुकी है। पिट्ठू देशों के सब किसान इस पद्धति के कट्टर विरोधी हैं। इस विरोध के बावजूद मास्को की योजना यह है कि १९६५ तक भूमि पूर्ण रूप से सामूहिक कृषि व्यवस्था के अधीन आ जाए।

३. सामूहिक फार्म का अभिप्राय क्या है? क्या किसान को अपनी पैदावार बेचने का अधिकार है?

सामूहिक फार्म में वे क्षेत्र लिए जाते हैं जिनके असली मालिकों से मिल्कियत का अधिकार छीन लिया गया है। भूमि के अतिरिक्त इसमें किसानों के निजी निवासस्थान, खेतीबाड़ी का सामान और अन्य निजी सम्पति भी शामिल होतीं है।

सामूहिक फार्म के मुखिया को प्रधान कहते हैं जो निर्वाचित होता है। प्रायः उसके निर्वाचन की स्वीकृति स्थानीय कम्यूनिस्ट पार्टी या इसके सदस्य के हाथ में होती है।

१९५८ के अर्ध तक सामूहिक फार्मों को अपने उत्पादन का निश्चित भाग सरकार द्वारा नियुक्त कीमतों पर देना पड़ता था। अब यह प्रथा छोड़ दी गई है। परन्तु सरकार अब भी इस बात पर ज़ोर देती है कि उत्पादन का निश्चित

भाग उसे दिया जाए और प्रत्येक ज़िला, राज्य सरकारी योजनाओं (सप्त वर्षीय योजना) को पूरा करने के लिए पैदावार में से अपना हिस्सा दे। सामूहिक फार्मों को दी जाने वाली कीमतें अब पहले से अधिक हैं परन्तु कीमतें निश्चित करने का काम अब भी सरकार ही करती है।

सामूहिक फार्म का सदस्य सामूहिक पैदावार का कोई हिस्सा स्वयं नहीं बेच सकता परन्तु उसे ज़मीन का छोटा-सा टुकड़ा रखने की अनुमति है। यह उसके परिवार के प्रयोग के लिए होता है। उसकी पैदावार खुले बाज़ार में बेच सकता है। सामूहिक खेतों के बहुत से सदस्य बड़े बलिदान करके प्रयास करते हैं कि इस पैदावार को खुले बाज़ार में नकदी के बदले में बेच सकें और सख्त ज़रूरत की बहुमूल्य वस्तुएं (जूते, कपड़े और घरेलू बर्तन) खरीद लें।

४. ज़मीन के मालिकों से कम्यूनिस्ट किस प्रकार छुटकारा पाने की कोशिश करते हैं?

बोलशेविक क्रान्ति के पश्चात्, बड़े-बड़े ज़मीदारों को उनकी जागीरों से निकाल दिया गया। कुछ बन्दी बना लिए गए, कुछ मारे गए और कुछ को साइबेरिया भेज दिया गया। दूसरे महायुद्ध के पश्चात् पूर्वी यूरोप के देशों में भी उनकी यही दुर्गति हुई परन्तु कुछ भूमिदार अपनी ज़मीन पर ही रहते रहे।

पूर्वी यूरोप में जब कम्यूनिस्टों ने शासन पर अधिकार कर लिया तो भूमि सुधार के कानून लागू किये और जमीन की निजी मिल्कियत निश्चित की। फालतू जमीन पर सरकार ने कब्जा कर लिया और उसे लगान पर खेती करने वाले किसानों और भूमिहीन मज़दूरों में बाँट दिया। परन्तु ये टुकड़े इतने छोटे थे कि इन पर उनके परिवारों का गुजारा सम्भव न था। फिर कम्यूनिस्टों की निगरानी में "सांझी खेती" आरम्भ की गई। ये नए छोटे काश्तकार जबरदस्ती इन खेतों में इकट्ठे कर दिए गए या फिर उन्हें नए सामूहिक फार्मों में शामिल होना पड़ा।

अधिकार प्राप्त करते ही कम्यूनिस्टों ने सभी कम्यूनिस्ट देशों में काश्तकारों के लिए "मुफ्त ज़मीन" देने का वचन भुला दिया है। कम्यूनिज़्म का वास्तविक अभिप्राय यही है कि सामूहिक खेती-बाड़ी की व्यवस्था स्थापित हो, वह राज्य के नियंत्रण में रहे और उन पर काम करने वालों का दर्जा वही हो जो उन उद्योगों के मज़दूरों का होता है जिनका राष्ट्रीयकरण हो चुका है।

५. क्या कम्युनिज़्म के अन्तर्गत अन्य प्रकार के खेत भी मौजूद हैं या केवल सामूहिक फार्म ही रह गए हैं ?

तथाकथित सोशलिस्ट (कम्यूनिस्ट) क्षेत्र में कई प्रकार के खेत होते हैं। जैसे रूस में सामूहिक फार्म (कोल-खोज़) और स्टेट फार्म (सोव-खोज़) हैं। स्टेट फार्मों का बंदोबस्त स्टेट के हाथ में होता है। खेतों में काम करने वालों को काम के हिसाब से उजरत मिलती है।

पूर्वी यूरोप में, कम्यूनिस्ट सरकारों के अधीन, स्टेट फार्म, सामूहिक फार्म या फिर साझे फार्म होते हैं जिन पर सरकार का अप्रत्यक्ष कंट्रोल रहता है। निजी क्षेत्र में व्यक्तिगत खेतीबाड़ी के कुछ चिह्न अभी बाकी हैं, परन्तु निजी खेतों के मालिकों को बहुत हानि उठानी पड़ती हैं। अधिक कर उनकी कमर तोड़ देते हैं। पिट्ठू देशों में सामूहिक खेती-बाड़ी का अनुपात १४ प्रतिशत (पोलैण्ड) से ९० प्रतिशत (बल्गारिया) तक है। सारे कम्यूनिस्ट संसार में जनता की ओर से सामूहिक खेती का सख्त विरोध होता रहता है।

दिसम्बर १९५९ में पूर्वी जर्मनी की कम्यूनिस्ट पार्टी (एस० इ० डी०) की केन्द्रीय समिति ने खेती-बाड़ी के एक विशेषज्ञ की रिपोर्ट सुनी। उसने कहा कि सामूहिक खेतों पर अधिक लूट मार और तोड़-फोड़ की कार्यवाहियां होती हैं। केवल जुलाई-अगस्त और सितम्बर में लूटमार की नौ सौ से अधिक घटनाएं हुई थीं। साल के पहले नौ महीनों में चौदह लाख डालर का घाटा रहा।

६. क्या भिन्न-भिन्न सामूहिक फार्मों की आय में अन्तर होता है ?

रूस में भिन्न-भिन्न सामूहिक फार्मों की आय में काफी अन्तर होता है। तथाकथित "लखपति" सामूहिक फार्म रूई जैसी उद्योगिक फसलें पैदा करते हैं। इनको सरकार की ओर से सहायता भी मिलती है। दूसरे धनवान 'कोल-खोज़' बहुत ही उपजाऊ भूमि में हैं। धनवान सामूहिक फार्मों के मेम्बरों की आमदनी थोड़ी आय वाले फार्मों के मेम्बरों से अधिक होती है।

७. क्या यह ठीक है कि सोवियत किसानों के पास ट्रेक्टर होते हैं ?

कोई सोवियत किसान व्यक्तिगत रूप से ट्रेक्टर या खेती-बाड़ी के दूसरे सामान का मालिक नहीं होता। पहले सब ट्रेक्टर सरकार की मिल्कियत थे। इनकी देख-रेख, इनका चलाना, मशीन ट्रेक्टर स्टेशनों (एम० टी० एस०) के जिम्मे थी। ये स्टेशन सरकारी महकमे थे। सामूहिक फार्म ट्रेक्टर के प्रयोग के लिए फीस देते थे। मार्च, १९५८ में सरकारी आदेश के अनुसार सामूहिक खेतों को एम० टी० एस० से ट्रेक्टर खरीदने की अनुमति मिली। एम० टी०

एस० मशीन सर्विस स्टेशनों का काम करते जो बड़े सामूहिक फार्मों के अब अपने ट्रैक्टर और दूसरी भारी मशीनें हैं। जो सामूहिक फार्म आर्थिक तौर पर कमज़ोर हैं और स्वयं अपनी मशीनें खरीदने और चलाने की क्षमता नहीं रखते, उन्हें बड़े और समृद्ध फार्मों के साथ मिला दिया गया है।

सोवियत समाचार ऐजन्सी 'तास' के अनुसार वे जमीनें जो १९५० में ढाई लाख खेतों में बँटी हुई थी, अब पचास हज़ार से भी कम सामूहिक फार्मों में एकत्रित कर दी गई हैं।

एक साधारण सामूहिक फार्म से स्टेट फार्म का क्षेत्रफल कहीं अधिक होता है। स्टेट फार्मों की संख्या लगभग छः हज़ार है।

८. जब कम्यूनिस्ट देशों में सारी पैदावार सरकार की मिल्कियत होती है तो सरकार इस पैदावार का क्या करती है ?

उपभोग्य वस्तुएं और अन्य सामान सरकारी दुकानों या सहकारी सोसाइटियों द्वारा बेची जाती हैं। कच्चा माल जैसे रूई और सन सरकारी उद्योगिक निगमों इत्यादि को दे दिया जाता है। तैयार की हुई चीज़ें, अनाज तथा अन्य खाद्य पदार्थ और कच्चा माल निर्यात व्यापार के सौदों में भी बेचा जाता है।

कम्यूनिज़्म के अन्तर्गत निर्यात तथा आयात पर सरकार का एकाधिकार है।

९. क्या सोवियत रूस के नागरिक अपने निवास-स्थान के मालिक हो सकते हैं ?

सोवियत संविधान के अनुच्छेद १० में लिखा है कि "नागरिकों को अधिकार है कि उनके काम की उजरत, बचत के रुपये, रहने का मकान, सहायक बचतें, फर्नीचर, बर्तन, निजी सुख तथा सुविधा की वस्तुएं, इनकी घरेलू मिल्कियत रहें। उन्हें पैतृक जायदाद का दायाधिकार और उक्त अधिकार संविधान द्वारा सुरक्षित है।"

इस प्रकार कानूनी तौर पर तो रूस में साधारण व्यक्ति के लिए मकान का मालिक होना सम्भव है। निजी मकान बनाने के लिए (विशेषरूप से मध्य-एशिया की 'नई भूमि' पर) सरकार कर्ज़े भी देती है। परन्तु मकान की ज़मीन मकान मालिक की मिल्कियत नहीं हो सकती। वैसे भी इस प्रकार की जायदाद प्राप्त करने में बहुत-सी कठिनाईयां हैं। सबसे बड़ी कठिनाई तो आय और पूंजी की कमी है जिसके कारण निजी मकान बनाना असम्भव होता है।

रूस और इसके पिट्ठू देशों में जनता के लिए निवास-स्थान निर्माण की कई योजनाएं हैं परन्तु अभी तक सम्पूर्ण सोवियत ब्लाक में मकानों की जबर-

दस्त कमी है।

सोवियत सप्तवर्षीय योजना के अन्तर्गत १९६५ तक मकानों की संख्या में वृद्धि करने का लक्ष्य निर्धारित है। साढ़े चार करोड़ लोगों के लिए डेढ़ करोड़ मकान बनाने हैं। यह योजना एक परिवार में तीन व्यक्तियों के हिसाब से बनाई गई है। आजकल तो सांझे क्वार्टरों का रिवाज़ आम है। परन्तु नव-निर्मित निवास-स्थानों में प्रत्येक परिवार के लिए अलग-अलग मकान पर ज़ोर दिया जायेगा। सांझे क्वार्टरों में दो या तीन परिवार रसोई, स्नान-गृह और अन्य घरेलू सुविधाओं में शरीक होते हैं। आजकल कम-से-कम पाँच करोड़ व्यक्ति सांझे तौर पर रह रहे हैं।

वर्तमान योजना की पूर्ति से रिहाईश की समस्या काफी सुधर जाएगी, परन्तु यदि निवास-स्थान निर्माण के लक्ष्य पूरे भी कर लिए गए—जो नौकर-शाही अदक्षता के कारण बहुत कठिन है, तो भी नागरिकों की बहुत बड़ी संख्या बदनुमा, घुटे-घुटे क्वार्टरों में ही रहती रहेगी। दरिद्र बस्तियों की सफाई और पुनर्निर्माण की कोई व्यवस्था नहीं है। भविष्य में भी इसकी कोई सम्भावना नहीं क्योंकि मकानों की कमी बहुत समय तक रहेगी। सरकार के निवास-स्थान निर्माण के फंड में साठ प्रतिशत की वृद्धि का प्रस्ताव अवश्य किया गया है। परन्तु जिन टूटे-फूटे मकानों में आज भी किराएदार भरे पड़े हैं, उनकी मरम्मत के लिए कोई योजना नहीं है। इसलिए वह धीरे-धीरे और खराब होते जाएंगे।

१०. रूस के मुकाबिले में पिट्ठू देशों में मकानों की स्थिति कैसी है ?

चेकोस्लोवाकिया को छोड़कर बाकी सब पिट्ठू देशों में मकानों की समस्या रूस से भी कठिन है। पिट्ठू देशों की "स्वतन्त्रता" के बाद से (जब युद्ध के पश्चात् पूर्वी यूरोप में मास्को की सहायता से सरकारें बनीं) बल्गारिया, हंगरी, रूमानिया और पोलैंड में शहरी रिहायशी स्थिति और भी खराब हो गई। चेकोस्लोवाकिया में भी मकानों की कमी है यद्यपि वहां पर अधिक निवास-स्थान बनाने के लिए जनता की ओर से मांग होती ही रहती है।

पूर्वी जर्मनी में मकानों की हालत युद्ध-पूर्व हालत से भी बिगड़ गई है। यह हालत इस समय है जबकि छत्तीस लाख जर्मन पश्चिमी जर्मनी में शरण ले चुके हैं। दूसरे महायुद्ध से पूर्व पूर्वी जर्मनी की जितनी आबादी थी, आज उससे कहीं कम है परन्तु मकानों की समस्या अब और भी गम्भीर हो गई है।

रूस और बल्गारिया के रिहाइशी नियमों के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को

कम-से-कम ९७ वर्गफीट या ९ वर्ग मीटर स्थान मिलना चाहिए। परन्तु दोनों देशों में से किसी में भी इस नियम का पालन नहीं किया जाता। वहां प्रत्येक व्यक्ति के हिस्से में ५४ वर्ग फीट या ५ वर्ग मीटर क्षेत्रफल आता है। चेकोस्लोवाकिया इस स्तर से कुछ आगे बढ़ गया है। वहां प्रत्येक व्यक्ति के हिस्से में १२४ वर्ग फीट क्षेत्रफल आता है।

हंगरी में प्रत्येक कमरे में लगभग २.५ व्यक्ति रहते हैं लगभग २० से २५ प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जो दूसरों के साथ क्वार्टरों में रहते हैं।

कम्यूनिस्ट देशों में मकानों की आवश्यकता मरम्मत और देखभाल पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। नए बने हुए मकान इतने बोदे हैं कि युद्ध के पश्चात् बनी हुई बहुत-सी इमारतें अभी से मरम्मत मांगती हैं।

११. रूस में विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग किस प्रकार रहता है ?

रूस में खुले और अच्छे मकान पहले विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग को ही मिलते हैं। उच्च अधिकारी और उच्च सैनिक अफसर ठाठ से रहते हैं। इनमें से बहुत से शहरी और ग्रामीण, दोनों प्रकार के निवास-स्थानों को अपने कब्जे में रखते हैं। कुछ ग्रामीण निवास-स्थान (जिन्हें 'दाचा' कहा जाता है) तो पूरे महल जैसे होते हैं। परन्तु चूंकि सोवियत यूनियन में विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग को भी मकानों की मिल्कियत का अधिकार नहीं, इसलिए इसे सदा यही धड़का लगा रहता है कि पता नहीं कब वह पार्टी की नजर से गिर जाएं और सब सुख-सुविधाओं से वंचित हो जाएं या पार्टी के भीतरी संघर्ष का शिकार बन जाएं।

१२. क्या कम्यूनिज्म के अन्तर्गत मजदूर को अधिकार है कि अपना कमाया हुआ रुपया स्वयं खर्च करे ?

निस्सन्देह, वह उस रुपये को जिस प्रकार चाहे खर्च कर सकता है, परन्तु कम्यूनिज़्म के आधीन आम इस्तेमाल की वस्तुएं इतनी कम हैं और उनकी कीमतें इतनी ज्यादा हैं कि साधारण व्यक्ति अपने और अपने परिवार के लिए अति आवश्यक वस्तुओं के अतिरिक्त कुछ और खरीदने की क्षमता ही नहीं रखता।

रूस में खरीदार को सरकारी दुकानों से कोई भी वस्तु खरीदने पर ५० से १०० प्रतिशत तक 'उत्पादन अथवा बिक्री कर' देना पड़ता है। (दसवां अध्याय देखिए)।

१३. कम्यूनिस्ट चीन में रिहाइशी हालत कैसी है ?

वहाँ निजी ग्रह बहुत संख्या में तबाह हुए हैं। हज़ारों गांव विध्वंस कर दिए गए। गिरे हुए मकानों से जो इमारती सामान मिला, उसे सांझी बैरकों के निर्माण में प्रयोग किया गया। कम्यून पद्धति के लागू होने से (पहला अध्याय देखिए) कृषि सम्बन्धी सामान और अनेकों घरेलू वस्तुओं की निजी मिल्कियत खत्म हो गई।

यद्यपि कम्यूनिस्ट चीन के पचास करोड़ किसानों में से अधिकतर कम्यूनों में रहने पर विवश कर दिए गए हैं, परन्तु रहन-सहन का यह ढंग अभी पूरी तरह लागू नहीं हो सका है। कम्यून आंदोलन के पहले चरण में खाने-पीने की खानदानी पर्दादारी को इस प्रकार खत्म किया गया कि बड़े-बड़े भोजनालय बना दिए जहां सब लोग इकट्ठे बैठ कर भोजन करते थे, परन्तु जब लोगों ने इस पर रोष और विरोध प्रकट किया तो भोजनालय बन्द कर दिए गए। १९५९ की पतझड़ में इकट्ठे रहने का आंदोलन एक नए रूप में फिर बड़े जोश से चलाया गया। बहुत से भोजनालय फिर से खुल गए।

पांचवां अध्याय

कम्यूनिज़्म में समता

१. कम्यूनिस्टों का दावा है कि कम्यूनिज्म के अन्तर्गत सब एक समान हैं और न कोई धनवान है और न ही कोई निर्धन, क्या इस घोषणा में कुछ सच्चाई है ?

१९३६ के सोवियत संविधान के अनुसार सब नागरिक एक समान हैं, परन्तु वास्तविक रूप में न सोवियत रूस में ही ऐसा है और न किसी और कम्यूनिस्ट देश में।

सोवियत रूस में कई सामाजिक वर्गों में बहुत अन्तर है। उदाहरण के लिए कम्यूनिस्ट समाज में अधिकतम तथा न्यूनतम वेतन में उतना ही अन्तर है जितना कि पूंजीवादी समाज में।

१९२० और इसके पश्चात् सोवियत नेताओं ने 'समानता' के नियमों को कार्यान्वित करने का बहुत प्रयास किया। 'कर्मचारियों और श्रमिकों को चाहे वे शिक्षित हों या अशिक्षित, बराबर वेतन मिलने लगा। परन्तु उन्हें शीघ्र ही पता चल गया कि उजरत और वेतन के इस नए ढांचे ने उत्पादन बढ़ाने की उमंग के लिए कोई जगह नहीं छोड़ी। १९३१ में स्तालिन ने "समान वेतन" के नियम को छोड़ दिया और इसके स्थान पर उजरतों का एक नया नक़शा बनाया जिससे मजदूर निश्चित काम करता रहे और उसे अधिक काम करने के लिए प्रोत्साहन भी मिले।

१९३० के पश्चात् अधिकतम तथा न्यूनतम उजरत पाने वाले मजदूरों में और उनकी नौकरशाही के भीतर वेतन का अन्तर बराबर बढ़ता रहा है।

अधिक आय के अतिरिक्त, कम्यूनिस्ट समाज में कुछ वर्गों को विशेष सुविधाएं भी प्राप्त हैं जो दूसरों को नहीं मिलतीं।

२. सोवियत रूस में मज़दूरों के मुकाबिले में अधिकारीवर्ग की आमदनी कितनी है ?

रूस में पाँच स्पष्ट वर्ग हैं। उच्चतम स्तर पर कुछ सौ परिवार हैं जिनके हाथ में देश का शासन है। सरकार और पार्टी के उच्च अधिकारी और बड़े फौजी अफसर पाँच लाख रूबल से ऊपर वार्षिक वेतन पाते हैं।

इनसे कम महत्व वाले अधिकारी, बड़े-बड़े कलाकार, लेखक, वैज्ञानिक अन्य विद्वान्, और बड़े सरकारी उद्योगों के डायरेक्टर, जिनकी कुल संख्या पचास लाख है, भी लाखों रूबल का वार्षिक वेतन पाते हैं।

तीसरे वर्ग में पार्टी के न्यून स्तर के कार्यकर्ता, इंजीनियर, टैक्नीशियन, सामूहिक फार्मों और छोटे कारखानों के मैनेजर और कुछ अटेखाफोफ या "तीव्र गति से काम करने वाले मज़दूर" आते हैं। इनकी वार्षिक आय बीस हज़ार रूबल होती है। ये तीनों ऊंचे वर्ग सोवियत यूनियन की बीस करोड़ आबादी का दसवाँ भाग हैं।

चौथा वर्ग साधारण मज़दूरों और किसानों का है। ये यदि आठ हज़ार रूबल वार्षिक भी पा लें तो उनका सौभाग्य है। (इतनी आय से दो बड़ों और दो बच्चों के शहरी खानदानों का गुजारा नहीं हो सकता)। साधारण अर्ध-प्रशिक्षित मज़दूर इससे आधी उजरत पाता है।

३. कम्यूनिस्ट देशों में नागरिकों को समतल पर कैसे लाया जाता है?

कम्यूनिस्ट देशों में सबको एक स्तर पर लाने वाली केवल एक ही शक्ति है। कम्यूनिस्ट पार्टी स्वयं ही सुविधाएं और सुख प्रदान कर सकती है, वही उन्हें छीन भी सकती है।

४. क्या कम्यूनिस्ट देशों में भीख और दान मांगने का रिवाज़ है ?

कम्यूनिस्टों की दृष्टि में भीख और दान देना "पतनोन्मुख पूंजीवादी समाज" का चिन्ह है। इसलिए वे इसकी निन्दा करते हैं। फिर भी सोवियत नगरों में भिखमंगे नज़र आते हैं।

५. क्या कम्यूनिस्ट देशों में लोकमत होता है ?

सरकारी सोवियत पत्रिका "बोल्शेविक" ने एक बार लिखा था "लोकमत की माँग है कि प्रत्येक सोवियत नागरिक सोशलिस्ट समाजी जीवन के नियमों का पालन करे—इन नियमों का भी जिनका कानून में ज़िक्र नहीं है।"

कम्यूनिस्ट देशों में 'लोकमत' केवल कम्यूनिस्ट पार्टी के आदेश तथा निर्देशन के अधीन ही पनपता है। सरकारी अधिकारी हो या जनसाधारण, सब पर पार्टी की निगरानी रहती है, परन्तु सोचने वाले लोग राय रखते हैं यद्यपि कारणवश वे उसे प्रकट नहीं कर सकते। इसलिए सोवियत यूनियन और पूर्वी यूरोप में लोकमत मौजूद अवश्य है। लोकमत कुछ मामलों में कम्यूनिस्ट अधिकारियों पर काफी दबाव डालता है और वे इससे प्रभावित भी होते हैं।

पूर्वी यूरोप में जब से रूस ने प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अपनी अनुयायी सरकारें वहां की जनता पर लादी हैं, वहां के नेता मास्को की हां में हां मिलाते रहते हैं। लोकमत से वे सदा बेपरवाह रहे हैं। अलबत्ता जब सोवियत नेताओं ने स्तालिन के दर्जे को कम किया तो वहां भी हालत कुछ बदली! लेखक, विद्यार्थी और ओद्योगिक मजदूर किसी हद तक ईमानदारी से अपनी राय प्रकट करने लगे। परन्तु शीघ्र ही उन्हें मनाही कर दी गई कि सरकारी नीति की सीमाओं का उल्लंघन न करें।

अक्तूबर, १९५६ में पोलैण्ड और हंगरी में जो उपद्रव हुए, उनके दौरान में और इनसे पहले लोकमत का स्रोत एकाएक ही उबल पड़ा था।

पोलैण्ड में पिछले दिनों प्रेस और पोलिश कम्यूनिस्ट पार्टी के भीतर रूस के प्रति बहुत विरोध प्रकट किया गया जिससे पार्टी में काफी अफरा-तफरी मची। इसके साथ-साथ देश की आर्थिक दुर्दशा पर भी काफी ले-दे हुई।

पोलैंड की कम्यूनिस्ट पार्टी प्रयत्नशील रहती है कि मार्क्सवाद लेनिनवाद के पुराने मार्ग से जनता को हटने न दिया जाए परन्तु तमाम कोशिशों के उपरान्त भी पोलैंड में लोकमत और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति अधिक नियन्त्रण स्वीकार नहीं करते।

६. क्या सोवियत यूनियन में भिन्न-भिन्न जातियों को समान अधिकार प्राप्त हैं?

सोवियत संविधान में लिखा है—

इन विशेष जमानतों के बावजूद १९२० के बाद से ही जनता की राष्ट्रीय उमंगों को दृढ़ता से कुचल दिया गया। वाल्गा के निचले क्षेत्रों में और मध्य एशिया में लाखों बौद्धों और मुसलमानों पर अत्याचार के पहाड़ तोड़े गए। इनके जीवन की परम्पराओं को मिटा दिया गया। बाल्टिक जातियों का भी यही हाल हुआ।

दूसरी ओर 'आर० एफ० एस० आर०' के रूसी वासियों के उच्च स्तर को स्वयं मास्को ने स्वीकार किया है।

महान् रूस के इतिहास और संस्कृति को नमूने के तौर पर पेश किया जाता है। शेष चौदह प्रजातंत्रों की जनता को जो रूसी नहीं हैं, निमन्त्रण देते हैं कि इसी नमूने को अपनाएं। सोवियत यूनियन के भीतर गैर रूसियों की राष्ट्रीय संस्कृति को योजनानुसार महान रूसी नमूने पर ढाला गया है।

यूनियन प्रजातंत्री में आर० एफ० एस० आर० क्षेत्रफल में सबसे बड़ी और सबसे अधिक आबादी वाला प्रजातंत्र है। मास्को इसकी राजधानी है। सोवियत यूनियन की यह सबसे शक्तिशाली सरकार है।

कुछ यूनियन प्रजातंत्रों में कभी-कभी असंतोष की लहरें उठती हैं जिन्हें सी० पी० एस० यू० राष्ट्रवाद का नाम देती है। काज़क प्रजातंत्र में क़ज़ाक अफसरों के स्थान पर जब केन्द्रीय सरकार ने अपने कर्मचारी नियुक्त किए तो वहां बहुत गड़बड़ी हुई थी।

१९५३ के बाद कज़ाकिस्तान में सोवियत नागरिक, विशेषतया महान रूसी बहुत बड़ी संख्या में आए। वंशीय मुकाबिले और संघर्ष आरम्भ हुए। कज़ाक कम्यूनिस्ट पार्टी की पत्रिका के सितम्बर १९५९ के अंक में काज़क राष्ट्रवाद के प्रदर्शन पर बड़ी ले-दे हुई। आरोप लगाया गया कि स्थानीय कज़ाक रूसियों के प्रति शत्रुता दिखा रहे हैं। कज़ाक इतिहास को अनावश्यक ही महान् बना कर पेश कर रहे हैं और आर्थिक प्रादेशिकतावाद का प्रचार कर रहे हैं। (इस नीति का अभिप्राय यह है कि कज़ाकी उत्पादन कज़ाकिस्तान में ही रहें और रूस के अन्य प्रदेशों में न भेजा जाए)। कज़ाक अधिकारियों की यह शिकायत भी है कि उनके रहने के मकान काफी नहीं हैं। सरकारी दुकानों पर खाद्य-सामग्री और कपडा कम मात्रा में मिलता है। १९६० में उच्च काज़क अधिकारियों की बड़ी संख्या को तब्दील कर दिया गया था। इससे प्रकट है कि 'काज़क राष्ट्रवाद' की समस्या अभी हल नहीं हुई है।

१९५९ में लेटेवियन कम्यूनिस्ट पार्टी को मुअत्तल कर दिया गया था। सी. पी. एस. यू. ने आरोप लगाया था कि वह "स्थानीयतावाद" और "बुर्जुआ राष्ट्रवाद" से निमटने में असफल रही है। स्थानीय भावनाओं को दबाने का यह एक और उदाहरण है।

छठा अध्याय

कम्यूनिज़्म के अधीन न्यायालय तथा न्याय

१. क्या कम्यूनिस्ट देशों में कोई विधि-संग्रह है ?

विधि-संग्रह प्रत्येक कम्यूनिस्ट देश में मौजूद है। सोवियत यूनियन का विधि-संग्रह अन्य कम्यूनिस्ट देशों के लिए नमूने का काम देता है। इन विधि-संग्रहों में इस बात की व्याख्या होती है कि कम्यूनिस्ट देशों में नागरिक की हैसियत क्या है, इसकी जिम्मेदारियाँ कौन-कौन-सी हैं। इनमें राज्य विरोधी कार्यविधियाँ करने वालों के लिए कौन-कौन-से दण्ड नियुक्त किए गए हैं।

कम्यूनिस्ट देशों में विधि-संग्रह का सबसे बड़ा काम राज्य के हानि लाभ की सुरक्षा करना है, नागरिक के अधिकारों की निगरानी या रक्षा नहीं जैसा कि प्रजातांत्रिक देशों में होता है।

सोवियत रूस में कम्यूनिज़्म के पहले कुछ वर्षों में कानूनी शिकंजे में सब से पहले "वर्ग शत्रु" फँसे, अर्थात् वे लोग जो इस नए सिस्टम के विरुद्ध थे। साधारण अपराधी, चोर इत्यादि नम्र व्यवहार के पात्र समझे गए। दलील यह दी गई कि सोवियत समाज के "खालिस कम्यूनिज़्म" की मंजिल तक पहुँचते-पहुँचते अपराध स्वयं ही समाप्त हो जाएँगे। इसलिए अन्तरिम काल में कठोर दण्ड देने की आवश्यकता नहीं।

परन्तु ऐसा हुआ नहीं। एक ओर उद्योगों का राष्ट्रीयकरण हो रहा था, भूमि का सामूहिकीकरण किया जा रहा था, दूसरी ओर अपराध बढ़ रहे थे। मज़दूरों के अधिकार में कुछ भी नहीं था। राज्य के पास सर्वस्व अधिकार थे। राज्य के लिए मज़दूरों में न तो निष्ठा थी और न ही सहानुभूति, न अपने कर्त्तव्य का एहसास। इसके परिणामस्वरूप १९३० और उसके पश्चात् सोवियत विधि-संग्रह में बहुत से परिवर्तन किए गए। कम्यूनिस्ट पार्टी के दृष्टिकोण से इन परिवर्तनों का आशय यह था कि मज़दूरों को अधिक अनुशासित किया

जाए। १६२६ में स्तालिन ने घोषणा की : "पहले की अपेक्षा आज यह अधिक आवश्यक है कि हमारे कानून स्थावर हों।"

स्तालिन की इस घोषणा का अभिप्राय यह था कि शासक वर्ग को अनुशासन लागू करने के लिए कठोर दण्ड विधान की आवश्यकता थी ताकि जनता पर उनकी पकड़ और भी दृढ़ हो जाए। इस प्रकार के कानूनों का उदाहरण श्रमिक की नियमावली है। इसके नियम बहुत कठोर हैं। अभिप्राय यह है कि मज़दूर संघटन के चुंगल में फंसकर विवश हो जाएं। सरकार के आर्थिक प्रोग्रामों में, राजकीय योजना के किसी भाग में यदि कोई व्यक्ति बाधा डालता है अथवा तोड़-फोड़ का प्रयत्न करता है, उसे कठोरतम दण्डों का पात्र समझा जाता है। अब सोवियत दण्ड विधान का सिंहावलोकन हो रहा है परन्तु यह काम अभी पूरा नहीं हुआ।

२. सोवियत यूनियन में वैधानिक न्यायालयों का कौन-सा सिस्टम प्रचलित है?

१६३६ के विधान के अनुसार रूस की सुप्रीम कोर्ट सर्वोच्च न्यायालय है। प्रत्येक प्रजातांत्रिक यूनियन की अपनी सुप्रीम कोर्ट है। इनके अतिरिक्त प्रादेशिक न्यायालयों का पूरा जाल फैला हुआ है।

सुप्रीम कोर्ट ने विशेषित न्यायालय भी नियुक्त कर रखे हैं जैसे रेल रोड ट्रांसपोर्टेशन कोर्ट, मज़दूरों के न्यायालय इत्यादि। ये न्यायालय विशेष मामलों से सम्बन्धित मुकदमों के फैसले करते हैं।

स्थानीय न्यायालय, सार्वजनिक न्यायालय के नाम से पुकारे जाते हैं। इनके सदस्य तीन वर्ष की अवधि के लिए जनमत से चुने जाते हैं। निर्वाचन से पूर्व स्थानीय कम्यूनिस्ट पार्टी प्रत्येक उम्मीदवार की जांच-पड़ताल करती है।

१६३७-३८ में स्तालिन ने अपने विरोधी नेताओं को निकाल बाहर करने के लिए "संशोधन का महान् आंदोलन" चलाया था। रूस के न्यायालयों का भरम उन्हीं दिनों टूटा कि वह किस प्रकार पार्टी के आन्तरिक द्वंद्व तथा राजनीतिक कूटनीति का मोहरा बनती हैं। आंद्रे वशिस्की उन दिनों सरकारी वकील थे। "पुराने बोलशेविकों" और उनके साथियों पर जो नाममात्र मुकदमे चले उनमें अदालती कार्यवाही केवल खानापूरी के लिए होती थी। अपराधियों के न्यायालय में उपस्थित होने से पहले ही उनके लिए स्तालिन की ओर से दण्ड निश्चित कर दिये जाते थे।

स्तालिन की मृत्यु के पश्चात् एक बार फिर मुकदमों की हवा चली। इस बार निशाना ल्योरेन्टी बेरिया तथा उनके सहयोगी थे। इस प्रकार के आंत-

रिक राजनीतिक मुकदमे सब कम्यूनिस्ट देशों में होते ही रहते हैं। कम्यूनिस्ट चीन में भी स्थिति इससे भिन्न नहीं।

पार्टी के भीतर के ऐसे मुकदमों में अपराधियों पर जो आरोप लगाये जाते हैं वे हैं, क्रान्ति विरोधी कार्यवाहियाँ और विदेशों के लिए जासूसी, "राज्य की आर्थिक स्थिति को भंग करने का प्रयास", "राज्य विरोधी तोड़-फोड़" इत्यादि। कम्यूनिस्ट पार्टी के पद-अधिकारी भी, जिन्होंने अपना जीवन पार्टी को समर्पित कर दिया है, वे भी अपने आपको ऐसे आरोपों से सुरक्षित नहीं समझते। यह सर्वाधिकारी पद्धति का एक अंश है, उदाहरण के लिए आज़रबाईजान के भूतपूर्व मुख्यमन्त्री और तीन उच्च अधिकारियों को मई १९५६ में "क्रान्ति विरोधी कार्यवाहियों" का आरोप लगा कर दण्ड दिया गया।

३. कम्यूनिस्ट देशों में न्याय की व्यवस्था कैसे होती है ?

यदि पश्चिमी देशों के स्तर से परखा जाए तो रूस में किसी हद तक साधारण अपराधियों के साथ न्याय किया जाता है। इस सम्बन्ध में सोवियत दण्ड-विधान अन्य देशों से भिन्न नहीं है।

परन्तु राजनीतिक क्षेत्र में हस्तक्षेप का जहाँ तक सम्बन्ध है सोवियत कानून और न्यायालय (जिनकी सहायता के लिए गुप्त पुलिस भी मौजूद है) की अपनी एक अलग ही श्रेणी है।

मार्च, १९५३ में स्तालिन की मृत्यु तक "सोशलिस्ट विधि" का नियम सर्वाधिकारी राज्य में विधि अनुसार न्याय के आदर्श के तौर पर बढ़-चढ़कर पेश किया जाता था परन्तु इसको कार्यान्वित कम ही किया जाता था। गुप्त पुलिस का किसी को पकड़ लेना उसे दोषी ठहरा देने के समान था। अन्याय की हद थी कि उसे अपील करने का अवसर भी नहीं मिलता था, जबरी श्रम के कैंप में कैद से लेकर मौत तक का दण्ड दिया जा सकता था। अभियुक्तों पर अत्याचार और पुलिस द्वारा जुल्म आम होता। पुलिस आतंक फैलाने के लिए हर समय उत्सुक रहती थी।

फरवरी १९५६ में सी० पी० एस० यू० की बीसवीं कांग्रेस में ख्रुश्चेव का वह प्रसिद्ध भाषण हुआ जिसमें उन्होंने "व्यक्तित्व पूजा" को प्रचलित करने का आरोप लगाकर स्तालिन की निन्दा की। उन्होंने यह घोषणा भी की कि अन्य त्रुटियों के अतिरिक्त स्तालिन का एक दोष यह भी था कि उन्होंने पार्टी के मुख्य सदस्यों के विरुद्ध मुकदमों में "सोशलिस्ट न्याय्यता" का पालन नहीं

किया। परन्तु ख्रुश्चेव ने उन हजारों व्यक्तियों का नाम तक न लिया जो "संशोधन आन्दोलन के मुकदमों" का शिकार हुए थे और उन्हें कठपुतली अदालतों ने सज़ाएं दी थीं।

ख्रुश्चेव के इन एलानों के पश्चात् सुप्रीम सोवियत ने विधि प्रोजेक्ट आयोग नियुक्त किया। उसे रूस में विधि तथा न्याय शासन के संशोधन का काम सौंपा गया। दिसम्बर, १९५८ में सुप्रीम सोवियत ने आयोग द्वारा निश्चित "मूल नियम" स्वीकार कर लिए। १९५९ में सोवियत यूनियन की अदालतें उनको कार्यान्वित करने लगीं, परन्तु इन पर अमल की हद प्रत्येक गणराज्य पर निर्भर थी।

नव दण्ड विधान का रूस से बाहर के जिन कानूनदानों ने अध्ययन किया है, वह उसमें कई त्रुटियां बताते हैं। रूस में ज्यूरी सिस्टम नहीं है। प्रायः कानून पढ़ा वकील ही अपराधी का कानूनी सलाहकार बन सकता है। परन्तु अदालत की आज्ञा से साधारण व्यक्ति भी कानूनी सलाहकार बन सकता है। किसी सोवियत नागरिक को अपराधी होने के शक पर ही बिना वारण्ट पकड़ा जा सकता है, मुकदमा चलाए बिना अथवा उसके विरुद्ध अपराधों की सूची दिए बिना ही उसे अनिश्चित काल के लिए कारावास में रखा जा सकता है, जब अपराधी बन्दी बना लिया गया हो तो उसका वकील उससे मिल तो सकता है परन्तु मुकदमें से पहले की खोज में भाग नहीं ले सकता।

४. जन-न्यायालयों का क्या अभिप्राय है ?

जन-न्यायालय ज़िला के सबसे छोटे न्यायालय होते हैं। इनके न्यायाधीशों को कानून और विधि का कोई ज्ञान नहीं होता। नशे में बदमस्ती के या पत्नी की मार-पीट के मुकदमें वही सुनते हैं। उनका सबसे महत्वपूर्ण तथा मुख्य कर्त्तव्य यह देखना है कि सरकारी प्रोग्राम (जैसे वार्षिक पैदावार का कोटा) स्थानीय स्तर पर पूरा होता रहे। इस प्रकार इनके अधिकार में ऐसे मुकदमें आते हैं "काम से बचना", "ग़ैर-जिम्मेदारी", "अनाज की चोरी" इत्यादि।

जन-न्यायालय ऐसे स्थानीय सरकारी कर्मचारियों पर भी मुकदमा चला सकते हैं जिन पर छल-कपट, सरकारी माल की चोरी, रुपया ऐंठने, रिकार्ड को भ्रष्ट करने और सरकारी संस्थानों के विरुद्ध अन्य आरोप हों। यदि जुर्म किसी उच्च अधिकारी ने किया हो तो मुकदमा प्रान्तीय अथवा प्रादेशिक न्यायालय के पास भेज दिया जाता है। या फिर यूनियन प्रजातन्त्र का सुप्रीम न्यायाधिकरण निर्णय करता है।

५. क्या सोवियत यूनियन के अतिरिक्त अन्य कम्यूनिस्ट देशों में भी जन-न्यायालय हैं ?

जन-न्यायालय लगभग सब कम्यूनिस्ट देशों में हैं। उत्तरी कोरिया और कम्यूनिस्ट चीन में भी हैं।

पूर्वी यूरोप में कम्यूनिस्टों के पदारूढ़ होते ही यह न्यायालय स्थापित कर दिए गए थे। उन्होंने केवल फासिस्टों ही पर मुकदमें नहीं चलाए बल्कि हजारों छोटे-बड़े जमींदारों, दुकानदारों तथा मध्यवर्ग के बहुत से व्यक्तियों को भी अत्याचार का निशाना बनाया और उन्हें भी कैद से लेकर फांसी तक के दण्ड दिए गए।

पिट्ठू देशों में जन-न्यायालयों के "न्याय" का निशाना बनने वालों में सोशलिस्ट कृषक और वे नागरिक शामिल थे जिन्हें कम्यूनिज्म के विरोधी समझा जाता था। उदाहरण के लिए बलगारिया में कम्यूनिस्टों के सत्ता प्राप्त कर लेने के पश्चात् ११,००० अभियुक्तों में "युद्ध अपराधी" बहुत कम थे। बड़ी संख्या उन लोगों की थी जिन्हें कम्यूनिस्ट परिभाषा में वर्गशत्रु कहा जाता है।

कम्यूनिस्ट चीन में "जन-न्यायाधिकरणों के आदेश से कम-से-कम पंद्रह लाख व्यक्तियों को फांसी पर चढ़ाया गया और कोई चार करोड़ अपनी धन सम्पत्ति से मुक्त कर दिए गए। प्रारम्भ में "वर्ग संघर्ष" केवल बड़े भूमिदारों और जागीरदारों तक ही सीमित था, परन्तु बाद में इसकी लपेट में वे किसान भी आ गए जिनके पास भूमि अधिक नहीं थी। तथाकथित जन-न्यायालयों ने "उन्हें" दूसरों के श्रम से अनुचित लाभ उठाने वाले वर्ग में शामिल कर दिया हालांकि वे बेचारे स्वयं ही अपने कुटुम्बियों की सहायता तथा सहयोग से खेती करते थे।

६. साधारण अपराधों के मुकदमों का निर्णय करने का अधिकार किन अदालतों को है ?

१९५९ के एक आदेशानुसार नाममात्र सहयोगी अदालतें स्थापित की गईं। साधारण अपराधों के मुकदमे सुनने का काम इन्हें सौंपा गया। जन न्यायालयों से इन अदालतों का स्तर छोटा था। यह अदालतें कारखानों और अन्य सरकारी संस्थानों, रिहाइशी मुहल्लों तथा ग्रामों में बैठती थीं।

इन अदालतों में न्याय करने वाले व्यक्तियों को न तो कानून का ज्ञान होता था और न ही उन्हें न्यायाधीश के कर्तव्य को पूरा करने की ट्रेनिंग मिली होती थी। अवैध कार्यवाइयों की एक लम्बी सूची थी जिनके अधीन पकड़े गये व्यक्ति

इन अदालतों में पेश किये जाते थे । जैसे काम में देरी और आलस्य, बिना कारण काम से अनुपस्थिति, छोटे पैमाने पर सरकारी सम्पत्ति का अनुचित प्रयोग, काम में अरुचि और "विफल काम" । अनुचित सामाजिक व्यवहार पर भी इन अदालतों में मुकदमा चलाया जाता था । जैसे गाली-गलौच, मार-पीट, सट्टा, काला व्यापार, नशे की बदमस्तियां इत्यादि आरोपों में पकड़े जाने पर मुकदमा इन्हीं अदालतों में पेश होता था ।

ये अदालतें डांट डपट, सौ रूबल तक जुर्माना, पदावनति तथा पदच्युत तक दंड दे सकती हैं । अभियोग बड़े हों तो मुकदमा जन-न्यायालयों में पेश कर दिया जाता है । "न्याय" के इस सिस्टम का प्रत्यक्ष रूप में अनुचित प्रयोग होता था ।

७. कम्यूनिस्ट दावा करते हैं कि सोवियत यूनियन में चोर और डाकू नहीं हैं । क्या यह बात सत्य है ?

द्वितीय महायुद्ध का जबसे अन्त हुआ है, इक्के दुक्के-चोरों, डाकुओं और संगठित अपराधी गुटों की चर्चा सोवियत समाचार पत्रों में प्रायः होती ही रहती हैं । सोवियत पत्र-पत्रिकाओं में ऐसे समाचार भी अधिक आ रहे हैं जिनमें सरकारी संस्थानों, उद्योगिक कारखानों के भ्रष्टाचार तथा अपराधी कार्रवाइयों का वर्णन होता है ।

करोड़ों रूबल का सरकारी माल प्रत्येक वर्ष चोरी होता है या अवैध कार्यविधियों से बेच दिया जाता है । ये अपराध धन के लोभ के कारण किये जाते हैं, जिसकी कम्यूनिस्ट निन्दा करते हैं । कुछ अवैध कार्रवाइयाँ इसलिए की जाती हैं कि अयोग्यता छिपी रहे, या उत्पादन लक्ष्य पूरा न होने की गल्ती पर पर्दा पड़ा रहे । भ्रष्टाचारी लोग कारखाने और फार्म का रिकार्ड बदल देते हैं ताकि यह व्यक्त हो कि पैदावारी कोटा पूरा हो गया है, जबकि वास्तव में पैदावार निर्धारित लक्ष्यों से कम होती है ।

नवयुवकों में अपराध वृत्ति (दंगा फसाद, उच्चकापन, मदिरापान इत्यादि) इतनी तेजी से बढ़ी है कि १९५५ और १९५६ में रूस में "पाप के विरुद्ध" अभियान चलाना पड़ा । नवयुवक गुण्डों में अधिकतर सरकारी अधिकारियों की सन्तान थी ।

८. कम्यूनिस्ट देशों में कानून भंग करने वालों पर कौन सा विभाग मुकदमा चलाता है ?

कानून भंग करने वालों पर मुकदमे चलाना न्याय-मंत्रालय की जिम्मेदारी है । १९५६ में यूनियन न्याय-मंत्रालय के कर्त्तव्य तथा अधिकार एक फरमान

द्वारा यूनियन के प्रदेशों के न्यायमंत्रियों को सौंप दिए गए। परन्तु इन नाममात्र "प्रजातांत्रिक" प्रदेशों के न्यायाधिकार दिए जाने से भी उनकी आन्तरिक स्वाधीनता में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई।

कम्यूनिस्ट जब किसी देश पर छा जाने का प्रयास करते हैं तो सबसे पहले उनकी नज़र न्यायमंत्री के पद पर पड़ती है। इस मंत्रालय पर अधिकार हो जाने से न्यायालयों पर इनका आधिपत्य हो जाता है। न्यायमंत्री कम्यूनिस्ट या इनका अनुयायी हो तो कम्यूनिस्ट पार्टी को अपने राजनीतिक विरोधियों पर हमला करने और उनको खत्म करने का अवसर मिल जाता है।

कम्यूनिस्टों के निकट दूसरा महत्वपूर्ण पद गृहमंत्री (अथवा प्रतिरक्षा मन्त्री) का है जो राजनीतिक या गुप्त पुलिस का अध्यक्ष होता है। कम्यूनिस्ट पार्टी के निर्देश के अधीन वह न्यायमंत्री को पूरा-पूरा सहयोग देता है।

९. क्या पिट्ठू देशों के न्यायालयों में न्यायविधि में अब कुछ परिवर्तन आए हैं?

पिट्ठू देशों में अदालतों में न्यायविधि इतनी कठोर नहीं रही। परन्तु स्तालिनी तरीके अभी तक प्रयोग होते हैं। सोवियत सेना ने जब हंगरी में जन-संग्राम की ज्वाला को ठण्डा किया तो मास्को के समर्थन के साथ कादर सरकार ने घोषणा की कि हंगरी के भूतपूर्व प्रधानमंत्री एम्रे नागी और उनके नज़दीकी सहयोगी स्वतंत्रता से रह सकते हैं, उन्हें कोई हानि नहीं होने दी जायगी। २६ नवम्बर, १९५६ को जब नागी बुडापेस्ट के युगोस्लाव दूतावास की शरण में थे तो कादर ने बयान दिया—"हम वचन देते हैं कि एम्रे नागी और उनके मित्रों के विरुद्ध उनके गत अपराधों के आधार पर कोई कार्रवाई करने का विचार नहीं है...हम अपने वचन पर स्थिर रहेंगे।"

इस प्रकार सब्ज़ बाग दिखाकर नागी को उनके आश्रय स्थान से निकाल लिया गया। तुरन्त ही सोवियत एजेंट उन्हें ले उड़े। कई मास तक तो कादर सरकार ने उनका पता-निशान ही न बताया। फिर १७ जून, १९५८ को घोषणा की कि नागी, जनरल पाल मालेटर और दो हंगेरियन पत्रकारों को मृत्युदण्ड दिया गया है। न्याय की इस दुर्गति पर संसार के कोने-कोने से रोष प्रकट किया गया। परन्तु ख्रुश्चेव ने इन सज़ाओं का समर्थन किया और कहा कि हंगरी के भूतपूर्व देशद्रोहियों पर अत्याचार बिल्कुल उचित था।

सातवां अध्याय

साम्यवाद का लौह आवरण

१. लौह आवरण और बाँस पट से क्या अभिप्राय है ?

लौह आवरण उन प्रतिबंधों का प्रतीक है जो यूरोप की साम्यवादी सरकारों—विशेषतया सोवियत संघ—ने अपनी जनता पर लगा रखे थे। ये सरकारें अपनी जनता और बाहरी दुनिया के पारस्परिक सम्बन्धों पर—चाहे वह विचारों का आदान-प्रदान हो या लोगों का आना-जाना—नियंत्रण रखना चाहती थीं। बांस पट भी ऐसे ही बंधन थे जिनके द्वारा उत्तरी कोरिया और चीन की साम्यवादी सरकारों ने अपनी जनता को बाह्य संसार से अलग-थलग रखना चाहा। अब ये बंधन उतने कठोर नहीं रहे।

सोवियत जनता को अपने ही देश में बंदी बनाये रखने वाले इन बंधनों को स्तालिन ने "सोवियत सामाजिक व्यवस्था" का नाम दे रखा था। किन्तु इसे केवल सामाजिक व्यवस्था कहना उचित न होगा। पूर्णतया सुरक्षित सीमाएँ और बन्दरगाहों पर पूरा नियंत्रण तो एक शृङ्खला की कड़ियाँ हैं जिसका उद्देश्य साम्यवादी व्यवस्था को किसी भी प्रतिकूल सम्भावना से अछूती रखना है। साम्यवादी सरकारें अपनी जनता को बाहरी दुनिया के बारे में केवल उतना ही पढ़ने, सुनने या जानने की इजाजत देती हैं जितना वे समझें।

१९५६ से रूस तथा पोलैंड में ये पाबंदियाँ उतनी कठोर नहीं रहीं। विदेशी संवाददाताओं पर सेंसर पहले से ढीला हो गया है। विदेशी प्रकाशन भी अधिक संख्या में प्राप्त होने लगे हैं।

२. सूचना स्वातंत्र्य के प्रतिबंध पर रूसी जनता की प्रतिक्रिया ?

सूचना प्रसार के सभी साधनों पर सोवियत सरकार का नियंत्रण होने के बावजूद भी यह स्पष्ट है कि सामूहिक रूप से वहाँ की जनता पार्टी प्रोपेगण्डा के प्रति उदासीन सी है।

१० जनवरी, [illegible] को सी० पी० एस० यू० की केन्द्रीय समिति ने एक प्रस्ताव पास किया कि सोवियत जीवन में अभी तक अराजनैतिक दृष्टिकोण का वैयक्तिक रूप से प्रचार हुआ है राष्ट्रवाद और विश्वैकतावाद का विष फैला हुआ है। अतीत के अवशेष बाकी हैं। इनमें मेहनत और फर्ज से जी चुराना, सरकारी सम्पत्ति की चोरी, नौकरशाही, भ्रष्टाचार, सट्टा, जी-हजूरीपन, बदमस्ती, गुण्डागिरी तथा अन्य बुराइयां—जिनका सोवियत समाज में कोई स्थान नहीं—फैली हुई हैं। इन त्रुटियों को दूर करने के लिए सतत प्रयास की आवश्यकता है। इसी प्रस्ताव में सी० पी० एस० यू० ने व्यवसायी प्रचारकों के नीरस और शुष्क भाषणों की भी कड़ी आलोचना की।

चालीस वरसों के निरन्तर प्रोपेगण्डा द्वारा भी सोवियत संघ नये समाजवादी मानव की रचना करने में सफल नहीं हुआ। रूस में भी समाज-विरोधी व्यवहार और आचरण की कमी नहीं है।

जनसाधारण में अब साम्यवाद और सरकार के प्रति विरोध का स्थान अनासक्ति ने ले लिया है। सोवियत संघ में भ्रमण करने वाले कुछ यात्रियों का कथन है कि सोवियत नागरिक समाचार, सूचना और प्रसारण की सच्चाई को परखने का कष्ट तक नहीं करते।

३. क्या अन्य साम्यवादी देशों में भी लौह आवरण ऐसा ही है जैसा कि सोवियत सघ में ?

सोवियत संघ हो या कोई अन्य साम्यवादी देश—लक्ष्य सभी का एक है और वह ये कि साम्यवादी देशों के नागरिक स्वतन्त्र संसार से किसी प्रकार का सम्पर्क न रखने पाएँ किन्तु साम्यवाद के पिट्ठू देश पश्चिमी यूरोप की सीमाओं के निकट हैं अतः वहाँ इन पाबंदियों को पूर्णतया लागू करना सरल नहीं। पश्चिमी देशों से प्रसारित होने वाले प्रोग्रामों को ये बंदी लोग बड़ी उत्सुकता से सुनते हैं हालांकि ऐसा करना भारी अपराध माना जाता है और पकड़े जाने पर कठोर दण्ड की व्यवस्था है। इन प्रोग्रामों को 'जाम' करने के लिए सोवियत सरकार काफी खर्च करती है। फरवरी, १९६० को सोवियत सरकार ने ब्रिटेन से रूसी भाषा में प्रसारण पर निषेध उठा लिया था। अमरीकी प्रसारण सोवियत संघ में अभी तक निषिद्ध हैं।

४. लौह आवरण के पीछे रहने वाली जनता को स्वतंत्र संसार से सम्पर्क क्यों नहीं रखने दिया जाता ?

लौह आवरण की पाबंदियों और मनाहियों का एक सीधा-सा कारण यह है कि साम्यवादी अधिकारी यह नहीं चाहते कि उनकी आधीन जनता सच्चाई को पहचान ले क्योंकि सत्य का आलोक होते ही उनकी मिथ्या प्रवंचनाओं के मिट जाने की आशंका है। एक कारण और भी है और उसका सम्बन्ध मार्क्स-लेनिन के साम्यवादी दृष्टिकोण से है। जब लौह आवरण से घिरे लोग कई साल तक केवल मार्क्सिज़्म-लेनिनिज़्म का पाठ पढ़ते और सुनते हैं तो एक समय वह भी आ जाता है जब—साम्यवादियों के तर्क के अनुसार—रूढ़ियाँ उनके सिद्धांत बन जाती हैं। सोवियत रूस के बारे में यह बात ज़्यादा लागू होती है लेकिन जिन देशों पर कम्यूनिस्ट आधिपत्य हुए अधिक समय नहीं हुआ है उनके बारे में ऐसा कहना ठीक नहीं।

५. क्या साम्यवादी देशों और अन्य देशों के बीच यात्रा की सुविधाएँ उपलब्ध हैं ?

सोवियत सरकार काफी संख्या में व्यापारिक तथा सांस्कृतिक शिष्टमंडल बाहर भेजती और अपने देश में बुलाती रहती है। वैज्ञानिक और टैक्नीकल शिष्टमण्डल बुलाने और भेजने में मास्को अधिक उत्सुकता दिखाता है। उनकी सदैव यह इच्छा रहती है कि ऐसे क्षेत्रों में जिनमें वे पिछड़े हुए हैं दूसरे देशों से अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त की जाए। साम्यवादी देशों से खेल-कूद की टीमें अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओं में प्रायः भाग लेती रहती हैं। रूस की ओपेरा पार्टियाँ भी विदेशों में अपनी कला प्रदर्शन के लिए जाती रहती हैं। सरकार की ओर से भेजे हुए शिष्टमण्डलों के इलावा सोवियत नागरिकों को अपने देश से बाहर जाने का अवसर बहुत कम मिलता है। साम्यवादी देशों के नागरिक स्वतंत्र देशों में स्वेच्छा से बेरोक-टोक नहीं जासकते। साम्यवादी देशों की ओर से लगाई गई पाबंदियों के कारण स्वतन्त्र देशों के नागरिक भी आज़ादी से इन देशों में नहीं जा सकते किन्तु अब यह प्रतिबंध पहले से कम कर दिये गये हैं।

१९५८ से रूस सरकार विदेशी यात्रियों को सोवियत संघ में आने के लिए प्रोत्साहित करने लगी है। सोवियत ट्रैवल एजेंसी इन हज़ारों यात्रियों को ऐसे स्थल देखने की सुविधाएँ देती है जो प्रोपेगण्डा के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैं किन्तु देश के बहुत बड़े हिस्से की यात्रा करना अब भी सहज नहीं।

६. क्या स्वतंत्र देशों की तरह साम्यवादी देशों की जनता को भी अपनी रुचि के अनुसार विदेशी समाचारपत्र पढ़ने, रेडियो सुनने और टेलीवीज़न देखने का अवसर मिलता है ?

साम्यवादी देशों के नागरिकों के सामने हर सूचना सेंसर और नियंत्रण से छन कर आती है। रेडियो स्टेशन भी सरकारी प्रोपेगण्डा के साधन हैं तथा वही सूचनाएँ व समाचर प्रसारित करते हैं जो सरकार चाहे। समाचार और सूचना प्राप्ति के विदेशी साधनों तक, स्वतंत्र रूप से उनकी पहुँच ही नहीं है।

७. क्या साम्यवादी देशों में समाचारपत्रों को स्वतंत्रता प्राप्त है ?

नहीं ! प्रेस की आज़ादी के सवाल का साम्यवादी जवाब लेनिन ने इन शब्दों में दिया था : "मुद्रण व प्रकाशन की सभी सामयिक तथा गैर सामयिक संस्थाओं पर कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति का नियंत्रण होना चाहिए चाहे उस समय पार्टी स्वयं वैधानिक हो या अवैधानिक। प्रकाशनगृहों को कोई ऐसी नीति अपनाने का अधिकार नहीं होना चाहिए जो पार्टी के अनुकूल न हो।"

साम्यवादी देशों में प्रेस पर तो पार्टी का पूरा-पूरा नियन्त्रण है ही। लौह आवरण के बाहर भी जो कम्यूनिस्ट पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित होती हैं, मास्को नीति की ही प्रतिध्वनि हैं। साम्यवादी चीन और कोरिया में तो प्रेस की स्वतंत्रता का सवाल ही नहीं उठता। साम्यवादी देशों में इस कड़े नियन्त्रण का शिकार सिर्फ प्रैस ही नहीं, रेडियो और टेलीवीज़न भी हो चुके हैं।

८. क्या साम्यवाद में सांस्कृतिक गतिविधियों पर भी सेंसरशिप की छाप है ?

'समाजवादी यथार्थवाद' के नाम पर तमाम सांस्कृतिक गतिविधियों पर सेंसरशिप और पार्टी की कड़ी नज़र रहती है। बड़े सोवियत इनसाईक्लोपीडिया ने "समाजवादी यथार्थवाद" की परिभाषा इस प्रकार की है। "समाजवादी यथार्थवाद" जीवन को कला के रूप में प्रतिबिम्बित करने का साधन है। क्रांतिकारी विकास का सही रूप प्रकट करना ही इसका उद्देश्य है। साहित्य की मांग यह है कि नई पीढ़ी अर्थात् समाजवादी समाज के जन्मदाताओं की एक तस्वीर खींची जाए जिनमें साम्यवाद के लिए उनके अथक संघर्ष का सही चित्र हो।

इस दृष्टिकोण के प्रमाणस्वरूप घटिया प्रकार की रचनाओं के ढेर लग गए। पार्टी, स्टेट और जीवन के साम्यवादी पहलू के प्रचार से अधिक इन रचनाओं का कोई मूल्य नहीं।

"समाजवादी यथार्थवाद" का सबसे कम प्रभाव बैले और अन्य नृत्यों पर पड़ा है। कला की दृष्टि से रूस में इनका स्तर बहुत ऊँचा है। सोवियत संगीत भी "समाजवादी यथार्थवाद" से अछूता बच सका है। इसीलिए अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त सोवियत संगीतज्ञ बरसों तक कड़ी आलोचना के भागी रहे कि उनकी रचनाएं सामान्य जीवन का सही चित्रण करने में असफल रही हैं। १९५८ में पार्टी ने कुछ प्रसिद्ध संगीतज्ञों को "पुनः स्थापित" किया। इनमें शोस्टाकोविच, प्रोकोफीव और खाचाटोरिया भी शामिल हैं और अब उन्हें डराया-धमकाया नहीं जाता।

कुछ गिने-चुने लेखक ऐसे भी थे जिन्होंने "समाजवादी यथार्थवाद" से दूर रहना चाहा। फलस्वरूप उनकी झोली में अधिक निरादर और फटकार पड़ी। १९५३ में स्तालिन की मृत्यु के पश्चात् कई लेखकों की क़लम ने पुराने निषेधों के बांध तोड़ कर एक नई, आज़ाद और रचनात्मक विचारधारा को जन्म दिया। इस सम्बन्ध में अहरनबर्ग के नावल "बर्फ़ पिघलती है" ने पथ-प्रदर्शन किया। पार्टी अधिकृत लेखक यूनियन ने इसका बहुत विरोध किया। डूडनिस्टेव का उपन्यास "केवल रोटी ही से नहीं" ने भी प्रचलित धारा का खण्डन किया। पार्टी के रूढ़िवादी आलोचकों ने इस पुस्तक को भी आड़े हाथों लिया। कथा-साहित्य में सबसे अधिक विवादास्पद पुस्तक कवि बोरिस पास्तरनक की "डाक्टर ज़िवागो" थी। यह १९५८ में इटली से प्रकाशित हुई। रूस में तो इसे शीघ्र ही ज़ब्त कर लिया गया किन्तु अन्य देशों में यह पुस्तक बहुत अधिक संख्या में प्रकाशित हुई और पढ़ी गई। अक्तूबर १९५८ में पास्तरनक को साहित्य का नोबिल पुरस्कार दिया गया। इस सम्मान पर सी० पी० एस० यू० और लेखकों की यूनियन ने खूब रोष उगला।

१९५९ में सी० पी० एस० यू० और पिट्ठू देशों की कम्यूनिस्ट पार्टियों ने प्रचलित प्रथाओं के विरुद्ध फूटती हुई खंडन की प्रबल लहरों को बहुत रोकना चाहा। कथा-साहित्य, आलोचना, नाटक या साहित्य के सभी क्षेत्रों को पार्टी की ओर से निर्धारित सीमाओं में बाँधने की कोशिश की गई। अब नई धारा सिर्फ़ पोलैण्ड में ही जीवित रह पाई है। हंगरी तथा चैकोस्लोवाकिया में उभरते हुए विद्रोही साहित्यिक आँदोलन बेरहमी से कुचल दिए गए। साम्यवादी चीन और उत्तरी वीयतनाम में भी कुछ दिनों के लिए पार्टी लाइन के प्रतिकूल साहित्य की रचना की गई किन्तु इसे सहन नहीं किया गया और १९५९ में नवचिन्तन के इन सुकुमार पुष्पों को निर्दयता से मसल दिया गया।

आठवां अध्याय

कम्यूनिज़्म और धर्म

१. क्या कम्यूनिस्ट देशों में धर्म का कोई अस्तित्व है ?

कम्यूनिस्ट सरकारें निरन्तर ऐसे प्रयोजन करती रहती हैं जिनसे जनता के धार्मिक विश्वास कमज़ोर पड़ जाएं और अन्त में दम तोड़ दें। परन्तु इनके ये प्रयास अभी पूरी तरह सफल नहीं हुए। कम्यूनिज़्म के अधीन जनसाधारण की धार्मिक निष्ठा अभी तक बनी हुई है।

बौद्ध, इस्लाम और ईसाई धर्मों के अनुयायी कम्यूनिस्ट देशों में आज भी करोड़ों की संख्या में मौजूद हैं। परन्तु कलीसा अब इतनी शक्तिशाली और संगठित संस्था नहीं रहा। धार्मिक नेता—पादरी और कलीसा के अन्य कार्य-कर्ता—नास्तिक कम्यूनिस्ट सरकारों के हाथों कठोर से कठोर अत्याचार सहन करते रहते हैं।

१९१८ से लेकर अब तक हज़ारों पादरी, भिक्षु, मौलवी इत्यादि बेगार के कैम्पों में भेजे जा चुके हैं या मौत के घाट उतारे जा चुके हैं। धर्म के आधार पर अत्याचार का सिलसिला अब रूस में खत्म हो चुका है परन्तु चीन में बहुत बढ़ गया है।

२. कम्यूनिस्ट धर्म को मिटाना क्यों चाहते हैं ?

कम्यूनिस्ट शासक इस नियम को नहीं मानते : "जो सीज़र का हक़ है सीज़र को, और जो ईश्वर का हक़ है ईश्वर को दो।" वे तो अन्धविश्वास और पूर्ण निष्ठा माँगते हैं जिसकी पात्र केवल कम्यूनिस्ट पार्टी अर्थात् कम्यूनिस्ट प्रणाली हो। धर्म चूंकि यह सिखाता है कि ईश्वरीय शक्ति अन्य सब शक्तियों से बड़ी है और उसका शासन सर्वोत्तम है, इसलिए कम्यूनिस्ट धर्म को सिरे से ही मिटा देने पर तत्पर हैं।

कम्यूनिस्ट की मज़हब से दुश्मनी का एक कारण यह भी है कि प्रारम्भ में जब कम्यूनिस्टों ने शासन संभाला तो गिरजाघरों की जायदाद में उन्हें आमदनी

के नए साधन नज़र आए, धन की उन्हें आवश्यकता थी। उन्होंने तुरन्त ही उन ज़ायदादों पर कब्ज़ा कर लिया। बहाना यह बनाया गया कि वह कम्यूनिस्ट देशों को "जनता की अफ्यून" (जो इनकी परिभाषा में धर्म का दूसरा नाम है) से मुक्ति दिला रहे हैं।

३. जब कम्यूनिस्ट धर्म को ख़त्म करने पर तुले हुए हैं तो कम्यूनिज़्म के अधीन जनता का धर्म आखिर क्या है ?

कम्यूनिस्ट देशों के लोग अभी तक एक सर्वोच्च शक्ति में विश्वास रखते हैं। कम्यूनिस्ट वहां की कुल आबादी का आंशिक भाग हैं। फिर जहाँ तक धर्मनिष्ठा का सम्बन्ध है, कम्यूनिस्टों में भी मतभेद हैं। उन्हीं में एक छोटा-सा ग्रुप ऐसा है जो मार्क्सी-लेनिनी सिद्धान्तों पर अटूट विश्वास रखता है उसका ईमान है कि इन पर अमल से ही जनता की हालत सुधर सकती है।

कम्यूनिस्टों की बड़ी संख्या इस बात पर विश्वास रखती है कि पार्टी के प्रति, पूर्ण और अपार भक्ति ही से शक्ति और समृद्धि के आकाश तक पहुँचा जा सकता है।

४. कम्यूनिस्ट किस धर्म को मानते हैं ?

किसी को भी नहीं। धर्म की आम परिभाषा यह है कि ईश्वर या देवता की भक्ति की जाए। कम्यूनिस्ट अपने आपको नास्तिक कहते हैं। वे ईश्वर के अस्तित्व से ही मुनकर हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी के नेताओं ने पार्टी के मेम्बरों को यह काम सौंप रखा है कि धर्म के विरुद्ध संघर्ष जारी रखें।

५. क्या सोवियत रूस में गिरजा और मन्दिर हैं ? क्या वहां पूजापाठ किए जाते है ?

भगवान् की वन्दना तथा पूजापाठ के लिए वहाँ गिरजा और कलीसा, मस्जिदें और मन्दिर तो हैं परन्तु बोलशेविक क्रान्ति से पहले के मुकाबले में उनकी संख्या बहुत कम रह गई है। बहुत से नए नगरों में जैसे मैगनी टोगोरस्क और स्टालिनस्क (जिनकी आबादी दो लाख है) और करागंडा, (आबादी एक लाख बीस हज़ार) एक भी धर्म स्थान नहीं है।

शहरों में धार्मिक विधियों और पूजा-पाठ को अब कम्यूनिस्ट सहन कर लेते हैं। परन्तु ग्रामीण जनता को पूजा-पाठ के लिए बहुत-सी बाधाओं का सामना करना पड़ता है। जो लोग धार्मिक गतिविधियों में बढ़-चढ़ कर भाग लेते हैं, गुप्त पुलिस उनपर नज़र रखती है। भक्तजनों को कई प्रकार के

आरोप (जैसे मिथ्या विश्वास फैलाने या देशद्रोही कार्यवाहियां इत्यादि) लगा कर पकड़ लिया जाता है।

६. कम्यूनिस्ट सबसे अधिक घृणा किस धर्म से करते हैं ?

कम्यूनिस्ट सरकारें सभी धर्मों के अनुयायियों पर अत्याचार करती हैं। बाल्टिक प्रदेशों में और पूर्वी यूरोप के पिट्ठू देशों में धर्म-द्रोही आन्दोलनों का विशेष निशाना रोमन कैथोलिक, प्रौटेस्टेण्ट और ग्रीक आर्थोडाक्स चर्च रहे हैं। मध्य एशिया और कम्यूनिस्ट दूर पूर्व में धर्म के कारण अत्याचार सहने वालों में मुसलमान, बौद्ध और ईसाई शामिल हैं।

७. धार्मिक विचार रखने वाले लोगों से कम्यूनिस्ट कैसा व्यवहार करते हैं ?

जिन लोगों के धार्मिक विचार स्पष्ट हैं, उन्हें सरकार शक की निगाह से देखती है। यद्यपि यह आवश्यक नहीं कि धार्मिक विचारों की घोषणा के फल-स्वरूप उन्हें गिरफ्तारी या अत्याचार का सामना करना पड़े। अच्छे वेतन या महत्वपूर्ण पद ऐसे व्यक्तियों को, प्रायः नहीं दिए जाते।

कम्यूनिस्ट चीन में विदेशी धर्म-प्रचारकों पर घोर अत्याचार होते रहे हैं। अब पेकिंग सरकार धार्मिक सम्प्रदायों के स्थानीय सदस्यों के विरुद्ध आन्दोलन चला रही है। उन पर दोष यह बताया जाता है कि वह क्रांति विद्रोही कार्य-विधियों में भाग लेते हैं।

संसार भर में कम्यूनिस्ट पार्टियों के मेम्बरों को यह आदेश दिया गया है कि वे धर्म-विरोधी आन्दोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लें। उन यूरोपीय देशों में जहां कम्यूनिस्ट शासन है, धर्म-विरोधी आन्दोलनों का इतना प्रभाव पड़ा है कि धर्म स्थानों का खुले तौर पर उपहास उड़ाया जाता है। धार्मिक विचार रखने वाले बालिग़ों को कभी-कभी अपमानित किया जाता है, उनके बच्चों के साथ अध्यापक और स्कूल के अन्य कम्यूनिस्ट अधिकारी अछूतों का-सा व्यवहार करते हैं।

१९३६ में सोवियत संविधान में पूजा-पाठ इत्यादि की आज़ादी और धर्म-विरोधी प्रचार के अधिकार स्वीकार किए गए हैं। परन्तु धार्मिक आज़ादी से सम्बन्धित अभिलेख की जो व्याख्या की गई है उसके अनुसार धार्मिक स्वतंत्रता 'पूजा-पाठ' तक ही सीमित हो गई है। "उनको आवश्यक पूजा-पाठ की आज़ादी है, इससे अधिक धार्मिक सरगर्मियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है।" इस प्रकार धार्मिक संस्थाओं द्वारा जन-कल्याण और शिक्षा प्रचार तथा विस्तार के कार्यों का प्रश्न ही नहीं उठता।

८. क्या धार्मिक प्रचारकों अथवा पादरियों के लिए कानूनी बाधा नियुक्त हैं ?

१९३६ में संविधान के लागू होने के बाद से रूस में आर्थोडाक्स चर्च के पादरियों पर कानूनी प्रतिबन्ध नहीं है परन्तु कम्यूनिस्ट पार्टी धर्म के विरुद्ध निरन्तर संघर्ष करती रहती है ताकि नई पीढ़ी धर्म के प्रभाव से सुरक्षित रहे। १९४१ के बाद सोवियत यूनियन में सरकार की कलीसा पर कृपादृष्टि रही है। इसके बदले में कलीसा देश के भीतर और बाहर सरकार का समर्थन करता रहता है। परन्तु इस पर भी कम्यूनिस्ट सन्तुष्ट नहीं हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी के १९५४ के निर्देश के अनुसार सब धर्मों के विरुद्ध संघर्ष तेज़ कर दिया गया है।

आर्थोडाक्स चर्च के वर्तमान लोक समर्थन को भी पार्टी इसलिए सहन कर रही है क्योंकि उसे विश्वास है कि वृद्ध पीढ़ी, जिसमें धर्मनिष्ठा दृढ़ है, शीघ्र ही ख़त्म हो जाएगी और नई पीढ़ियां पूर्णरूप से भौतिकवादी होंगी।

पूर्वी यूरोप में हज़ारों पादरी बन्दी बनाए जा चुके हैं। बहुत से पादरी सरकार द्वारा "देशद्रोही कार्यवाहियों" के दोष में मौत के मुंह में पहुँच चुके हैं। १९५६ में पिट्ठू सरकारों ने कुछ राजनीतिक बन्दियों की रिहाई की घोषणा की थी, परन्तु बहुत से धार्मिक नेता अभी तक जेलों या अपने ही घरों में क़ैद थे।

पोलैंड और हंगरी के उपद्रव के पश्चात् २८ अक्तूबर को पोलिश पादरी कार्डीनल अस्टीफान वज़ीफिस्की को कारावास से स्वतन्त्र किया गया। उन्होंने तीन वर्ष तक कारावास में अत्याचार सहन किए। हंगरी में कार्डीनल जोज़फ मिंडज़ैण्टी को आठ वर्ष की क़ैद के पश्चात् घर जाना नसीब हुआ। ३ नवम्बर को जब सोवियत सेना ने बुडापेस्ट पर कब्ज़ा किया तो कार्डीनल मैंडजैण्टी ने अमरीकी दूतावास में शरण ली।

९. क्या कम्यूनिस्ट सरकारें पादरियों और अन्य कलीसाई अधिकारियों की नियुक्ति में हस्तक्षेप करती हैं ?

तमाम कम्यूनिस्ट सरकारें कलीसाई संस्थाओं, पादरियों और उनके संघटनों पर कभी थोड़ा और कभी अधिक नियन्त्रण रखती हैं।

जैसे चेकोस्लोवाकिया में मई, १९५० में आदेश दिया गया जिसके अनुसार सब प्रदेशों में धार्मिक जीवन तथा कलीसाई के मामलों की निगरानी लोक समितियों की कलीसा कमेटियों का उत्तरदायित्व घोषित कर दी गई। ये कमेटियाँ चेक कम्यूनिस्ट पार्टी का दुमछल्ला हैं।

ये कलीसाई विभाग कलीसाई जायदाद की निगरानी करते हैं। धार्मिक सभाओं और संस्थाओं पर इनका पूर्ण नियन्त्रण होता है। वित्त सम्बन्धी मामले भी इन्हीं के हाथ में होते हैं। पादरियों और कलीसा के अन्य कर्मचारियों को वेतन इत्यादि भी यही देते हैं और उनकी उन्नति इत्यादि का निर्णय करते हैं।

जिन धार्मिक नेताओं को अपनी आध्यात्मिक जिम्मेदारियों का एहसास है वह वास्तव में कम्यूनिस्ट सरकारों का समर्थन नहीं करते। परन्तु कम्यूनिस्ट देशों में ऐसी धार्मिक कठपुतलियां भी मौजूद हैं जो कम्यूनिस्टों की हाँ में हाँ मिलाती रहती हैं और प्रत्येक रूप से उन्हें अपना सहयोग देती हैं।

जैसे रूस में आर्थोडाक्स चर्च के कुछ मुख्य पादरी ऐसे भी हैं जो सरकारी प्रचार करते हैं और सोवियत यूनियन की विदेश नीतियों का पक्ष लेते हैं। पूर्वी यूरोप (विशेषतया हंगरी में) नाममात्र "शान्ति के पादरी" सरगर्म हैं। उनके अपने चर्च ने उनका वहिष्कार कर दिया है। वह वड़ी लगन से "शांति आंदोलन" में काम करते हैं जो कम्यूनिस्टों का ही एक मोर्चा है। चर्च से निकाले गए कुछ कैथोलिक कम्यूनिस्ट चीन में भी हैं जो कम्यूनिस्ट पार्टी के पिट्ठू वने हुए हैं। कुछ ऐसे भी हैं जो अन्दर ही अन्दर कम्यूनिज़्म के समर्थक हैं। सोवियत मध्य एशिया में कुछ पाखण्डी मुसलमान पादरी भी इस प्रकार के काम में लगे हुए हैं।

१०. क्या धर्म के अनुयायी माता-पिता को कम्यूनिज़्म के अधीन दण्ड दिया जाता है ?

यदि माता-पिता अपने वच्चों को घरों में धार्मिक शिक्षा दें तो उन्हें प्रत्यक्ष रूप में कोई सज़ा नहीं दी जाती परन्तु कम्यूनिस्ट सरकारें यह कोशिश अवश्य करती हैं कि वच्चे स्वयं ही अपने माता-पिता के प्रभाव पर काबू पा लें। सोवियत युवकों की सरकारी पत्रिका "मोलोडोई कम्यूनिस्ट" में अक्तूवर १९५५ में एक लेख प्रकाशित हुआ जिसका शीर्षक था "वच्चों का परिवार के धार्मिक प्रभाव से वचाव।" लेखक ने रूसी संविधान के अनुच्छेद १२४ का संकेत (जिसमें "मानसिक स्वतन्त्रता की ज़मानत" दी गई है) देकर लिखा : "सव नागरिकों को पूर्ण अधिकार है कि चाहें तो किसी धर्म के अनुयायी रहें वरना धर्म-विरोधी प्रचार जारी रखें।"

इसके पश्चात् लेखक ने व्याख्या की : 'हमारे देश में मानसिक स्वतंत्रा का अर्थ ईश्वर भक्तों के लिए स्वतंत्रता के इलावा यह भी है कि नास्तिकों को भी

वैज्ञानिक तथा भौतिक ज्ञान के पक्ष में प्रचार करने की आज़ादी है।" इसी लेख के अन्त में लिखा है कि यदि माता-पिता यह कोशिश करते हैं कि उनके बच्चे धर्म-विरोधी प्रचार से सुरक्षित रहें तो उनका यह काम वास्तव में "मानसिक स्वतन्त्रता" के नियम का उल्लंघन है। इस सरकारी पत्रिका ने अन्त में लिखा है कि : "परिवार में बच्चों की समाज-विरोधीतथा धार्मिक शिक्षा के लिए माता-पिता को दण्ड मिलना चाहिए। माता-पिता की यह जिम्मेदारी केवल नैतिक ही नहीं बल्कि यदि राज्य चाहे तो वैधानिक भी होनी चाहिए।"

इस सरकारी लेख में स्पष्ट शब्दों में जता दिया गया है कि यदि वर्तमान मंद धार्मिक चेतना जारी रही तो धर्म अनुयायी माता-पिता के विरुद्ध वैधानिक कार्रवाई करने पर विचार किया जाएगा।

११. सोवियत रूस में पादरियों का सामाजिक स्तर क्या है ?

आर्थोडाक्स पादरी अपनी धार्मिक विधियों की पूर्ति के लिए यों भी कम्यूनिस्टों के मुहताज हैं क्योंकि स्थानीय सोवियत समिति यदि चाहे तो गिर्जे को खाली करा सकती है। पूजा-पाठ के लिए स्थान प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि कम से कम बीस भक्त मिलकर एक धार्मिक संस्था बनाएँ और उसे स्थानीय सोवियत में रजिस्टर्ड कराएँ। इसके पश्चात् ही सोवियत उन्हें गिर्जा के स्थापन की आज्ञा देगी। यह आज्ञा भी समय-समय पर फिर से लेनी पड़ती है। स्थानीय सोवियत ये आज्ञा पत्र फिर देने से इन्कार भी कर सकती है।

रूसी आर्थोडाक्स चर्च के पादरियों के अतिरिक्त दूसरे धर्म (जिनमें मुसलमान, यहूदी और वे ईसाई शामिल हैं जो आर्थोडॉक्स नहीं हैं) के आध्यात्मिक गुरु भी सोवियत यूनियन में धार्मिक संस्कार करते रहते हैं। परन्तु एक तो उनकी संख्या बहुत कम है, दूसरे उन्हें यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि सोवियत यूनियन की नीतियों की ज़रा भी आलोचना न होने पाये।

१२. क्या कम्यूनिस्ट धर्म को नशा समझते हैं ?

लेनिन ने कहा था कि मार्क्स का यह कथन कि "धर्म जनता के लिए अफ्यून है धर्म के विषय में मार्क्सी दृष्टिकोण का आधार है।"

२२ सितम्बर, १९५५ को, जब फ्रांस के कुछ महापुरुष मास्को के दौरे पर आए हुए थे, तो सोवियत कम्यूनिस्ट पार्टी के नेता निकिता ख्रुश्चेव ने फ्रांस की राष्ट्रीय विधान सभा के प्रधान को बताया : "कम्यूनिज़्म ने धर्म के प्रति अपना दृष्टिकोण नहीं बदला। हम कोशिश करते हैं कि धर्म की अफ्यून का जादू भरा नशा उतर जाए।"

१३. क्या कम्यूनिस्ट कलीसाओं और अन्य धर्म स्थानों की जायदाद पर स्वयं कब्जा कर लेते हैं ?

रूस में सरकार ने कलीसाई जायदादों का प्रवंध अपने हाथ में ले रखा है। दूसरे कम्यूनिस्ट देशों में कलीसाई जायदाद नाममात्र की चर्च की मिल्कियत है परन्तु उसका प्रवंध सरकार द्वारा ही किया जाता है। कलीसाई जागीरें ज़ब्त कर ली गई हैं। हाँ, कहीं-कहीं छोटे-छोटे टुकड़े पादरियों की निजी आवश्यकता के लिए छोड़ दिये गये हैं।

केवल एक सोवियत प्रजातंत्र में ही १९२१-२३ में ७२२ खानकाहें बंद कर दी गई थीं। इनका सारा सामान—धार्मिक पुस्तकें और अन्य सामान सरकार ने जब्त कर लिया।

१४. बौद्धों के साथ कम्यूनिस्टों का व्यवहार कैसा रहा है ?

१९४३ में स्टालिन ने एक आदेश द्वारा वालगा के कालमक क्षेत्र की स्वतंत्रता को खत्म कर दिया। इसके बौद्धवासियों की बड़ी संख्या को अज्ञात प्रदेशों में भेज दिया गया।

कम्यूनिस्ट चीन में बौद्ध पुजारियों को विवश किया जाता है कि अनपढ़, मूढ़ और नास्तिक कम्यूनिस्ट प्रचारकों के भाषण सुनें। शहरों में रहने वाले बौद्ध पुजारी जीविका के तमाम साधनों से वंचित कर दिए गये हैं। वे हारकर थोड़ी उज़रत के शारीरिक काम करने पर विवश हो गये हैं।

तिब्बत में मठ तोड़ दिए गये हैं। अब उन्होंने मठों और भिक्षुओं को खत्म करने का आंदोलन चला रखा है। (पहला अध्याय देखिए)।

१५. धर्म के विनाश के लिए कम्यूनिस्ट क्या चालें चलते हैं ?

धर्म पर आक्रमण के लिए कम्यूनिस्ट नित नई बातें प्रयोग में लाते हैं। वह धार्मिक स्थानों को ज़ब्त कर लेते हैं और उनकी आय के साधन बंद कर देते हैं। इस प्रकार धार्मिक संस्थाओं की आर्थिक स्थिति को बिगाड़ देते हैं। प्रकाशन के साधनों पर और कागज़ पर उनका पूरा कण्ट्रोल होता है। वह जब चाहें प्रकाशित साहित्य की बिक्री रोक सकते हैं।

धार्मिक शिक्षा पर कम्यूनिस्ट दो ओर से हमला करते हैं। एक ओर उन्होंने प्राइवेट धार्मिक स्कूलों को बंद कर दिया है, दूसरी ओर धार्मिक पाठशालाओं और प्रशिक्षण केन्द्रों का प्रवंध अपने हाथ में ले लिया है। सरकारी शिक्षा-प्रणाली तो धर्म विरोधी होती ही है।

धार्मिक नेताओं को कम्यूनिस्ट सरकारें गिरफ्तार भी करती हैं, जेलों में भी ठूंसती हैं परन्तु धार्मिक विचारों के कारण नहीं। प्रायः उन पर जो आरोप लगाये जाते हैं, वे हैं—जासूसी, चोर बाज़ार का सट्टा, कलीसाई माल में हेर-फेर इत्यादि। ये झूठे आरोप इसलिए भी लगाये जाते हैं कि कलीसाई नेता अपने अनुयाइयों की नज़रों में गिर जाएं। इन मुकदमों का एक अभिप्राय यह भी होता है कि स्वतंत्र संसार धोखे में आ जाए और यह न जान सके कि कम्यूनिस्टों का असली अभिप्राय धर्म का विनाश है।

कम्यूनिस्ट युवकों की संस्थाओं और पार्टी के मेम्बरों को उकसाया जाता है कि धर्म के विरुद्ध सदा ही लड़ते रहें। "नास्तिक संस्थाएं" बहुत से कम्यूनिस्ट देशों में धर्म-विरोधी आन्दोलन बड़े ज़ोर-शोर से चलाती रहती हैं।

मई, १९५७ में सी० पी० एस० यू० ने मास्को में नास्तिकों की कांफ्रेंस की। इसमें कोई २५० धर्मविरोधी प्रचारक एकत्रित हुए। कांफ्रेंस के अन्त के पश्चात् "लड़ाके नास्तिकों की संस्था" जो १९४१ में तोड़ी जा चुकी थी, फिर मैदान में आ गई।

१९५७ ही में स्टेट ने ओडीसा में नास्तिकों का घर बनाया। यह पहली संस्था थी यहाँ नास्तिकता के प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया गया। १९५८ में "नास्तिकता का विश्वविद्यालय" इश्काबाद तुर्कमानिस्तान में स्थापित किया गया। इसी प्रकार का एक और विद्यालय लेनिनग्राड में भी खोला गया। १९५९-६० में ऐसे और भी स्कूल स्थापित किए गए।

१६. क्या कम्यूनिस्ट ब्लाक से बाहर के देशों में कम्यूनिस्ट धर्म-विरोधी भावनाओं को उत्तेजित करते हैं ?

धर्म को हानि पहुँचाने का कोई अवसर कम्यूनिस्ट नहीं छोड़ते। वे कभी प्रत्यक्ष रूप से आक्रमण करते हैं, कभी छिप कर वार करते हैं। पिछड़े हुए देशों में उनका आन्दोलन अधिक शक्तिशाली होता है। उन स्थानीय स्कूलों में भी धर्मविरोध की अग्नि प्रचण्ड हो उठती है जहाँ अध्यापक कम्यूनिस्टों के समर्थक या सहचर हों।

भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी ने जब केरल प्रदेश में शासन संभाला तो कम्यूनिस्ट सरकार ने सबसे पहले शिक्षा विभाग की ओर ध्यान दिया। उसने पाठ्यक्रम में ऐसी पुस्तकें शामिल कीं जो कम्यूनिज़्म की ओर झुकाव पैदा करें। १९५९ के आरम्भ में एक शिक्षा बिल पेश हुआ जिससे पूर्ण शिक्षा

प्रणाली पर कम्यूनिस्टों का कंट्रोल हो जाता। धार्मिक स्कूल भी इसके प्रभाव से सुरक्षित न रह पाते। कम्यूनिस्टों का विचार ऐसी शिक्षा प्रणाली चालू करने का था जो केवल कम्यूनिज़्म का पक्ष पात करती ताकि धार्मिक शिक्षा का धीरे-धीरे एक चिन्ह भी न रहता। इस शिक्षा बिल के विरुद्ध ऐसा तूफ़ान उठा कि ३१ जुलाई, १९५९ को केन्द्रीय सरकार ने केरल सरकार को पदच्युत कर दिया। केरल सरकार की सर्वाधिकारी प्रवृत्ति इसी से स्पष्ट हो गई थी। वह स्कूलों की आड़ लेकर अपने विरोधियों को बलहीन बना कर उनका विनाश करना चाहती थी।

१७. कम्यूनिज़्म से सुरक्षा के लिए धार्मिक नेता क्या कुछ कर सकते हैं ?

जब कम्यूनिस्ट चोरी छिपे या खुले तौर पर जनता को पथभ्रष्ट करें तो धार्मिक नेताओं का कर्त्तव्य है कि चाहे वे किसी धर्म के भी अनुयायी हों, इकट्ठे हो जाएँ और जनता को कम्यूनिज़्म के खतरों से परिचित करें। धर्म सार्वजनिक आवश्यकता है। कम्यूनिस्ट अत्याचार का इतिहास गवाही देता है कि धर्म के प्रति निष्ठा को मानव से पृथक् नहीं किया जा सकता। इसलिए शासन पर कम्यूनिस्टों का कब्ज़ा होने के बाद भी धार्मिक गुरु मानव की आध्यात्मिक आवश्यकताओं को पूरा कर सकते हैं।

धर्म कम्यूनिज़्म के विस्तार के विरुद्ध प्रतिरक्षा का महान् और शक्तिशाली साधन है और इसके विस्तार को सफलतापूर्वक रोक सकता है। इतिहास बताता है कि संगठित नास्तिकता कभी अधिक समय तक जीवित नहीं रही।

नवाँ अध्याय

कम्यूनिज़्म के अधीन शिक्षा प्रणाली

१. सोवियत यूनियन में शिक्षा का वैधानिक आधार क्या है ?

१९३६ के सोवियत संविधान में सब नागरिकों को शिक्षा प्राप्त करने के समान अधिकार दिए गए हैं। संविधान में लिखा है :

"रूस के सब नागरिकों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। संविधान में इस अधिकार के संरक्षक के लिए ये सुविधाएं दी गई हैं : अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा, सात वर्ष तक मुफ़्त शिक्षा, महाविद्यालयों में योग्य विद्यार्थियों के लिए वज़ीफ़े, प्रादेशिक भाषायें शिक्षा का माध्यम, कारखानों, स्टेट फार्मों में मज़दूरों का व्यवसायिक प्रशिक्षण तथा कृषि सम्बन्धी शिक्षा का मुफ़्त प्रबंध।

सोवियत रूस की कम्यूनिस्ट पार्टी ने अपनी उन्नीसवीं कांफ्रेंस में आदेश दिया था कि सप्तवर्षीय पाठ्यक्रम के स्थान पर दस वर्षीय पाठ्यक्रम की नई योजना लागू होने से पहले ही नवम्बर, १९५८ में एक और योजना बन गई जिसमें सुझाव दिया गया था कि समूची शिक्षा प्रणाली का पुनर्गठन किया जाए और अनिवार्य शिक्षा की अवधि आठ वर्ष तक बढ़ा दी जाए।

२. रूस में कितनी शिक्षा दी जाती है ?

विद्यार्थियों की बहुसंख्या के लिए सप्तवर्षीय पाठ्यक्रम ही काफी समझा जाता है और इसके बाद विशेष व्यवसायिक शिक्षा आरम्भ हो जाती है और यही कम्यूनिस्ट शिक्षा प्रणाली की अन्तिम मंज़िल है। प्रत्येक विद्यार्थी की सेवाएं केवल राज्य के लिए हों और राज्य जिस तरह चाहे उनका प्रयोग करे।

विशेष व्यवसायिक शिक्षा के साथ-साथ कारखानों और सामूहिक फार्मों में पार्ट टाइम काम भी करना पड़ता है या विद्यार्थियों को कारखानों से सम्बंधित स्कूलों में काम करना पड़ता है। इस शिक्षा प्रणाली का एक भाग रिहाईशी स्कूल भी हैं।

(पोलीटेकनिक्स) बहुकलात्मक विद्यालयों में केवल विशेष शिक्षा ही दी

जाती है। "टैक्नीकल का कोर्स समाप्त करने वाले विद्यार्थियों को तीन वर्ष तक औद्योगिक संस्थानों में काम करना पड़ता है। इसके पश्चात् वे उच्च शिल्प-शिक्षा के विद्यालयों में दाखिला ले सकते हैं। परन्तु उसे वही कोर्स लेने होंगे जिनमें उन्होंने विशेष शिक्षा प्राप्त की हो।

आठ वर्ष तक विद्यालय में शिक्षा प्राप्ति के पश्चात् जिसमें माध्यमिक स्कूल के स्तर पर शिक्षा के साथ-साथ काम का प्रोग्राम भी शामिल है। अधिकतर विद्यार्थी किसी वर्कशाप या सामूहिक फार्म में अर्ध प्रवीण श्रमिक के तौर पर मुलाज़िम हो जाते हैं। कुछ एक विद्यार्थियों को, जिनका पढाई का रिकार्ड शानदार हो, उच्च विद्यालयों में दाखिल कर लिया जाता है। इसमें एक ही शर्त है कि इनके आवेदनपत्रों पर स्थानीय परीक्षाबोर्ड ने सिफारिश की हो,। परन्तु परीक्षा बोर्ड सिफारिश करते समय केवल शिक्षा रिकार्ड को ही नहीं देखता बल्कि यह भी आवश्यक है कि प्रार्थी अपने आपको राजनीतिक तौर पर प्रौढ़ या विश्वास योग्य प्रमाणित कर चुका हो और स्थानीय कोमसोमोल (कम्यूनिस्ट नवयुवकों की पार्टी), पार्टी के अधिकारियों और कारखाने के प्रबन्धकों ने इस बात की पुष्टि की हो।

रूस के विद्यार्थियों में से ५० से ६० प्रतिशत सातवें वर्ष के बाद विद्या प्राप्त नहीं करते। जिन लोगों को पढ़ाई की अधिक लगन हो वे पत्राकार कोर्सेज़ ले सकते हैं या नाईट स्कूलों में दाखिल होकर आगे पढ़ सकते हैं।

३. सोवियत स्कूलों में साइन्स कहां तक पढ़ाई जाती है?

रूस में वैज्ञानिकों के प्रशिक्षण पर बहुत ज़ोर दिया जाता है। वहाँ की शिक्षा पद्धति का यह एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है। कुछ विद्यालयों में इसका उत्कृष्ट प्रबन्ध है। मास्को और अन्य नगरों में माध्यमिक पाठशालाएं तथा उच्च टैक्निकल विद्यालय शिक्षा सम्बन्धी सामान से पूरी तरह लैस होते हैं। इन स्कूलों का पाठ्यक्रम बहुत कठिन होता है। भारी उद्योगों, परमाणु शक्ति के प्रयोजनों और युद्ध उपकरण सम्बन्धी पाठ्यक्रम में विशेषरूप से बहुत परिश्रम करना पड़ता है।

वैज्ञानिक शिक्षा का उच्चतम विद्यालय मास्को का फिजिक्स तथा टैक्नोलोजी का इन्स्टीट्यूट है। इसमें केवल बहुत ही योग्य विद्यार्थियों को दाखिला मिलता है या फिर इसके द्वार उच्च सरकारी अधिकारियों के बच्चों और दूसरे विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों के लिए खुले हैं।

विज्ञान पर और कुछ तो लेनिन के नियमों की रोशनी में किया जाता है जिनके अनुसार साइन्स 'भौतिकवाद' को वढ़ावा देती है और कुछ इसलिए कि वैज्ञानिक उन्नति राज्य की आर्थिक उन्नति के काम आए। कम्यूनिज़्म में वैज्ञानिक उन्नति को पूंजीवाद के विरुद्ध एक शस्त्र समझा जाता है। इसे धर्म के विप को नाश करने वाली औपधि माना जाता है। (आठवां अध्याय देखिए)।

४. आरक्ष श्रमिकों के स्कूल क्या हैं ?

आरक्ष श्रमिक स्कूल इसलिए स्थापित किये गये हैं कि मजदूरों को शिक्षा वहीं पर दी जा सके जहाँ वे काम कर रहे हैं। इस प्रकार अर्ध प्रवीण श्रमिक, मैकेनिक और टैक्नीशियन अधिक-से-अधिक संख्या में आवश्यकतानुसार तैयार हो जाते हैं।

श्रमिक आरक्ष पद्धति १९४० में स्तालिन के आदेशानुसार आरम्भ की गई थी। चौदह से सत्रह वर्ष तक की आयु के युवक जवरी तौर पर इसके लिए भरती किए गए। स्तालिन के बाद स्थानीय प्रबंधकों से जबरी भरती का अधिकार तो छीन लिया गया परन्तु स्वेच्छानुसार भरती होती रही।

'प्रावदा' ने अपने २० अगस्त, १९५६ के अंक में लिखा था कि १९५५-६० के दौरान में श्रम आरक्ष स्कूलों में ३५ लाख विद्यार्थियों को ट्रेनिंग देकर उन्हें उद्योगिक, कृषि सम्बन्धी और अन्य क्षेत्रों में काम करने योग्य बनायेंगे। यह सिस्टम इसलिए आरम्भ किया गया है कि एक उत्पादक अर्थ व्यवस्था में प्रत्येक स्तर पर ट्रेड मज़दूर आसानी से मिल सकें और इस प्रकार सप्त वर्षीय योजना में किसी समय भी मानव परिश्रम की कमी न रहे। (दसवां अध्याय देखिए)

५. सोवियत छात्रावासीय स्कूल क्या हैं और इनका अभिप्राय क्या है ?

फरवरी १९५६ में सी० पी० एस० यू० की बीसवीं कांग्रेस हुई। उसमें ख़ु श्चेव ने सुझाव दिया कि छात्रावासीय पाठशालाएं खोली जाएं। चुनाचे उस साल के पतझड़ में यह सिलसिला आरम्भ हो गया। दिसम्बर १९५९ में इन स्कूलों में छात्रों की संख्या १,८०,००० थी परन्तु वर्तमान योजना के अनुसार इस संख्या में तेज़ी से वृद्धि हो रही है। १९६५ के अन्त तक पच्चासी लाख छात्र इस सिस्टम के आधीन ट्रेनिंग ले चुके होंगे। अनुमान है कि अभी इन स्कूलों में और वहुत वच्चे भेजे जाएंगे।

छात्रावासीय स्कूलों में दो-तीन वर्ष की आयु से ही आसंजित नर्सरियों में पढ़ाई शुरू हो जाती है और सत्तरह-अठारह वर्ष की आयु तक जारी रहती

है। बच्चे अपने माता-पिता से सप्ताह में एक बार मिलते हैं। ५ अक्तूबर, १९५६ के 'प्रावदा' की रिपोर्ट के अनुसार मास्को के मुख्याध्यापक ने कहा कि "माता-पिता हमारे काम में बड़ी रुकावट पैदा करते हैं।"

छात्रावासीय स्कूला के बच्चे यूनिफार्म पहनते हैं। उन्हें सैनिक शिक्षा भी दी जाती है। पश्चिम के स्कूलों में बच्चों को सांस्कृतिक शिक्षा दी जाती है। रूस में इनके स्थान पर मार्क्सवाद और लेनिनवाद का पाठ पढ़ाया जाता है। बच्चों को कट्टर कम्यूनिस्ट पार्टी और कोमसोमोल भी अपने तौर पर बच्चों के मस्तिष्क में अपने नियम पक्के करने का यत्न करती हैं।

पहली कक्षा के छोटे-छोटे बच्चे प्रतिदिन साढ़े चार घंटे क्लास में गुज़ारते हैं। इसके बाद इन्हें तीन घंटे तक शारीरिक काम करना पड़ता है। दसवीं कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते उनके लिए काम और पढ़ाई का दिन कुल मिलाकर ग्यारह घंटे का हो जाता है। जो लोग पढ़ाई का खर्च दे सकते हैं उन्हें परिवार की आय का ८ से २५ प्रतिशत तक इस पर खर्च करना पड़ता है।

छात्रावासीय स्कूलों के सिस्टम के कई अभिप्राय हैं। यह सिस्टम इसलिए लागू किया गया है कि "माताएं बच्चों की देख-रेख से छुटकारा पा जाएं।" ताकि कारखानों और खेतों के काम के लिए भेजी जा सकें। बच्चा नर्सरी से लेकर उस समय तक स्कूल की निगरानी में रहता है जब तक वह उस व्यवसाय को ग्रहण न कर ले जिसके लिए उसे छात्रावासीय स्कूल ने तैयार किया है। छात्राओं को भी ऐसे ही डिस्पलिन का पाबंद बनाया जाता है। सोवियत छात्रों को हर घड़ी सैद्धान्तिक शिक्षा देने का अनिवार्य परिणाम यह निकलता है कि फिर उनके लिए स्वतन्त्र संसार से आने वाले "अपरिचित" विचार ग्रहण करने की क्षमता नहीं रहती।

६. सोवियत शिक्षा पद्धति का पुनर्गठन क्यों किया जा रहा है ?

सोवियत शिक्षा पद्धति के संशोधन के दो मुख्य कारण हैं। एक आर्थिक है, दूसरा राजनीतिक। आर्थिक कारण तो यह है कि सप्त वर्षीय योजना की पूर्ति के लिए आवश्यक मानव श्रम मिलता रहे। (दसवां अध्याय देखें)

राजनीतिक कारण १९५६ में पैदा हुआ। विदेशी यात्रियों को उन दिनों सोवियत नवयुवकों में मानसिक द्वन्द का आभास हुआ था। इस द्वन्द को इस बात से और भी उत्तेजना मिली कि सबसे बड़ा बुत गिर चुका था। भूतपूर्व डिक्टेटर स्तालिन का दर्जा कम करने का आन्दोलन चल रहा था। फरवरी

१९५६ की बीसवीं सी० पी० एस० यू० कांग्रेस में ख़ु्श्चेव (परसनैलिटी कल्ट) "व्यक्ति की पूजा" की निन्दा कर चुके थे ।

सोवियत मामलात के विशेषज्ञ एडवर्ड क्रेन्कशा ने १९ फरवरी १९५७ के "हांगकांग स्टैन्डर्ड" में लिखा था : "आज के नवयुवकों में वह मनुष्य द्वेषी भावना और जड़ता नहीं रही जिसे मिथ्यावाद अर्थात् स्तालिन प्रजा ने जन्म दिया था और जिसके बारे में सब जानते हैं कि यह एक ग़लत राह है । अब इसकी जगह निर्माणात्मक आशावाद ने ले ली है । लोग सोचते हैं कि यदि स्तालिन जैसे व्यक्ति को मान-प्रतिष्ठा के मीनार से नीचे उतारा जा सकता है । तो फिर और भी बहुत कुछ हो सकता है । ये युवक चुप-चाप किसी बात को नहीं मानते । हर बात पर तर्क करते हैं । वर्तमान नेताओं का प्रत्येक काम स्तालिन के बारे में ख़ु्श्चेव के वक्तव्य की रोशनी में ही परखा जाता है ।"

नई पीढ़ी की बेचैनी और उद्दण्डता से सी० पी० एस० यू० को बड़ी परेशानी है । इसे डर है कि कहीं "बाहरी बूर्जुआई" प्रभाव पार्टी और स्टेट के सैद्धान्तिक ढांचे को तोड़-फोड़ न दे । इन मानसिक परेशानियों के अलावा नवयुवक के अपराधों की समस्या (छटां अध्याय देखिए) भी अधिक गम्भीर हो गई है । इसलिए काम और पढ़ाई के एकत्रित प्रोग्राम में "पार्टी डिसिप्लिन" और "सोशलिस्ट उत्पादन" पर ज़ोर दिया गया है । तमाम विद्यार्थी श्रमिक स्थानीय पार्टी के अधिकारियों की निगरानी में रहते हैं । पार्टी को आशा है कि शिक्षा की यह पद्धति राजनीतिक बेचैनी को खत्म कर देगी ।

जो विद्यार्थी बहुत लायक होते हैं, उनकी सिफारिश भी स्थानीय परीक्षा बोर्ड यों ही नहीं कर देता । पहले यह देखता है कि वह पार्टी का वफादार है या नहीं, राजनीतिक तौर पर उसके विश्वासपात्र होने के कोई प्रमाण मौजूद हैं या नहीं । इस सिफारिश के बिना न वह उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं, न ही अपनी मर्ज़ी अनुसार व्यवसाय चुन सकते हैं ।

७. कम्यूनिज़्म में आर्थिक लक्ष्यों की पूर्ति के लिए शिक्षा को कैसे साधन बनाया जाता है ?

कम्यूनिज़्म के अन्तर्गत शिक्षा का असली अभिप्राय स्टेट की सेवा है । इसलिए नियमानुसार शिक्षा पद्धति निश्चित करते समय स्टेट के आर्थिक लक्ष्यों की पूर्ति को ध्यान में रखा जाता है । परन्तु यह काम इतना सहल नहीं । एकदलीय शासनतंत्र तथा आयोजित समाज में भी जब विद्या को आर्थिक आवश्य-

कताओं का गुलाम बनाया जाता है तो उसमें अवश्य ही पेचीदगियां पैदा होती हैं। रूस में विद्यार्थियों और श्रमिकों के परस्पर सम्बन्धों में अन्तर स्कूल सिस्टम में दूररस तवदीलियों का सबसे बड़ा आर्थिक कारण है।

जन-शक्ति में इस कमी का एक कारण यह भी है कि दूसरे महायुद्ध में सोवियत यूनियन में जननगति बहुत कम रह गई है, जिससे युद्ध के बाद के कुछ वर्षों में स्कूलों में प्रवेश पाने वाले बच्चों की संख्या कम हो गई है। उदाहरण के लिए पहली चार कक्षाओं में पाठकों की संख्या जो १९४८-४९ में २,३७,३०,००० तक पहुँच गई थी। १९५३-५४ में घटकर केवल १,२३,००,००० रह गई।

१९५६-५७ में विद्यार्थियों की संख्या फिर बढ़ी और १,५३, ८०,००० हो गई। जिन बच्चों ने १९४९ में अपनी शिक्षा आरम्भ की थी, वह १९५८ में कोई सोलह वर्ष की आयु में नौकरी के लिए तैयार हो चुके थे। लेवर मार्किट के लिए जो सोलह वर्ष के नवयुवक मिले हैं, उनकी गिनती १९६२ में लगभग सबसे कम रहने की आशा थी। अर्थात् १९६५ में पूरे होने वाली सप्त वर्षीय योजना की अवधि से कोई तीन वर्ष पहले (दसवां अध्याय देखिए) ख्रुश्चेव तो इस बात का खण्डन करते रहे कि यह नया प्रोग्राम जन-शक्ति की कमी के कारण बताया गया है परन्तु हक़ीक़त यही है कि काम और पढ़ाई की प्रयोजना, जो माध्यमिक स्तर से आरम्भ होती है, केवल इसलिए बनाई गई है कि वांछित जवान श्रमिक मिलते रहें।

८. क्या सोवियत शिक्षा पद्धति में सामाजिक स्तर का कोई महत्व है ?

कुछ समय से सोवियत पत्र-पत्रिकाओं में शिकायतें आ रही हैं कि विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग के बच्चे शारीरिक काम से जी चुराते हैं। वह अन्य घटिया कामों से भी बचते हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि एक ओर तो उच्च महाविद्यालयों में शिक्षित ग्रेज्युएटों की बड़ी संख्या मिलती है, दूसरी ओर उद्योगों में ट्रेण्ड श्रमिक आवश्यकता से कहीं कम भेजे जा सके हैं।

१९५७ में उच्च विद्यालयों के और ऊंचे टैक्निकल स्कूलों के ७,७४,००० ग्रेज्युएट थे, इसके मुकाबले में नव प्रशिक्षित श्रमिकों की संख्या ६,८६,००० थी। इस प्रकार शारीरिक काम न करने वालों की अधिक संख्या से एक प्रकार की बेकारी फैल गई है। जबकि उद्योगों में प्रशिक्षित श्रमिकों की कमी है। "प्रावदा" ने २५ दिसम्बर, १९५७ के अंक में इस बात को स्वीकार किया था कि अब ज़रूरी हो गया है कि "माध्यमिक स्कूलों के ग्रेज्युएटों में से बहुत कम

को उच्च तथा टैक्निकल स्कूलों में दाखिल किया जाए। चुनांचि जिन लोगों को अब प्रवेश मिलता है, वे उच्च विशेप वर्ग के होते हैं।

९. क्या रूस में शिक्षा मुफ्त है ?

रिहाईशी स्कूलों के अतिरिक्त पढ़ाई की फीस रूस में नहीं ली जाती। मन्त्रि मण्डल के एक आदेश के अनुसार माध्यमिक स्कूलों, टैक्निकल विद्यालयों और उच्च शिक्षा केन्द्रों में फीस बंद कर दी गई थी। परन्तु उच्च शिक्षा के केन्द्रों में पढ़ाई की फीस के अतिरिक्त भी काफी खर्च हो जाता है।

इस खर्च को पूरा करने में सहायता देने के लिए स्टेट वज़ीफे देती है। यह वज़ीफा २२० रूबल से ४५० रूबल मासिक तक होता है। मास्को स्पेशल इन-स्टीट्यूट फार फिजिक्स एण्ड टैक्नालोजी और स्कूल आफ डिप्लोमेसी के छात्रों को ५०० रूबल प्रति मास मिलते हैं जबकि मास्को विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों को २९० रूबल मासिक मिलते हैं।

स्पेशल इन्स्टीट्यूट और स्कूल आफ डिफ्लोमेसी में उच्च सोवियत अधिकारियों के बच्चे ही प्रवेश पाते हैं। विद्यार्थियों का खर्च वज़ीफों से कम ही पूरा होता है इसलिए केवल खाते-पीते घरानों के बच्चे ही वहाँ पर प्रवेश पा सकते हैं। क्योंकि साधारण मज़दूर के परिवार को तो जीवन व्यतीत करने के लिए तमाम कमाने वाले पुरुषों की आमदनी की जरूरत पड़ती है।

१०. क्या अध्यापकों से यह आशा भी की जाती है कि वह सार्वजनिक कार्य-विधियों में भाग लिया करें ?

जनता और राज्य के लिए अध्यापक नाना प्रकार की सेवाएँ करने पर मज़बूर हैं। उनसे आशा की जाती है कि पाओनीयर संगठन (जो नौ वर्ष से चौदह वर्ष तक के बच्चों के लिए कम्यूनिस्ट संस्था में भाग लें और कौमसोमोल (नवयुवक कम्यूनिस्ट लीग) की कार्यविधियों में शामिल हों जो चौदह से छब्बीस वर्ष तक के नवयुवकों की संस्था है।

ग्रामीण प्रदेशों में उनका कर्त्तव्य है कि सामूहिक खेतों के मेम्बरों को सरकार के आदेश तथा नियम समझाएं, कम्यूनिस्ट पार्टी के बताए हुए विषयों पर भाषण दें और उन तमाम आंदोलनों में बढ़-चढ़ कर भाग लें जिनसे जनता पर कम्यूनिस्ट पार्टी की पकड़ दृढ़ हो। अध्यापकों का सबसे महत्वपूर्ण कर्त्तव्य यह है कि अपने विद्यार्थियों को नया "सोवियत मानव" बनने के लिए तैयार करें। बचपन ही से उन्हें सिखायें कि कम्यूनिस्ट पार्टी और स्टेट की सेवा आव-

श्यक है। पार्टी के मेम्बर निरन्तर निगरानी करते रहते हैं कि अध्यापक संतोष-जनक रूप से अपना कार्य पूरा कर रहे हैं।

११. सोवियत रूस के अध्यापक कम्यूनिस्ट उद्देश्यों को बढ़ावा देने के लिए क्या करते हैं ?

स्तालिन ने १९३४ में एक लेखक को बताया था, "शिक्षा एक हथियार है। इसके प्रभाव की मात्रा इस हथियार को रखने वाले पर और इससे घायल होने वाले पर आधारित है।" अध्यापकों से कहा जाता है कि क्लासरूम को कम्यूनिस्ट प्रोपेगण्डा का अस्त्रागार बना दें। सरकारी शिक्षा सम्बन्धी पत्रिका "पैडागोगी" के कथनानुसार अध्यापकों का कर्त्तव्य है कि जनता के शत्रुओं के विरुद्ध बच्चों में घृणा उत्पन्न करें" अर्थात् उन सब लोगों से घृणा सिखाएँ जो देश में या देश से बाहर कम्यूनिज़्म के विरोधी हैं। उन्हें मार्क्सिज़्म लेनिनिज़्म का प्रचारक और कम्यूनिस्ट पार्टी की नीतियों का समर्थक होना चाहिए।

१२. क्या सोवियत रूस में पढ़ाए जाने वाले सब विषयों में मार्क्सवाद, लेनिन-वाद शामिल कर दिया जाता है ?

कम्यूनिस्ट राजनीतक तथा सैद्धान्तिक विचारधारा कम से कम दसवीं कक्षा तक लगभग प्रत्येक विषय में शामिल है। उदाहरण के लिए पत्रिका "पैडा-गोगी" लिखता है : "प्राकृतिक विज्ञान के नियमों के प्रशिक्षण से विद्यार्थियों में तार्किक भौतिकवादी दृष्टिकोण सुदृढ़ होगा। केवल यही दृष्टिकोण वैज्ञानिक है और धार्मिक रूढ़ियों मूढ़-विश्वासों तथा भ्रमों का सफलतापूर्वक विरोध कर सकता है। भूगोल के ज्ञान से विद्यार्थियों के मस्तिष्क में भौतिकवादी विश्व की रूपरेखा बनेगी। सोवियत इतिहासकार इतिहास को विशेषरूप से तोड़ते-मरोड़ते हैं और इसमें अपने लाभानुसार अदल-बदल करने में चतुर हैं। जैसे रूसी विद्यार्थी के निकट दूसरा महायुद्ध १९४१ में आरम्भ हुआ था, जब सोवियत यूनियन पर नाज़ी हमला हुआ था। १९३७ में नहीं जबकि पोलैंड पर आक्र-मण हुआ था। पार्टी के लाभ के लिए कम्यूनिस्ट इतिहासकार अपने देश के इति-हास को आवश्यकता अनुसार बदलते रहते हैं। इस हस्तक्षेप से न रूस का इतिहास ही बच पाया है और न ही पिट्ठू देशों का। पिट्ठू देशों के इतिहास को या तो सोवियत इतिहासकारों ने नए सिरे से स्वयं लिखा है या उसी देश के इतिहासकारों ने सोवियत निगरानी में इसकी कांट-छांट की है।

जब से स्तालिन के 'पर्सनैलिटी कल्ट' 'व्यक्ति-पूजा' की घोर निन्दा तथा खण्डन किया गया है, सोवियत सामूहिक नेतृत्व के सामने एक जटिल समस्या आ खड़ी हुई है। अब इन हज़ारों पुस्तकों का पुनः निरीक्षण हो रहा है जिनमें इस डिक्टेटर की महानता तथा प्रतिष्ठा पर ज़ोर दिया गया था। इस विराट आन्दोलन का प्रभाव पाठ्यक्रम की पुस्तकों तथा संदर्भ ग्रंथों पर भी पड़ेगा जो सोवियत निर्देश के अनुसार पिट्ठू देशों में प्रकाशित हुई हैं।

१३. सोवियत शिक्षा में सोवियत यूनियन और अन्य देशों का कैसा चित्रण किया गया है ?

सोवियत विद्यार्थी को बताया जाता है कि सोवियत सिस्टम सब सिस्टमों से अच्छा है, सोवियत यूनियन सबसे सम्पन्न तथा उन्नत देश है और इसके नेता बुद्धिमत्ता में अपना सानी नहीं रखते। दूसरे देशों में "पूंजीवाद" के अधीन रहने वाले लोग सामान्यतः मज़लूम और गिरे हुए हैं और वह अपने पूंजीपति स्वार्थ-साधकों के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए तैयार बैठे हैं और केवल संकेत की प्रतीक्षा में हैं।

कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति तथा मन्त्रिमण्डल द्वारा स्वीकृत पाठ्य पुस्तकों के विषय-वस्तु के सम्बन्ध में विद्यार्थी या उनके अध्यापक कोई प्रश्न नहीं उठा सकते।

१४. क्या सोवियत यूनियन में शिक्षा पद्धति केन्द्रित है ?

सोवियत शिक्षा पद्धति की व्यवस्था किसी केन्द्रीय एजेन्सी के हाथ में नहीं है परन्तु व्यवहारिक रूप में शिक्षा प्रणाली जैसे पाठ्यक्रम की पुस्तकें आदि सारे सोवियत संघ में एक समान हैं। सोवियत संघ के मन्त्रिमण्डल द्वारा किए गए निर्णयों के आधार पर यूनियन लोकराज्यों के शिक्षा मन्त्रालय अपनी शिक्षा पद्धति के विषय पर शिक्षा अधिकारियों को विस्तृत आदेश देते हैं। तथापि सोवियत संघ के उच्च शिक्षा तथा संस्कृति के मंत्रालय और श्रमिक आरक्ष का मुख्य शासकीय विभाग केन्द्रीय निगरानी में प्रशिक्षण कार्य चला रहे हैं।

१५. युवक संस्थाएं सोवियत शिक्षा के संबंध में क्या करती हैं ?

युवक संस्थाओं का स्कूलों के प्रशासन से गहरा सम्बन्ध रहता है। दोनों की मंजिल एक ही है। कम्यूनिस्ट विचारधारा को बच्चों के मस्तिष्क में जड़ित

करना और डिसिप्लिन पैदा करना, जिसे कम्यूनिस्ट सर्वाधिकारी राज्य में सबसे उत्तम गुण माना जाता है।

नवयुवकों के लिए कौमसोमोल संगठन छोटी आयु के पाओनीयरों के काम को आगे बढ़ाने के लिए है परन्तु इसकी सदस्यता सीमित है और इसमें सैनिक प्रशिक्षण तथा धर्मविरोधी प्रोपेगण्डे पर अधिक ज़ोर दिया जाता है।

१६. क्या रूस में शिक्षा रूसी भाषा के अतिरिक्त किसी और भाषा में भी दी जाती है ?

सोवियत संविधान की हिदायत है कि शिक्षा प्रादेशिक भाषा में दी जाए। आर० एफ० एस० आर० की भाषा रूसी है। अन्य चौदह यूनियन प्रजातंत्रों में शिक्षा प्रादेशिक भाषाओं में दी जाती है। परन्तु सब सोवियत स्कूलों में रूसी भाषा का ज्ञान आवश्यक है। प्रादेशिक भाषाओं का दर्जा कम करके रूसी भाषा को अधिक महत्व दिया गया है। प्रादेशिक केन्द्रों से शिकायतें आती रहती हैं कि शिक्षा में "रूसी" (महान रूसी) झुकाव मुखरित रूप में पाया जाता है।

सोवियत शिक्षा के रूसी बनाए जाने का उदाहरण एक लेख से मिलता है जो २८ दिसम्बर, १९५२ के "क़ाजकस्तानस्काया प्रावदा" में छपा था। लेख में शिकायत की गई है : काज़कस्तान के ऐतिहासिक विज्ञान में जबसे बूर्जुआ और राष्ट्रवादी दृष्टिकोण की कलई खुली है काज़क इतिहास, साहित्य अथवा अर्थ-व्यवस्था पर एक भी पुस्तक नहीं लिखी गई है। आज भी इन विषयों पर पाठ्य पुस्तकें हमारे पास नहीं हैं।"

पिट्ठू देशों में भी राष्ट्रीय शिक्षा को इस प्रकार रूसी बनाया गया है। अभिप्राय यह है कि अन्य जातियों अथवा प्रदेशों की कार्यविधियों पर महान रूस के कारनामों का बड़प्पन दिखाया जाए।

१७. कम्यूनिस्ट शिक्षा का अभिप्राय क्या है ?

सोवियत और बाकी कम्यूनिस्ट शिक्षा का प्रथम अभिप्राय तो यही है कि नवयुवकों को कम्यूनिस्ट (साइण्टेफिक शोसलिस्ट) समाज में उचित स्थान के लिए तैयार किया जाये। इसके लिए पहले तो उन्हें मार्क्सिज़्म-लेनिनिज़्म की शिक्षा दी जाती है। इसके पश्चात् उनका प्रशिक्षण इस ढंग से होता है कि प्रत्येक व्यक्ति को राज्य के प्रशासन में पहले से निश्चित स्थान अथवा मुलाज़िमत के योग्य बनाया जाए।

इस शिक्षा प्रणाली में जो लोग कम्यूनिस्ट पार्टी के प्रयोजनों की पूर्ति में

सबसे आगे होते हैं, या जो लोग दूसरे क्षेत्रों में अपना कमाल दिखाते हैं उन्हें इनाम दिये जाते हैं।

कम्यूनिस्ट शिक्षा का एक अभिप्राय यह भी है कि कच्चे मस्तिष्क में यह कम्यूनिस्ट मिथ्या भर दी जाये कि सारे संसार में कम्यूनिज़्म की विजय अनिवार्य है। १९५६ में जब सोवियत ब्लाक के देशों में कम्यूनिज़्म के विरुद्ध विद्यार्थियों के आंदोलन भयंकर हो गये तो इस प्रोपेगण्डे को बहुत धक्का लगा।

दसवां अध्याय

कम्यूनिज़्म के अन्तर्गत खाद्य वस्तुओं तथा माल का उत्पादन

१. कम्यूनिस्ट सरकार अपनी जनता को खाद्य पदार्थ तथा अन्य आवश्यक वस्तुएं किस प्रकार जुटाती हैं ?

रूस और पूर्वी यूरोप में खाद्य वस्तुओं तथा अन्य माल का उत्पादन सरकारी योजना के अनुसार होता है। इस योजना के अनुसार प्रत्येक उद्योग और कारखाने को हिदायत की जाती है कि माल की निश्चित मात्रा तैयार की जाये। अब तक ऐसे माल के उत्पादन पर जोर दिया गया है जिससे सोवियत यूनियन के भारी उद्योगों की उन्नति हो। वार्षिक उत्पादन का बहुत कम भाग रोजाना इस्तेमाल की चीजों जैसे कपड़े, घरेलू सामान इत्यादि के रूप में तैयार किया जाता है। आम इस्तेमाल की वस्तुएं कभी इतनी मात्रा में उत्पन्न नहीं होतीं कि मांग को पूरा कर सकें। यह ऐसी दूकानों में बिकती हैं जिनकी व्यवस्था स्वयं सरकार के हाथ में होती है या जिन्हें ऐसे कोआपरेटिव चलाते हैं जो सरकार के नियन्त्रण में होते हैं।

सरकारी योजना में कृषि उत्पादन के लक्ष्य निश्चित कर दिये जाते हैं। सामूहिक तथा स्टेटफार्म इसी के अनुसार माल पैदा करते और पैदावार इकट्ठी करने वाली सरकारी संस्थाओं को दे देते हैं। नियम तो यह है कि फार्म स्टेट की पैदावार का भाग देने के पश्चात् शेष माल चाहे अपने पास रख सकते हैं या खुले बाज़ार में बेच सकते हैं। परन्तु वास्तव में सरकार का हिस्सा दे देने के बाद आम किसान के पास इतना बचता ही नहीं कि इसके गुज़ारे से अधिक हो।

स्टेट जो कृषि-उत्पादन जमा कराती है, वह सरकारी दुकानों पर निश्चित क़ीमतों पर बेचा जाता है। उत्पादन योजनाओं तथा बिक्री तथा वितरण का ऐसा ही ढंग अन्य कम्यूनिस्ट सरकारों ने भी ग्रहण कर रखा है।

२. प्रथम पंचवर्षीय योजना कैसे बनाई गई ?

पहली पंचवर्षीय योजना स्तालिन ने शुरू कराई थी। १६२८ में जब स्तालिन ने निर्णय किया कि सोवियत यूनियन को औद्योगिक देश बनाना है और इसे एक शक्तिशाली सैनिक राज्य का रूप देना है तो इस योजना की आधारशिला रखी गई। सोवियत सिस्टम ने यह नई करवट ली तो वहां का सर्वाधिकार केन्द्रित राज्य भी बदला और उसने दृढ़ता और क्रूरता से राजनीतिक विरोधियों को खत्म कर डाला और हर प्रकार की समाजी संस्थाओं को अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए पूरी तरह नियंत्रित कर दिया।

स्तालिन के प्रोग्राम में यह भी शामिल था कि तमाम सामूहिक रूप से काम करें। मशीनों का अधिक से अधिक प्रयोग हो। परिणाम स्वरूप "कल्क" (खाते-पीते किसान) जो अपनी ज़मीनों के सामूहीकरण के विरुद्ध थे, अपना अस्तित्व ही खो बैठे। कोई दस लाख 'कल्क' घराने अपनी भूमि से वंचित कर दिये गये। इनमें से बहुत से स्तालिन के आदेशानुसार बेगार के कैम्पों में भेज दिये गये।

३. सरकारी योजना को कैसे कार्यान्वित किया जाता है ?

राजकीय योजना संस्थापन (जिसे सोवियत यूनियन में गोस्पलान कहा जाता है) एक सम्पूर्ण तथा विस्तार पूर्ण प्रोग्राम बनाता है। इसके अन्तर्गत हर प्रकार की उपज तथा उत्पादन के लक्ष्य निश्चित किए जाते हैं। उपज, उपभोज्य सामग्री और भारी उद्योग (जिनमें बुनियादी उद्योग भी शामिल हैं) जैसे कोयला, लोहा, इस्पात, तेल और सैनिक सामान तथा अस्त्र, शस्त्र इत्यादि सब इसी में आ जाते हैं)।

राजकीय योजना को, समय तथा-प्रदेशानुसार बाँट दिया जाता है और प्रत्येक वर्ष के लिए पैदावार के निशाने निश्चित कर दिए जाते हैं। यूनियन प्रजातंत्रों में अलग-अलग प्रदेशों तथा जिलों के लिए भी पैदावार के लक्ष्य नियत किए जाते हैं। इसके पश्चात् स्थानीय रूप में नगरों, शहरों और गांवों, कारखानों तथा सामूहिक फार्मों को उनके कोटे से सूचित कर दिया जाता है। तैयार माल या कृषि की उपज का निश्चित भाग उन्हें पूर्व सूचित तिथि तक सरकारी गोदामों में जमा कराना पड़ता है।

४. क्या सरकारी योजना के लक्ष्य पूरे हो जाते हैं ?

पूर्णरूप से यह लक्ष्य कभी पूरे नहीं होते। कुछ क्षेत्रों में उपज निश्चित

निशाने से बढ़ जाती है। कृषि और उपभोज्य वस्तुओं के उत्पादन के मुकाबले में भारी उद्योगों के निशाने शीघ्र ही पूरे हो जाते हैं। भारी उद्योग कम्यूनिस्ट सरकारों के लिए छोटे और हलके उद्योगों की उन्नति और फौजी सामान के उत्पादन का साधन हैं। कम्यूनिस्ट शासकों की दृष्टि में इनका महत्व दैनिक प्रयोग की वस्तुओं से कहीं अधिक है।

५. रूस में कितनी राजकीय योजनाएँ बन चुकी हैं ?

पहली पंचवर्षीय योजना १९२८ में शुरू की गई थी। छटी पंचवर्षीय योजना की घोषणा १९५६ में बीसवीं सी० पी० एस० यू० कांग्रेस में हुई परन्तु सितम्बर १९५७ में महसूस किया गया कि उद्यौगिक उन्नति निश्चित निशानों के अनुसार नहीं हुई। इसलिए छटी योजना को बीच में ही छोड़ दिया गया। इसके स्थान पर इक्कीसवीं पार्टी कांग्रेस (२७ जनवरी से ५ फरवरी तक) में खू्रश्चेव ने उच्चाकांक्षी सप्त वर्षीय योजना की घोषणा की।

सप्त वर्षीय योजना में औद्योगिक पैदावार में १९६५ तक ८० प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य रखा गया है। यह भी कहा गया है कि कृषि की उपज भी इतनी ही बढ़ाई जाएगी। खू्रश्चेव ने दावा किया है कि यह योजना पूरी हो जाने के पश्चात् रूस में भी प्रतिव्यक्ति पैदावार अमरीका के बराबर हो जाएगी।

आर्थिक समीक्षकों का अनुमान है कि रूस सामूहिक राष्ट्रीय पैदावार अमरीका की कुल पैदावार का चालीस प्रतिशत है। उन्हें इस बात का विश्वास नहीं है कि १९६५ तक या निकट भविष्य में दोनों देशों की पैदावार बराबर हो सकेगी।

पैदावार में वृद्धि के नए आन्दोलन को सोवियत श्रमिकों के लिए रुचिकर बनाने के लिए खू्रश्चेव ने सम्पन्न भविष्य का आश्वासन दिया है। २४ जनवरी १९६० को एक इन्टरव्यू में उन्होंने बताया था : "मेरा विचार है कि १९७५-८० के लगभग में हमें इतने भौतिक साधन पर्याप्त हो जाएंगे कि हमारी जनता का जीवन स्तर बहुत ऊंचा हो जाएगा। शर्त केवल यह है कि बीच में कोई जंग न हो।"

१९५३ की गर्मियों में भूतपूर्व प्रधानमंत्री मालिनकोव ने भी इसी प्रकार "सम्पन्न भविष्य" की शुभ सूचना सुनाई थी। पार्टी सेक्रेटरी खू्रश्चेव ने उसे बहुत उछाला भी था। मालिनकोव बाद में "पार्टी दुश्मन ग्रुप" के समर्थक सिद्ध कर दिए गए और १९५७ में खू्रश्चेव ने उन्हें अधिकार से वंचित कर दिया।

फिर भी वर्तमान योजना का वर्णनीय पहलू यह है कि पहली योजनाओं के मुकाबले में सी० पी० एस० यू० अब भोज्य वस्तुओं की आवश्यकता पूरी करने पर अधिक ज़ोर दे रही है।

६. कारखानों के डायरेक्टर निर्धारित पैदावारी कोटे किस प्रकार पूरे करते हैं?

कोटे पूरे करने में कारखानों के डायरेक्टरों को प्रायः बहुत कठिनाइयां पेश आती हैं। कभी उनके कारखाने के लिए जितनी पैदावार का लक्ष्य रखा जाता है वह मशीनों की उत्पादन योग्यता से अधिक होता है, कभी उनके पास योजना के अनुसार काम चलाने के लिए मज़दूर नहीं होते, कभी कच्चे माल की कमी रहती है।

इन कठिनाइयों पर काबू पाने के लिए कारखानों के डायरेक्टर बहुत-सी "युक्तियों" से काम लेते हैं जिनमें बहुत-सी विधि विरुद्ध होती हैं। जैसे कि वह अपना बही-खाता इस प्रकार से रखते हैं कि यह प्रतीत हो कि कोटा पूरा हो गया है, या पैदावार कोटे से भी अधिक बढ़ गई है। इस उद्देश्य के लिए वह घटिया माल को भी बढ़िया माल बता कर पैदावार में वृद्धि दिखा देते हैं। कभी वह तैयार हुए माल का मूल्य रूबल की वर्तमान कीमत के हिसाब से लगाते हैं, या कोई और धोखा देने वाला तरीका अपनाते हैं। कभी कच्चे माल पर होने वाले व्यय को कम करके दर्ज करते हैं ताकि कम-से-कम कागज़ पर लाभ अधिक नज़र आए।

७. कम्यूनिस्ट योजनाओं का कारखानों के मज़दूरों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

प्रत्येक मज़दूर पर, हर "ब्रीगेड" पर निरन्तर दबाव डाला जाता है कि वह पैदावार बढ़ाता रहे। कम्यूनिज़्म के अधीन मज़दूर प्रायः काम के हिसाब से वेतन पाते हैं। इसलिए वह "सोशलिस्ट मुकाबले" में भाग लेने पर मजबूर हैं।

"मुकाबले" का यह तरीका वास्तव में व्यक्तिगत रूप में प्रतिदिन जितना माल तैयार करने की आशा की जाती है, इस ढंग से इसमें और भी वृद्धि हो जाती है। इस औसत को जो मजदूर पूरा नहीं कर सकता, वह साप्ताहिक उजरत भी कम पाता है।

पैदावार बढ़ाने का एक दूसरा तरीका तेज काम करने वाले मज़दूर जिन्हें "प्रगतिशील" या "प्रवर्तक" मज़दूर भी कहा जाता है। उनका काम यह है कि कारखानों और पैदावारी संस्थानों में काम का स्तर कायम करें। ये ट्रेण्ड मज़दूर होते हैं। माल तेज़ी से तैयार करने की उन्हें ट्रेनिंग मिल चुकी होती

है। ये सोवियत समाज के उच्च वर्ग में गिने जाते हैं। उन्हें अपने हुनर की नुमाइश करने के लिए एक कारखाने से दूसरे कारखाने भेजा जाता है। उद्देश्य यह होता है कि वे दूसरे मज़दूरों के लिए पथ-प्रदर्शन कर सकें। उनके काम को औसत काम बता कर साधारण मजदूर से भी इतने ही काम की आशा की जाए। स्पष्ट है कि इन विशेष "प्रगतिशील" मज़दूरों के काम के स्तर पर साधारण मज़दूर नहीं पहुँच सकते।

चीनी सोवियत ब्लाक के अत्यधिक औद्योगिक संस्थानों में काम करने के हालात बहुत भयानक तथा खराब हैं। (तीसरा अध्याय देखिए)।

८. क्या यह सच है कि कम्यूनिस्ट देशों में मज़दूर ही कारखानों के मालिक होते हैं ?

कम्यूनिस्ट प्रचार करने वालों का दावा है कि उनके देशों में सब कारखाने मज़दूरों की मिल्कियत होते हैं। परन्तु यह बात सत्य नहीं है। वहां के सब औद्योगिक संस्थानों और अन्य कारोबारी संस्थाओं की मालिक कम्यूनिस्ट स्टेट होती है। वही उन्हें चलाती है, वही इनकी व्यवस्था को देखती है। मज़दूर तो बस ब्यूरोक्रैटिक सरकार की विराट् मशीन के पैदावारी पुर्जे होते हैं। निर्णायक अधिकार तो कम्यूनिस्ट पार्टी के हाथ में रहता है।

इन हालात में मज़दूरों की ट्रेड यूनियनें भी बेकार होती हैं। कम्यूनिस्टों की चलाई हुई यूनियनें तो सरकार की सहकारी होती हैं। उनका सबसे बड़ा कर्त्तव्य ही यही है कि उच्च अधिकारियों के आदेशों को मज़दूरों तक पहुँचा दें और मज़दूरों में डिस्पिलिन कायम रखें, अर्थात् उन्हें तेज़ी से काम करने पर उकसाती रहे।

९. राजकीय योजना के अधीन सामूहिक फार्मों के मेम्बरों के साथ कैसा व्यवहार होता है ?

सामूहिक फार्मों के मेम्बरों की दशा प्रायः अच्छी नहीं होती। वे (पुरुष हों या स्त्री) प्रति दिन प्रातः से सायं तक फसल बोने या काटने में लगे रहते हैं। प्रायः उन्हें सप्ताह के सभी दिन काम करना पड़ता है। जब तक बीज बोने या फसल काटने का काम खत्म न हो वे जुटे रहते हैं। उजरत का मिलना अनिश्चित होता है और वह प्रायः कम होती है और नकद या जिन्स के रूप में मिलती है।

प्रत्येक फार्म में मेम्बर के काम का हिसाब रखा जाता है। ये इकाइयां इसके

परिश्रम की मात्रा और योग्यता को ज़ाहिर करती हैं जो सामूहिक फार्म का मेम्बर करता है। आय की तक़सीम, चाहे नक़द हो या जिन्स के रूप में, उपज पर निर्भर है। हर "कोलखोज़" का हिस्सा तमाम टैक्स, बकायाजात और वार्षिक चन्दे काटने के बाद निश्चित किया जाता है। इन कटौतियों के पश्चात् मेम्बरों को बहुत कम उजरत मिलती है। गुजर-बसर के लिए इसे अपने छोटे बाग़ की पैदावार का सहारा लेना पड़ता है।

सोवियत सरकार ने ढोंग तो यह रचा रखा है कि सामूहिक फार्मों की व्यवस्था प्रजातांत्रिक ढंग से होती है परन्तु हक़ीक़त कुछ और ही है। फार्म के सदस्य फ़ैसलों का केवल समर्थन कर सकते हैं जो फार्म के डायरेक्टरों अथवा मैनेजरों ने किए हों। सामूहिक फार्म का प्रधान वैधानिक तौर पर तो सदस्यों की आमसभा में "चुना जाता है", परन्तु वास्तव में यह सभा केवल उस उम्मीदवार के निर्वाचन की पुष्टि करता है जिसे स्थानीय कम्यूनिस्ट ग्रुप ने या तो चुना हो, या उसका समर्थन किया हो।

सामूहिक फार्म का प्रधान नौकरशाही के विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग में से होता है। कम्यूनिस्ट पार्टी उसकी नियुक्ति तकनीकी योग्यता को देखकर नहीं करती, बल्कि यह देखती है कि पार्टी के दृष्टिकोण से वह किस हद तक विश्वसनीय है। इसीलिए इसे प्रायः कृषि के सम्बन्ध में कोई ज्ञान नहीं होता। कभी-कभी बाहर से आए हुए व्यक्ति को प्रधान बना दिया जाता है जिसे स्थानीय जल-वायु और फसल इत्यादि के बारे में कोई ज्ञान नहीं होता। इसका प्रभाव प्रायः सामूहिक फार्मों में कम उत्पादन के रूप में प्रत्यक्ष होता है।

सामूहिक फार्म के प्रधान की आय का हिसाब एक जटिल फारमूले से लगाया जाता है। भिन्न-भिन्न हालतों में यह आय बदलती रहती है। यह और फसल की किस्म फार्म के रकवे और उसकी स्थिति पर निर्भर है। अपनी राजनीतिक पोजीशन और प्रभाव के कारण वह ठाठ से जीवन व्यतीत करता है। फार्म की उत्तम और बढ़िया उपज पर उसका अधिकार होता है।

मैनेजर अपने पद से लाभ उठाते हुए लूट-खसूट से भी नहीं चूकते। सोवियत समाचार पत्रों के अनुसार बहुत से प्रधानों पर इस कारण मुकदमे चलाए गए हैं कि उन्होंने फार्म की पैदावार काले बाज़ार में बेची थी अथवा अपने हिसाब में गड़बड़ किया था, या रिपोर्टें गलत तैयार की थीं और या सांझे फंड में हेर-फेर किया था।

१०. क्या सामूहिक खेती-बाड़ी कम्यूनिज्म के अधीन अन्तिम मंज़िल समझी जाती है ?

जब से ख़ु श्चेव को अधिकार प्राप्त हुआ है वह कृषि के लिए ऐसे लक्ष्यों का प्रचार करते रहते हैं जो सामूहिक खेती-बाड़ी की वर्तमान व्यवस्था को एकदम बदल कर रख दें। एक प्रस्ताव यह है कि खेती के नगर अथवा "ऐग्रो-गोरोड्ज़" स्थापित किए जाएं। सब खेत मज़दूर कृषि योग्य भूमि के निकट ही रहें (परन्तु उस ज़मीन पर नहीं) जहाँ वे काम करते हैं। इस प्रकार सामूहिक खेती-बाड़ी के सामान की सामूहिक मिल्कियत की प्रथा खत्म हो जाएगी और कृषि व्यवस्था इस प्रकार की हो जाएगी जिसमें किसान केवल उजरती मज़दूर बन जाएंगे।

सोशलिज्म से कम्यूनिज्म की ओर बढ़ने की इस विधि के कारण भूमि से खेत मज़दूरों का सम्बन्ध टूट जाएगा।

सी० पी० एस० यू० के वक्ता यह भी कहते हैं कि निजी बाग़ के लिए छोटे क्षेत्र देने की प्रथा बन्द कर दी जाए। वह सामुदायिक जीवन का प्रोत्साहन कर रहे हैं। यद्यपि वे कम्यूनिस्ट चीन के कम्यून सिस्टम के विरुद्ध हैं।

११. क्या कृषि के समूहीकरण से कृषि उपज में बढ़ोतरी हुई है ?

भूमि की प्रति इकाइ के अनुसार हिसाब लगाया जाए तो खेती के समूही-करण से प्रति हैक्टेयर उपज में केवल कोई वृद्धि नहीं होती, बल्कि अधिकतर कम्यूनिस्ट देशों में तो सामूहिक कृषि उपज भी कुछ नहीं बढ़ी।

पैदावार के मामले में पश्चिमी यूरोप, अमरीका तथा अन्य देशों के स्तर तक पहुँचने में सामूहिक खेती की असफलता के कई कारण हैं। एक कारण तो यह है कि प्रति व्यक्ति पीछे उपज बढ़ाने के लिए खेतों पर काम करने वालों और सामूहिक फार्मों के सदस्यों को कोई प्रोत्साहन नहीं दिया जाता। दूसरा कारण कम्यूनिस्ट ब्यूरोक्रैसी की अदक्षता है।

२५ दिसम्बर १९५९ को ख़ु श्चेव ने सी० पी० एस० यू० की केन्द्रीय कमेटी के सामने एक वक्तव्य में कहा कि कृषि उपज में कमी की जिम्मेदारी ब्यूरो-क्रैटिक अदक्षता तथा अयोग्यता पर आती है। उन्होंने बताया कि रूस में ऐसे नेता मौजूद हैं जो कृषि के बारे में कुछ नहीं जानते। इसलिए कृषि उपज के लक्ष्य हक़ीक़तों को सामने रखे बिना ही नियुक्त किए गए हैं।

खुश्चेव ने यह भी कहा कि १६,१०,००० हैक्टेयर (लगभग चालीस लाख एकड़) अनाज उगाने वाली भूमि बेकार पड़ी है क्योंकि १८००० ट्रेक्टर ३२,००० कम्बाईन, २१,००० ट्रक और ११,००० फसल काटने की मशीनें नाकारा हो चुकी थीं।

खुश्चेव ने इस बात को प्रकट किया कि खाने-पीने की वस्तुओं और अन्य चीज़ों की कमी की बहुत सी शिकायतें केन्द्रीय कमेटी को मिली हैं। सप्तवर्षीय योजना के अधीन १९५९ तक कृषि उपज को ८ प्रतिशत बढ़ना था परन्तु सी० पी० एस० यू० की सभा में जो आंकड़े पेश हुए उनसे प्रत्यक्ष था कि १९५८ के मुकाबले में कृषि उपज १० प्रतिशत गिर गई।

१९५९ में बलगारिया और पूर्वी जर्मनी में अन्न-संकट उत्पन्न हो गया था। पूरे उत्तरी यूरोप में उपभोज्य वस्तुओं की कमी रही और उनकी कीमतें चढ़ती रहीं।

पूर्वी जर्मनी के कम्यूनिस्ट अध्यक्ष वाल्टर उलबृच ने यह बात स्वीकार की कि वहाँ मूल फसलों की प्रति हैक्टेयर उपज पश्चिमी जर्मनी से बहुत कम है। उन्होंने इस समस्या के समाधान के लिए प्रस्ताव रखा कि खेतों के समूहीकरण का काम तेज़ कर दिया जाए। यद्यपि पूर्वी जर्मनी के किसान सामूहिक खेती के कट्टर विरोधी हैं।

१९५९ में हंगरी की सरकार ने बहुत ज़ोर डालकर सामूहिक फार्मों की संख्या में वृद्धि कर ही ली। उस वर्ष के अंत तक समस्त कृषि योग्य भूमि का ७० प्रतिशत भाग सामूहिक फार्मों में सम्मिलित कर लिया गया था। कोई ३,५०,००० व्यक्ति जबरदस्ती सामूहिक फार्मों में काम करने के लिए विवश कर दिए गए। परिणाम यह हुआ कि किसानों में बहुत हलचल और असंतोष पैदा हुआ और बहुत आर्थिक हानि हुई।

---

९ जुलाई १९६२ के समाचार पत्रों में एसोसीएटिड प्रेस का यह समाचार प्रकाशित हुआ :

कज़ाकिस्तान में कृषि संकट

फसल की कटाई रुकी पड़ी है

मास्को, ८ जुलाई ए० पी० ने समाचार दिया है कि सोवियत सरकार ने कल स्वीकार किया कि कज़ाकिस्तान के बड़े "नई खेती के प्रदेशों" में फसल की कटाई का काम गम्भीर संकट में है।

सोवियत सरकार और कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के हस्ताक्षरों से जारी किये गये एक वक्तव्य में कहा गया है कि कजाकिस्तान में कम्बाइन और आपरेटर तो कम हैं ही, यातायात की सुविधायें भी पर्याप्त नहीं हैं।

यह वक्तव्य पार्टी के समाचार पत्र "प्रावदा" के पूरे पहले पन्ने पर फैला हुआ है। इसमें कहा गया है कि केवल जेलीना के प्रदेश में ही ३५,००० कम्बाइन और २५,००० कटाई की मशीनें बेकार हो चुकी हैं। पोलोडर के क्षेत्र में केवल २० प्रतिशत कम्बाइन काम करने के योग्य हैं।

वक्तव्य में कहा गया है कि कजाकिस्तान की सरकार ने ७०,००० फसल काटने वालों के लिए अपील की है।

सोवियत प्रेस में पिछले दिनों यह समाचार आते रहे हैं कि मजदूर इन नई जमीनों पर रहने से इन्कार कर देते हैं क्योंकि वहाँ हालात कठिन और असह्य हैं। नई जमीनों को कृषि योग्य बनानेकी यह योजना नये प्रयोजनों में से है।

परन्तु इस बयान में इसकी कहीं व्याख्या नहीं की गई। इसमें कम्बाइनों के काम न करने का कारण यह बताया गया है कि सोवियत योजना अधिकारी पुर्जे देने में असफल रहे हैं। पिछले साल और इससे पिछले साल भी यही हालत थी।

—अनुवादक

ग्यारहवां अध्याय

कम्यूनिज़्म के अन्तर्गत पारिवारिक जीवन स्त्रियां और बच्चे

१. क्या कम्यूनिस्ट देशों में स्त्रियों को भी उच्च पदों पर नियुक्त किया जाता है ?

कुछ कम्यूनिस्ट देशों में स्त्रियों को भी उच्च पद मिले हुए हैं। रूस की शासन-व्यवस्था में केवल एक ही स्त्री उच्च पद पर नियुक्त है। अकाटैरीना फरजीवा सुप्रीम सोवियत की सदस्या हैं। मई, १९५० में उन्हें सांस्कृतिक मामलों की मन्त्रिणी वना दिया गया।

निर्वाचित स्थानों पर (जैसे सुप्रीम सोवियत) पुरुष सदस्यों के मुकावले में स्त्रियों की संख्या श्रमिक वर्गों में उनकी तादाद के अनुपात से वहुत ही कम है। पिछलग्गू देशों में भी छोटे पदों को महिलाएं पा सकती हैं परन्तु कम्यूनिस्ट पार्टी के उच्च अधिकारी केवल पुरुष ही वन सकते हैं।

गैर-कम्यूनिस्टों पर अत्याचार करने में महिला कम्यूनिस्ट अधिकारियों ने वहुत दक्षता दिखाई है। कम्यूनिस्ट पूर्वी जर्मनी में १९५३ की लोक क्रान्ति के वाद कठोरहृदयी कट्टर कम्यूनिस्ट महिला "रैड हिल्ड" वन्जामन को न्याय-मन्त्रिणी नियुक्त किया गया। उसने कम्यूनिस्ट सरकार के प्रमाणित तथा अदृष्ट विरोधियों पर ऐसे-ऐसे अत्याचार किए कि सारा देश कांप उठा। १९५६ में पार्टी के नेताओं ने उस पर कड़ी आलोचना और निन्दा की।

एनापोकर भी इतनी ही वदनाम थीं। वह रूमानिया की विदेशमंत्रिणी थीं। गैर-कम्यूनिस्टों को हानि पहुँचाने पर इन्हें भी इनाम दिया गया था। बाद में वह पार्टी की नजर से गिर गईं और उसे अधिकार से वंचित कर दिया गया। कम्यूनिस्टों ने जब शासन-प्रबन्ध अपने हाथ में लिया तो इस स्त्री ने ऐसा "लाल आतंक" फैलाया जिसकी बरावरी कम्यूनिस्ट बल्गारिया में ज़ोला ड्रीगाट शैंवा का वहशीपन ही कर सकता था।

२. स्त्रियों के संगठनों का कम्युनिस्ट देशों में क्या पार्ट होता है ?

कम्यूनिस्ट शासन में स्त्रियों के संगठन कम्यूनिस्ट पार्टी को बढ़ाने और शक्तिशाली बनाने में बड़े काम आते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में ये संगठन कम्यूनिस्ट प्रोपेगण्डा फैलाते हैं, पार्टी की हिदायतों को कार्यान्वित करते हैं। इसकी योजनाओं की सफलता में सहायता देते हैं। गैर-कम्यूनिस्ट स्त्रियों की संस्थाओं को ऐसे प्रोग्रामों में खींच लाते हैं जो कम्यूनिस्ट उद्देश्यों को बढ़ावा देने के लिए बनाए गए हों।

स्त्रियों के ऐसे संगठन कम्यूनिस्टों के प्रभाव में तो होते ही हैं परन्तु पार्टी की नीति के निर्णय में उनका कोई हाथ नहीं होता। (सोलहवां अध्याय देखिए)

३. सोवियत गृहिणी की क्या हैसियत है ?

सोवियत गृहिणी की सामाजिक पोज़ीशन इस बात पर निर्भर है कि सोवियत समाज के नये वर्गीय शासन प्रबन्ध समाज में इसका स्थान क्या है। यदि वह किसी बड़े सरकारी अधिकारी या उच्च फौजी अफसर की पत्नी है तो हर प्रकार के सुख और आराम के द्वार उसके लिए खुले हैं। उसे बहुत सी वे समाजी सुविधाएं भी मिल जाती हैं जो "पूंजीवादी" समाज में किसी स्त्री को प्राप्त हैं। परन्तु तमाम समाजी सम्बन्धों में उसका स्थान अपने पति के सामाजिक स्तर के अधीन होता है। पिछले दिनों तक उच्च सोवियत अधिकारियों की पत्नियां भी गुमनाम रही हैं।

सोवियत समाज के अन्य वर्गों में गृहिणी का काम दुहरा है। वह घर की देखरेख भी करती है और आजीविका भी कमाती है। और अधिक ध्यान उसे आजीविका जुटाने पर ही देना पड़ता है। सोवियत स्त्रियों के लिए काम के हालात वही हैं जो पुरुषों के हैं। उद्योग और खेती-बाड़ी में उन्हें अधिकतर अदक्ष काम का बोझ उठाना पड़ता है।

जुलाई १९५६ में सुप्रीम सोवियत के अधिवेशन को भूतपूर्व प्रधानमन्त्री बुल्गानिन ने विश्वास दिलाया था कि स्त्रियों को बहुत भारी काम नहीं दिलाया जाएगा परन्तु मज़दूरों की कमी ने स्त्रियों के हिस्से का भारी काम धीरे-धीरे और भी बढ़ा दिया है।

सोवियत यूनियन में अनुत्पादक स्त्री उसे कहा जाता है जो राज्य की अर्थ-व्यवस्था के किसी क्षेत्र में भी मुलाज़िम न हो। ऐसी स्त्री को समाजी तथा डाक्टरी संरक्षण का अधिकार प्राप्त नहीं होता। खाद्य-सामग्री के राशन, मकान

इत्यादि में उसका अधिकार कम से कम रखा गया है। इसके मुकाबले में सरकार की मुलाज़िम अभिनेत्रियां और वह स्त्रियां जिन्होंने किसी कला में ख्याति प्राप्त की हो, अच्छे वेतन पाती हैं और उनकी आय उच्च कर्मचारियों से कम नहीं होती।

सोवियत सरकार स्त्रियों के खेलों में भाग लेने को भी बढ़ावा देती है। ऐसी स्त्रियों को सरकार अन्य कर्मचारियों की तरह वेतन देती है चाहे वह कम ही हो।

४. कम्यूनिज्म के अन्तर्गत श्रमजीवी स्त्रियों की क्या हालत है ?

ऐसे कम्यूनिस्ट संसार में पुरुष और स्त्री की समानता का राग गाया जाता है। परन्तु चीनी सोवियत ब्लाक में कहीं भी स्त्रियों को कोई सुविधा नहीं दी जाती। समानता के नियम के अनुसार स्त्रियों को इस्पात की मिलों, जंगलाती लकड़ी के कैम्पों,रेलों, सड़कों आदि सभी स्थानों पर मज़दूरी करनी पड़ती है। निर्माण कार्यों में वे ऊंचाई पर सामान भरी परातें पहुँचाती है, सड़कें साफ करती हैं,लकड़ी चीरती हैं, भट्ठी झोंकती हैं, मशीनों पर काम करती हैं, बढ़ई बनती हैं और इस प्रकार के बीसियों काम करती नजर आती हैं। परन्तु उनके निरीक्षक कुछ धन्धों को छोड़कर, प्रायः पुरुष ही होते हैं।

जो स्त्रियां प्रशिक्षण इत्यादि के काम में लगी हुई हैं, उनके काम को प्रोपेगण्डा के लिए अधिक महत्व दिया जाता है। रूस में चिकित्सा और डाक्टरी के पेशों में स्त्रियों की संख्या काफी है। अन्य पेशों में भी स्त्रियों को स्थान मिल जाता है। परन्तु पिट्ठू देशों में शिक्षा सम्बन्धी पेशों में स्त्रियों की संख्या कम ही है।

कम्यूनिस्ट प्रवक्ता रूस और पूर्वी यूरोप के कम्यूनिस्ट देशों में स्त्रियों की "बराबरी" का बहुत शोर मचाते हैं। परन्तु श्रमिक वर्ग की स्त्रियों को जहां कुछ अधिकार मिल गए हैं, वहां उन्हें सरकार की ओर से नियुक्त किए गए भारी कामों को करना पड़ता है। स्त्रियों की बड़ी भारी संख्या को घटिया और कम पारिश्रमिक वाला काम दिया जाता है जहां उन्नति के अवसर न होने के बराबर होते हैं।

चेकोस्लोवाकिया की कम्यूनिस्ट पार्टी की निजी पत्रिका "रोड परावो" ने अपने ७ जनवरी, १९५७ के अंक में इस दोष को स्वीकार किया है कि "बहुत से ट्रेड यूनियन अधिकारी प्रायः बिना किसी उचित कारण के स्त्रियों के काम

को और उनकी योग्यताओं को हीन समझते हैं और उन्हें जिम्मेदारी का काम सौंपने से सकुचाते हैं।

चेकोस्लोवाकिया में काम के हालात पूर्वी यूरोप के अन्य देशों से थोड़े बेहतर हैं परन्तु वहां भी स्त्रियां भूमि के नीचे युरेनियम की खानों में काम करती हैं, लोहे के कारखानों में मज़दूरी करती हैं। इस्पात की एक मिल में दो सौ महिलाओं ने शिकायत की कि उन्हें रात की शिफ्ट में केवल इसलिए काम करना पड़ता है कि उन मज़दूरों का स्थान ले सकें जिन्हें पार्टी के जलसों में जाना होता है। जब इस अन्याय के विरुद्ध प्रदर्शन किया तो पुलिस ने उन्हें तितर-बितर कर दिया।

१९५९ में पिट्ठू सरकारों ने भी रूस की देखा-देखी "श्रमदान" का आंदोलन चलाया। सब पुरुष और महिलाएं इसकी लपेट में आ गए तथा स्कूलों के विद्यार्थी भी बच नहीं पाए। अपने काम के अतिरिक्त नर-नारी तथा बच्चे श्रमदान देते थे उसका उन्हें कोई पारिश्रमिक नहीं मिलता था जैसे पूर्वी जर्मनी में स्कूल के बच्चों को सप्ताह में एक दिन बिना किसी पारिश्रमिक के काम करना पड़ता था। उस दिन को "उत्पादन-दिवस" कहा जाता है।

५. काम करने वाली माताओं को सोवियत यूनियन में क्या सुविधाएं प्राप्त हैं?

काम करने वाली माताओं और गर्भवती स्त्रियों को प्रसूति अवकाश मिलता है। १९४४ के कानून के अनुसार यह अवकाश ७७ दिन का होता है। ३५ दिन की छुट्टी बच्चे के जन्म लेने से पूर्व और ४२ दिन बाद में दी जाती हैं। जो महिलाएं सामाजिक संरक्षण की सुविधाओं की अधिकारी हैं उनको हस्पताल का खर्च बीमा कम्पनियां देती हैं। इन सुविधाओं के अतिरिक्त बहुत-सी सोवियत माताओं को सरकार की ओर से बच्चों के कपड़े और कुछ नकद अलाऊंस भी मिलता है।

यद्यपि सोवियत माताओं को यह सुविधाएं प्राप्त करने का कानूनी अधिकार है फिर भी इनका मिलना इतना आसान नहीं। सरकारी लाल फीते के कारण कारखाने के अधिकारियों की बेरुखी की वजह से इन सुविधाओं के मिलने में देर भी हो जाती है। कारखाने के डायरेक्टर कोशिश करते हैं कि उनकी मज़दूर संख्या कम न होने पाए। इससे काम करने वाली माताओं के लिए कानूनी संरक्षण व्यर्थ हो जाते हैं।

एक बात और भी है। कुछ बड़े-बड़े नगरों को छोड़ कर जहां काम करने

वाली महिलाओं के लिए प्रसूति प्रबंध उपलब्ध हैं, छोटे नगरों और ग्रामों में चिकित्सा की सुविधाएं और बच्चों की देखरेख के प्रबंध या तो कम हैं या सिरे से हैं ही नहीं।

६. कम्यूनिस्ट देशों में माताओं के काम करते समय उनके छोटे बच्चों की देखरेख किस प्रकार होती है ?

अधिकांश कारखानों में नरसरियां होती हैं। ये दो मास से तीन वर्ष के बच्चों की देखरेख करती हैं। तीन साल से सात साल के बच्चों के लिए किण्डर-गार्टन हैं। वहां बच्चों की देखरेख की फीस ली जाती है। बच्चे के पालन-पोषण पर जो खर्च आता है उसका एक तिहाई से एक चौथाई तक माता-पिता देते हैं, बाकी सरकार अथवा प्रवर्तक संस्थाओं के ज़िम्मे होता है।

बच्चों की देखरेख करने वाले केन्द्रों के सम्बन्ध में एक शिकायत आम है कि वहाँ अधिक सुविधाएं उपलब्ध नहीं होतीं। नियुक्त संख्या से कहीं अधिक बच्चे भर्ती कर लिए जाते हैं। अकुशल लोगों के हाथों में उनका प्रबंध कभी ठीक नहीं होता। बड़े नगरों से बाहिर ये त्रुटियां और भी आम हो जाती हैं।

इन शिकायतों का नमूना एक सोवियत सैनिक की पत्नी का पत्र है जो उसने स्थानीय समाचार पत्रिका को लिखा था। "मैं काम पर नहीं जा सकती क्योंकि घर में कोई भी नहीं है जिसके पास बच्चों को छोड़ सकूं। एक मास से मैं इन्हें नरसरी में प्रवेश दिलाने का प्रयत्न कर रही हूँ परन्तु वहां से हर बार यही उत्तर मिलता है कि बस नरसरी नई शाखा खुलने की देर है कि मेरे बच्चों को दाखिल कर लिया जाएगा। परन्तु यह कोई नहीं बताता कि वह शुभ दिन कब आएगा।" (लेनिनस्कोया जुआन्या में प्रकाशित एक पत्र से)

७. क्या यह सच है कि कम्यूनिस्ट सरकारें बच्चों को माता-पिता के प्रभाव से दूर कर देती हैं ?

मार्क्सवादी तथा लेनिनवादी शिक्षाप्रणाली, जो सब कम्युनिस्ट देशों में प्रचलित है बच्चों को माता-पिता के प्रभाव से दूर करने का एक महत्त्वपूर्ण साधन है। कम्यूनिस्ट स्कूलों में प्रशिक्षण तथा कम्यूनिस्टों की चलाई हुई युवकों की संस्थाएं बच्चों पर नियन्त्रण रखने में सहायक सिद्ध होती हैं।

पारिवारिक सम्बन्ध नाममात्र रह जाने का एक कारण यह भी है कि कम आय के कारण माता और पिता दोनों काम करने के लिए विवश होते हैं। एक साधारण शिक्षित सोवियत कारीगर आठ सौ रुबल प्रतिमास या इससे भी

अधिक कमाता है परन्तु दो बड़ों और दो बच्चों के छोटे से कुटुम्ब का केवल मकान के किराए अथवा खाने-पीने पर एक हज़ार रूबल उठ जाता है। इसलिए पत्नी के काम किए बिना गुजारा नहीं होता। यदि वह अशिक्षित है तो उसे अपने पति से केवल आधा वेतन मिलेगा।

काम का समय भी काफी लम्बा होता है। छयालीस घंटे का सप्ताह गिना जाता है परन्तु वास्तव में इससे भी बढ़ जाता है क्योंकि मज़दूरों के सिर पर काम का कोटा पूरा करने की तलवार लटकती रहती है। होता यह है कि बच्चे प्रातः से सायं छः बजे तक सरकारी संस्थाओं के निरीक्षण तथा निर्देशन में रहते हैं। स्कूल के बाद युवक संस्थाएं इत्यादि बच्चों के मस्तिष्क में कम्यूनिस्ट सिद्धान्त बिठाती हैं। धर्म विरोधी प्रचार निरन्तर होता रहता है। बच्चे को सिखाया जाता है कि उनकी निष्ठा का प्रथम पात्र कम्यूनिस्ट प्रशासन हैं; घर नहीं।

८. सोवियत रूस में उत्पादन क्षेत्रों में महिलाओं के बलात् प्रवेश से पारिवारिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

उत्पादन क्षेत्र में और श्रम के अन्य कार्यों में महिलाओं के बलात् प्रवेश से सोवियत यूनियन में मज़दूरों की कुल संख्या तो अवश्य बढ़ गई है परन्तु व्यक्ति और परिवार को इसका बहुत बड़ा मूल्य देना पड़ा है।

दिन भर सोवियत महिला जीविका कमाने के लिए कमर तोड़ काम करती है। कभी-कभी तो उसे वह कठिन काम भी करना पड़ता है जिससे महिलाओं को स्वतंत्र देशों में वर्जित किया गया है।

काम पर जाने से पहले सोवियत महिला को खाद्य सामग्री की दुकान पर लम्बी लाईन में खड़ा होना पड़ता है। यहाँ आकर उसे प्रायः यह सूचना मिलती है कि बहुत से आवश्यक खाद्य-पदार्थ खत्म हो गए हैं या मिल नहीं सकते। उसके लिए और उसके पति के लिए वर्कशाप के जलसों में शिक्षा सम्बंधी लैक्चरों में या यूनियन और कम्यूनिस्ट पार्टी के अन्तर्गत होने वाली कार्य-विधियों में शामिल होना अनिवार्य है। इस प्रकार उन्हें कई-कई सप्ताह आपस में मिल बैठने का अवसर नहीं मिलता।

९. कम्यूनिज्म के अधीन माता-पिता का क्या रोल है ?

१८ अक्तूबर, १९५२ को कम्यूनिज़्म के अधीन माता-पिता के रोल के विषय में एक भाषण प्रसारित किया गया था इससे पता चलता है कि सरकार

की दृष्टि में माता-पिता का क्या उत्तरदायित्व है।

इस भाषण में बताया गया था : "कम्यूनिस्ट नैतिकता की आत्मा को सामने रखते हुए बच्चे के प्रशिक्षण में परिवार के वयोवृद्ध व्यक्तियों और माता-पिता का बड़ा भाग है। यदि माता-पिता सच्चे तथा भावुक देशभक्त हैं और सामाजिक कार्यविधियों में भाग लेते रहते हैं, पंचवर्षीय योजनाओं को पूरा करने में अपना कर्तव्य पालन करते हैं, दूसरों की उनके कामों में और परिवार की देखभाल में सहायता करते हैं तो बच्चों का स्वयं ही उचित प्रशिक्षण होता रहता है।"

इस प्रकार माता-पिता का कर्तव्य यह है कि कम्यूनिस्ट पार्टी की कार्यविधियों को आगे बढ़ाएं। प्रारम्भ ही से बच्चे की देख-रेख तथा प्रशिक्षण पार्टी की इच्छानुसार करें। इस प्रकार बच्चों पर सरकार का नियंत्रण सुदृढ़ हो जाता है।

इसके अतिरिक्त कम्यूनिस्ट यह प्रयत्न भी करते हैं (यद्यपि इसमें अभी अधिक सफलता नहीं हुई) कि विवाह सैद्धान्तिक आधार पर हों। एक सरकारी कम्यूनिस्ट प्रकाशन का आदेश है : "जीवन साथी चुनते समय एक कम्यूनिस्ट नवयुवक को यह देखना चाहिए कि दूसरे पक्ष के राजनीतिक विचार ठीक हों। इसके पश्चात् शिक्षा, स्वभाव, स्वास्थ्य और रंग-रूप पर ध्यान देना चाहिए।"

१०. सोवियत यूनियन में साधारण श्रमिकों के परिवार को किस प्रकार की डाक्टरी सहायता दी जाती है ?

सोवियत यूनियन में उच्च वर्ग के परिवारों को हर प्रकार की चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएँ प्राप्त हैं। वह योग्य डाक्टरों से इलाज करा सकते हैं। इसके उलट साधारण श्रमिकों के लिए चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं कम होती हैं। सामूहिक रूप से पूरे रूस में ७०० व्यक्तियों के लिए एक डाक्टर है। परन्तु नगरों में चूंकि डाक्टर अधिक संख्या में होते हैं इसलिए कुछ ग्राम्य क्षेत्रों में दस हज़ार व्यक्तियों के लिए केवल एक डाक्टर है।

११. क्या सोवियत पंचवर्षीय योजनाओं से साधारण श्रमिकों की क्रयशक्ति में कोई बढ़ोतरी हुई है ?

सोवियत यूनियन में पंचवर्षीय योजनाओं से जनता की क्रयशक्ति नहीं बढ़ी है। पहली पंचवर्षीय योजना १९२८ में आरम्भ हुई थी। जबसे १९६० तक साधारण श्रमिकों के वेतन में जितनी वृद्धि हुई है, रोज़ के इस्तेमाल की चीजों के मूल्य उससे अधिक तेजी से बढ़े हैं।

सात खाद्य वस्तुओं का—रोटी, आलू, गोश्त, मक्खन, अण्डे, दूध, शक्कर—सप्ताह भर का राशन खरीदने के लिए सोवियत मज़दूर को १९२८ के मुकाबले में आज लगभग ४० प्रतिशत अधिक काम करना पड़ता है।

अक्तूबर, १९५९ में सोवियत अर्थ-व्यवस्था में एक नई प्रथा आरम्भ की गई जिसके अनुसार उपभोज्य वस्तुओं की सीमित मात्रा क़िस्तों में खरीदने के सिस्टम को कानूनी मान लिया गया। १५, अक्तूबर को सी० पी० ए० यू० की विज्ञप्ति में कहा गया कि देर तक चलने वाली वस्तुओं का उत्पादन बढ़ाया जाए। इन्हीं दिनों मास्को के पत्र-पत्रिकाओं में यह समाचार छपे कि जुराबों, धागे, बुने हुए कपड़ों, हल्के-फुल्के जूतों, सुन्दर कपड़ों और अन्य आवश्यक वस्तुओं की कमी है और उनकी क्वालिटी घटिया है।

१२. क्या रूस में साधारण मज़दूरों पर करों का अधिक बोझ है ?

सोवियत यूनियन में साधारण मज़दूर पर प्रत्यक्ष कर तो अधिक नहीं हैं परन्तु उसे और बहुत-सी जिम्मेदारियाँ निभानी पड़ती हैं। उदाहरण के लिए सरकारी बाण्ड खरीदना, यूनियन का चन्दा और बक़ाया देना इत्यादि। इस प्रकार उसका वेतन बहुत ही कम रह जाता है। सबसे अधिक बोझ तो बिक्री टैक्स का है। यह तमाम आमदनियों पर एक छिपा हुआ कर है। इसके कारण प्रत्येक वस्तु ७० प्रतिशत महंगी हो जाती है।

औसत औद्योगिक वेतन पर, जो कि ७००-८०० रूबल प्रति मास तक होता है, ५०० रूबल तक कर पांच प्रतिशत है। इससे ऊपर ७०० रूबल तक कर की दर १० प्रतिशत है।

२७ सितम्बर, १९५९ को ख़ुश्चेव ने घोषणा की कि "निकट भविष्य में जनता पर से तमाम कर उठा लिए जाएँगे।" तथापि आयकर जो १९५९ में सरकारी आमदनी का ७.८ प्रतिशत था, सोवियत बजट में अधिक महत्व नहीं रखता। जैसे १९५९ में सोवियत जनता की ओर से आय-कर, विशेषकर तथा रिपब्लिक टैक्स के रूप में दिए जाने वाले कुल टैक्स से बिक्री तथा मुनाफा टैक्स सात गुना अधिक था।

आय-कर खत्म हो जाने से सोवियत नागरिकों की आमदनी कुछ बढ़ जाएगी परन्तु इसका कोई लाभ नहीं होगा क्योंकि सोवियत परिवार को पहले से ५० से १०० प्रतिशत तक अधिक बिक्री टैक्स देना पड़ेगा।

१३. क्या सोवियत रूस में सब श्रमिकों को सामाजिक सुरक्षा के अधीन लाया गया है ?

लगभग आधे सोवियत श्रमिकों, जिनमें ३ करोड़ तीस लाख खेत मज़दूर भी शामिल हैं, पर सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था लागू नहीं होती, इण्टरनेशनल लेबर रिव्यू की रिपोर्ट के अनुसार सोवियत श्रमिक को नौकरी के पहले छः मास में चिकित्सा की सुविधा नहीं मिलती और उसे डाक्टरी इलाज के लिए पूरा खर्च उसी समय दिया जाता है जब वह एक ही स्थान पर दस साल तक काम करता रहे।

सामाजिक सुरक्षा के अधीन श्रमिकों को सात वर्ष की आयु पा लेने पर पेंशन का अधिकार मिल जाता है यदि उन्होंने २५ वर्ष तक निरन्तर काम किया हो। महिलाओं को ५५ वर्ष की आयु में पेंशन मिल सकती है यदि उनके निरन्तर काम की अवधि २० वर्ष हो। यह सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था सोवियत सरकार के साथ में ऐसा हथियार है जिससे वह श्रमिकों को एक ही जगह पर आयु भर एक ही काम करने पर विवश कर सकती है।

सुप्रीम सोवियत के १२ जुलाई, १९५६ के अधिवेशन में भूतपूर्व प्रधान-मंत्री निकोलाई बुलगानिन ने एक नई पेंशन योजना घोषित की जो उनके अपने शब्दों में "पहली पेंशन योजना से बहुत बेहतर थी।" नए पेंशन कानून के अनुसार प्रत्येक सोवियत नागरिक को जिसने २० से २५ वर्ष तक काम किया हो; कम से कम ३०० रूबल तथा अधिक से अधिक १२०० रूबल पेंशन पाने का अधिकार मिल गया।

सोवियत संघ में मजदूरों पर आन्तरिक पासपोर्ट तथा "काम के हिसाब-किताब की पुस्तक" के सिस्टम द्वारा कड़ा नियंत्रण रखा जाता है। प्रत्येक मज़दूर के पास उसकी "वर्क बुक" का होना अनिवार्य है। इसमें उसकी नौकरी का पूरा रिकार्ड होता है।

१४. क्या मज़दूरों को आरामघरों इत्यादि में मुफ्त ठहरने की सुविधा है ?

साधारण मज़दूरों को ऐसी सुविधाएँ प्राप्त करने के लिए इनका मूल्य देना पड़ता है परन्तु "तीव्र गति से काम" करने वाले मज़दूरों तथा कम्यूनिस्ट पार्टी के अधिकारियों को विशेष सुविधाएं दी जाती हैं। यद्यपि आरामघरों या स्वास्थ्यीय स्थानों में रहने का खर्च अधिक नहीं है परन्तु उसमें सफर का खर्च भी मिला दिया जाए तो यह साधारण मजदूर की पहुँच से बाहर हो जाते हैं

और उसका परिवार भी उसके साथ नहीं जा सकता।

इन स्थानों में जाने के योग्य सोवियत मजदूरों में से केवल एक प्रतिशत को प्रति वर्ष वहां मुफ्त रहने की इजाजत मिलती है। इन स्थानों पर आमतौर पर कम्यूनिस्ट पार्टी के अधिकारी, शासक तथा अन्य विशेषाधिकार पाने वाले व्यक्ति ही मौज मनाते हैं।

१५. क्या कम्यूनिस्ट देशों में बच्चों को अपने माता-पिता पर जासूसी करना सिखाया जाता है ?

कम्यूनिस्ट देशों में बच्चों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाता है कि वह कम्यूनिस्ट पार्टी के निर्देशानुसार चलने में अपने माता-पिता तथा अध्यापकों की असफलता की रिपोर्ट करें। मास्को में क्रास्नोप्रैस्नसक बाल उद्यान में पव्लिक मोरोजोफ का एक बुत लगा है जिसने बारह वर्ष की आयु में, पाओनीयर सदस्य होने के नाते अपने पिता की अधिकारियों से शिकायत की थी कि उसने अनाज इकट्ठा करने वाले अधिकारियों से कुछ अनाज छिपा लिया है। मोरोजोफ के पिता को दस वर्ष के लिये जबरी श्रम के कैंप में भेज दिया गया। पाओनीयर तथा कोमसोमोल के सदस्यों को "महान् पव्लिक" की उपासना करने के लिए सरकारी तौर पर प्रोत्साहित किया जाता है।

१६. क्या सोवियत संघ में नवयुवा अपराधी हैं ?

१६ अक्तूबर, १६५६ को रेडियो मास्को ने दावा किया कि सोवियत संघ में नवयुवापराध की समस्या अब खत्म हो गई है। परन्तु इस दावे का खंडन मास्को प्रेस में बिगड़े हुए नवयुवकों की सरगर्मियों के बारे में छपने वाले समाचारों से होता है। स्वतन्त्र देशों में उद्दण्ड नवयुवकों की अनैतिक सरगर्मियों को ही नवयुवापराधियों के अस्तित्व का प्रमाण समझा जाता है।

१६५६ से पार्टी तथा सरकार नवयुवकों के दुराचार तथा कुकर्मों की रोक-थाम की ओर अधिक ध्यान देने लगी है। इस सम्बन्ध में १६५६ में जारी किए गए दो प्रोग्रामों से अनुमान होता है कि स्थिति काफी गम्भीर है।

तथाकथित "जनता के जत्थे" (पीपल्ज़ स्क्वैड) जो १६५८ में कुछ गिने चुने नगरों में बनाए गए थे, अब हर स्थान पर बना दिये गये हैं। इन जत्थों में औद्योगिक मजदूर, सामूहिक फार्मों के किसान तथा अन्य राजकीय संस्थानों के कर्मचारी शामिल होते हैं और उनका काम यह होता है कि कुकर्मी नवयुवकों का सुधार वहीं पर किया जाए जहाँ वह काम करते हैं।

जत्थे का अध्यक्ष विश्वस्त पार्टी सदस्यों या कोमसोमोल के मेम्बरों को बनाया जाता है और उन्हें अनुशासन विरोधी कार्रवाइयों तथा दुराचारों की रोक-थाम का अधिकार होता है। उन्हें यह अख्तियार भी है कि सामान्य कानून का तोड़ने वालों की रिपोर्ट "सहयोगी अदालतों" (काम्रेडली कोर्टस को करें)। (छठा अध्याय देखिए)

नागरिकों के यह जत्थे शहरी पुलिस या मिलिश्या से अलग होते हैं, इसलिए इनके विरुद्ध शिकायतें आई हैं कि इन्होंने अपने अधिकारों का उल्लंघन करके लोगों के निजी मामलात में भी हस्तक्षेप किया है।

रूस में युवावस्था की समस्या का प्रमाण इस घोषणा से भी मिलता है जो सोवियत सरकार ने अक्तूबर, १९५९ को की। इस घोषणा में नवस्थापित नवयुवक आयोगों के विषय में व्यवहार विधि का उल्लेख किया गया था। इन आयोगों को जिला, नगर तथा प्रादेशिक कम्यूनिस्ट पार्टियों ने स्थापित किया है। इनके जिम्मे दुहरा काम था : कुकर्मी नवयुवकों को कानून भंग करने से रोकना तथा कानून तोड़ने की सूरत में दण्ड देना और इन नवयुवकों के माता-पिता के विरुद्ध कानूनी चाराजोई करना। अवयस्क बच्चों के दुराचार के लिए उनके बुज़ुर्गों को जिम्मेदार ठहराया जाता है।

ग्यारह वर्ष की आयु से ऊपर के अवयस्क बालकों को सामाजिक दृष्टि से खतरनाक काम करने या सामान्य कानून का बार-बार उल्लंघन करने के लिए अपराध में तीन साल तक शैक्षिक बस्तियों में भेज दिया जाता है।

१७. कम्यूनिज्म को पारिवारिक जीवन के लिए खतरा क्यों समझा जाता है?

मार्क्सी-लैनिनी सिद्धान्तों के अनुसार परिवार को "स्टेट मशीन का आज्ञाकारी तथा अनुशासित" कम्यूनिस्ट पैदा करने वाला भाग समझा जाता है।

सोवियत राज्य या इसकी विभिन्न संस्थाओं के अधिकारी या स्थानीय कम्यूनिस्ट पार्टी के नेता जब चाहें तब सोवियत परिवार का निरीक्षण तथा निगरानी करने के हकदार हैं। बच्चों को अधिक समय तक माता-पिता की निगरानी तथा देखभाल से दूर रखा जाता है। माता-पिता भी अपने काम के हालात तथा रहन-सहन की स्थिति के कारण प्रायः अपने बच्चों से अलग ही रहते हैं?

बारहवां अध्याय

कम्यूनिज़्म में व्यापार

१. क्या सोवियत यूनियन में व्यापार इसी प्रकार होता है जैसे अन्य देशों में ?

सोवियत देश का विदेशी व्यापार स्वतन्त्र देशों से कई प्रकार से भिन्न है। रूस में व्यापार का सबसे अधिक उत्कृष्ट पहलू यह है कि इस पर सरकार का पूर्ण अधिकार है।

स्वतन्त्र देशों में व्यापार प्रायः पराइवेट व्यक्तियों तथा कम्पनियों के हाथ में रहता है। वही मांग और सप्लाई का हिसाब लगाकर निर्णय करते हैं कि कितने माल का निर्यात किया जाएगा और किन देशों को किया जाएगा।

सोवियत यूनियन और अन्य कम्यूनिस्ट देशों में विदेशी तथा देश के भीतर व्यापार पर सरकार का पूर्ण नियन्त्रण होता है। वह सब माल की मालिक है। इसे बाज़ार में बेचती है। सोवियत यूनियन में निर्यात तथा आयात दोनों विदेशी व्यापार के मंत्रालय के अधिकार में हैं। वास्तविक ट्रेड एजन्सियाँ (Trade Agencies) और ट्रस्ट (Trusts) व्यापार के व्यवहारिक पहलुओं को देखते हैं और उनका आधार अन्य सरकारों अथवा निजी संस्थानों से की गई व्यापार सन्धियों पर होता है।

ऐसी बहुत-सी सन्धियां प्रायः राजनीतिक तथा प्रोपेगण्डा के लाभ के लिए की जाती हैं।

२. सोवियत व्यापार को प्रभावित करने वाली मुख्य बातें क्या हैं ?

सोवियत कम्यूनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी द्वारा निर्धारित पालिसियों और उनके अनुसार निश्चित राजनीतिक लक्ष्यों का सोवियत विदेशी व्यापार पर बहुत प्रभाव पड़ता है। सोवियत यूनियन की औद्योगिक तथा सैनिक आवश्यकताओं को निश्चित करना और उनमें ताल-मेल पैदा करना सी० पी० एस० यू० का उत्तरदायित्व है और उक्त आवश्यकताओं को सामने रखकर ही आयात का प्रोग्राम बनाया जाता है। सोवियत निर्यात भी राजकीय योजना के अधीन

निर्यात के लिए उत्पादित सामग्री की मात्रा और क़िस्म पर ही आधारित है।

सोवियत निर्यात की मात्रा निश्चित करने में इस बात को भी दखल है कि सोवियत सरकार को देश में पैदा न होने वाली वांछित सामग्री के लिए कितनी विदेशी मुद्रा की आवश्यकता है। सोवियत निर्यात और आयात व्यापार का मुख्य भाग उन देशों से होता है जिनसे सोवियत यूनियन बहुत गहरे सम्बन्ध पैदा करने या बनाए रखने की इच्छुक होती है।

३. मार्क्सवाद-लेनिनवाद ने सोवियत विदेशी व्यापार पर क्या प्रभाव डाला है?

मास्को की व्यापार नीति पर मार्क्सवादी तथा लेनिनवादी विचारधारा का प्रायः गहरा प्रभाव पड़ा है। कम्यूनिस्ट नीतियों में परिवर्तन के साथ-साथ सोवियत विदेशी व्यापार के रुख भी बदलते रहे हैं।

उदाहरण के लिए जब तक अप्रैल, १९५२ की मास्को अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक कांफ्रेंस (एम०आइ०ई०सी०) नहीं हुई थी, रूस के व्यवहार से प्रत्यक्ष था कि वह पूर्व तथा पश्चिम के बीच व्यापार आर्थिक लाभ की दृष्टि से अर्थात् संबंधित देशों के परस्पर लाभ के लिए कर रहा है। कांफ्रेंस के दौरान में भी रूस का व्यवहार ऐसा ही रहा।

परन्तु १९५२ में स्तालिन का एक लेख सरकारी पत्रिका "बोलशिवक" में प्रकाशित हुआ। इससे रूस की विदेशी व्यापार नीतियों में निर्णायक परिवर्तन हुए। स्तालिन ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के आधार पर यह दलील दी कि अन्तर्राष्ट्रीय मण्डी में साम्राजी अन्तर्विरोध "पूंजीपति देशों" के भीतर व्यापारिक युद्ध तथा झगड़ों को जन्म देंगे। इसलिए कम्यूनिस्ट ब्लाक को परस्पर स्वावलम्बी व्यापार का विकास करना चाहिए। सैद्धान्तिक पृथक्ता और "दो समान अक्षवृत्त अन्तर्राष्ट्रीय मण्डियों" के दृष्टिकोण ने सोवियत व्यापार पर भारी प्रभाव डाला। उनकी कल्पना में एक मण्डी लौह आवरण के पीछे थी और दूसरी बाहर। परिणाम यह हुआ कि स्वतन्त्र देशों में सोवियत सरकार का व्यापार-वाणिज्य मंदा पड़ गया।

मार्च, १९५३ में स्तालिन की मृत्यु हुई। दो मास के भीतर ही नई सरकार ने, प्रधानमंत्री जार्जी मेलिनकोव के नेतृत्व में "व्यापारिक आक्रमण" आरम्भ कर दिया। मास्को आर्थिक कांफ्रेंस के पश्चात् व्यापार सम्बन्धी यह सबसे बड़ा अभियान था। एक वर्ष बीत जाने के पश्चात् मेलिनकोव ने घोषणा की कि सोवियत सरकार सब पूंजीवादी देशों के साथ, जिनमें अमरीका भी शामिल

है, सोवियत यूनियन के शान्तिपूर्ण आर्थिक मुकाबले की समर्थक है।

इसके बाद से विदेशी व्यापार के सम्बन्ध में सोवियत प्रापेगण्डा तथा सरगर्मियां इतनी वढ़ चुकी हैं कि "शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व" के समर्थन में मास्को की ओर से जितना प्रापेगण्डा होता है उतना ही प्रचार विदेशी व्यापार के वारे में किया जाता है। वैसे भी पूर्व और पश्चिम के बीच व्यापार का विकास "सहअस्तित्व" की नीति का महत्वपूर्ण अंश है। मास्को की ओर से घोषणा तो वार-वार की जाती है कि वह विदेशी व्यापार बढ़ाने की इच्छुक है, परन्तु सोवियत सरकार ऐसे उत्तरदायित्व अभी तक निभा नहीं सकी है जो व्यापारिक संधियों के अन्तर्गत उस पर लागू होते हैं, सोवियत ब्लाक दैनिक आवश्यकता की वस्तुओं की अपेक्षा सैनिक सामान खरीदना चाहता है। अर्ध नवम्वर, १९५५ में हुई जेनेवा कांफ्रेंस में तो सोवियत विदेशमन्त्री मोलोटोव ने यह बात बहुत स्पष्टता से कही थी।

कम्यूनिस्ट देशों के विदेशी व्यापार का अधिकांश चीनी-सोवियत ब्लाक के भीतर ही सीमित रहता है। इस सारे कारोवार पर केन्द्रीय शासकों का नियन्त्रण रहता है।

४. कम्यूनिस्ट देशों के विदेशी-व्यापार का फैलाव कितना है?

कम्यूनिस्ट ब्लाक के व्यापार का ठीक अनुमान लगाना कठिन है क्योंकि मुद्रा विनिमय का साधन ब्लाक की मुद्राएं नहीं हैं। कम्यूनिस्टों की सरकारी मुद्रा विनिमय से ब्लाक के व्यापार का मुद्रा (जैसे डालर) में हिसाव लगाया जाता है तो सामूहिक व्यापार असल से कहीं अधिक दिखाई देता है।

"सोशलिस्ट देशों की मण्डी और पूंजीवादी मण्डी" के बीच में व्यापार में कोई विशेष अदला-बदली नहीं हुई। १९५२ में इन दो मण्डियों के बीच व्यापार स्थिर रहा। इस वर्ष में इन दो मण्डियों के बीच व्यापार विश्व भर के वाणिज्य का २.२ प्रतिशत था १९५८ में इसमें कुछ वृद्धि हुई और यह २.९ प्रतिशत हो गया। कम्यूनिस्टों की ओर से प्रस्तुत मुद्रा-विनियम के आंकड़ों के अनुसार १९५० के बाद के दशक में कम्यूनिस्ट कैम्प का विश्व व्यापार में भाग काफी बढ़ा। १९५२ में यह ९.२ प्रतिशत था तथा १९५८ में १३.७ प्रतिशत हो गया। परन्तु यथार्थिक अनुमान के अनुसार १९५८ में कम्यूनिस्ट देशों का व्यापार १० प्रतिशत के लगभग था। १९५८ में ब्लाक का कुल व्यापार का ७८ प्रतिशत भाग ब्लाक के भीतर ही जिनस के रूप में हुआ।

कम्यूनिस्ट सूत्रों से मिलने वाले समाचारों के अनुसार पिछड़े देशों से ब्लाक के व्यापार का १९५२ में कुल मूल्य १,२२,००,००,००० डालर था १९५८ में यह बढ़कर २,५८,०००,००० डालर हो गया। इस वृद्धि के बावजूद यह रकम उस व्यापार का एक तुच्छ अंश है जो पिछड़े देशों और ग़ैर कम्यूनिस्ट देशों के बीच होता है।

५. रूस से किन वस्तुओं का निर्यात होता है ?

रूस में प्राकृतिक साधन बहुत ज्यादा हैं, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि खनिज पदार्थों के अतिरिक्त इसे ऐसी ही अन्य वस्तुओं के निर्यात के प्रति अपना वचन निभाने में कठिनाई होती है। मास्को ने ऐसी बहुत-सी व्यापार सन्धियां कर रखी हैं जिनके अन्तर्गत इसे औद्योगिक वस्तुएं निर्यात करनी पड़ती है।

रूस की पौराणिक निर्यात वस्तुएं, अनाज और लकड़ी आज भी सोवियत यूनियन में कम पैदा होती हैं। कम्यूनिस्ट पार्टी के मन्त्री निकिता ख्रुश्चेव ने रूस में अनाज तथा लकड़ी की अल्प उपज पर कटु शब्द कहे हैं। अन्य कच्चा माल जैसे अशोधित तेल और कोयला रूस की औद्योगिक तथा सैनिक संस्थापनों की खपत के लिए ही पूरा होता है।

१९५४ के बाद सोवियत सरकार ने स्वतन्त्र देशों से व्यापारिक संधियां तो बहुत की हैं परन्तु विनिमय सूची में लिखित वस्तुओं के देने में प्रायः असमर्थ रही है या अनिच्छुक रही है।

१९३८-१९५८ में सोवियत निर्यात व्यापार में बहुत से परिवर्तन हुए हैं। मशीनें और औज़ार, धातुएं और धातुओं से बना सामान, जो १९३८ में सोवियत निर्यात का केवल ६.६ प्रतिशत था, १९५८ में ३५ प्रतिशत हो गया। कच्ची तथा शोधित धातुओं का निर्यात इस अवधि में दुगना हो गया। जबकि आम प्रयोग की वस्तुओं का निर्यात पहले से आधा रह गया। कपड़े और रूई इत्यादि के निर्यात में कुछ वृद्धि हुई अर्थात् यह ४.२ से बढ़कर ६.८ प्रतिशत हो गया। कुल निर्यात में इंधन, जिसमें बड़ा भाग अशोधित तेल का था, ८.८ प्रतिशत से बढ़कर १५.२ प्रतिशत हो गया। इसके मुकाबले में अनाज का निर्यात २१.३ प्रतिशत से गिर कर ८.३ प्रतिशत रह गया।

अशोधित तेल का निर्यात १९५७ में ५९ लाख टन था, १९५८ में यह एकदम बढ़कर ९० लाख टन हो गया। मशीनों के निर्यात में बड़ा भाग ट्रकों तथा कारों का रहा। १९५८ में २९,७०० ट्रक बाहर भेजे गये, जबकि १९५७

में इनकी संख्या [illegible] थी। १९५८ में जितने ट्रक निर्यात किए गए उनमें से २०,५९५ ट्रक कम्यूनिस्ट चीन को दिए गए। पेपिंग औद्योगिक मशीनरी का भी बड़ा ग्राहक रहा है।

चीन और रूस के बीच व्यापार में अधिकतम प्रतिशत वृद्धि ट्रैक्टरों में हुई है। १९५८ में पेपिंग ने २,६२५ ट्रैक्टर खरीदे जबकि १९५७ में केवल ६८ ट्रैक्टर लिए थे।

स्वतन्त्र देशों के २७ देशों से रूस के व्यापार में १९५७ की निस्वत १९५८ में ३·७ प्रतिशत वृद्धि हुई। परन्तु १९५८ में इस व्यापार का मूल्य रूबलों में फिर भी कुछ अधिक नहीं था अर्थात् ९ अरब रूबल (सरकारी विनिमय दर के अनुसार २ अरब २५ करोड़ डालर था)।

लेटिन अमरीका, मध्य पूर्व तथा दूर पूर्व के देशों ने जो रूस से आयात करते हैं, शिकायत की है कि रूस ने माल भेजने में तो विलम्ब किया ही है, परन्तु माल भी नियमित स्तर, जो कि व्यापार सन्धियों में दर्ज था, के अनुसार नहीं किया।

६. मास्को अपने पिट्ठू देशों के व्यापार पर किस प्रकार प्रभाव डालता है ?

पूर्वी यूरोप के देशों का विदेशी तथा परस्पर व्यापार मास्को द्वारा निर्धारित नीतियों के अनुसार होता है, या फिर यह व्यापार पिट्ठू देशों के उन संस्थानों के नियन्त्रण में रहता है जो मास्को के अधीन होते हैं।

१९४७-४९ में पूर्वी यूरोप पर कम्यूनिस्टों का अधिकार क़ायम हुआ था। तभी से पिट्ठू देशों की राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था तथा व्यापर में ऐसे परिवर्तन आए हैं जो रूस के कारोबारी प्रोग्राम के अनुकूल हैं और जिनसे सोवियत अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में सहायता मिलती है।

पहले पूरे पूर्वी यूरोप में राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था का मूल तत्व कृषि था। अब सोवियत नीति के कारण बड़े उद्योगों का विकास किया जा रहा है ताकि सोवियत यूनियन के उद्योगों की आवश्यकताएं पूरी हों और उनके विकास में सहायता मिले। इससे उन देशों के कृषि-विकास पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा है, पहले पिट्ठू देश पश्चिमी यूरोप को अनाज तथा अन्य कृषि उपज निर्यात किया करते थे, अब उनके पास निर्यात के लिये कुछ बचता ही नहीं। कुछ देश तो कृषि पदार्थों के अभाव के प्रदेश बन गये हैं।

उदाहरण के लिये, दूसरे महायुद्ध से पूर्व हंगरी यूरोप की "रूई की डलिया" कहलाता था, अब वह अनाज का बिल्कुल निर्यात नहीं करता। रूमानिया तथा पोलैंड भी अन्न में आत्म-निर्भर नहीं रहे।

पूर्वी यूरोप में खेती-वाड़ी के समूहीकरण से कम्यूनिज्म के अन्तर्गत किसानों को बलपूर्वक संगठित करने के कारण कृषि उपज का अभाव हो गया है। पश्चिम को निर्यात अब बन्द हो गया है। स्वयं कम्यूनिस्ट देशों का परस्पर व्यापार भी बहुत घट चुका है। १९५३ के बाद में पश्चिमी देशों से व्यापार में तो वृद्धि हुई है परन्तु पिट्ठू देशों का पश्चिम से व्यापार नाममात्र ही रह गया है।

मई, १९५६ में सब यूरोपी कम्यूनिस्ट सरकारों के सदस्यों की एक कान्फ्रेंस पूर्वी बर्लिन में हुई। यह अधिवेशन आठ दिन तक रहा। इसमें रूस की ओर से कम्यूनिस्ट गुट के आर्थिक संगठन की योजना प्रस्तुत की गई। इस योजना के अनुसार गुट के प्रत्येक देश को कुछ वस्तुओं की उपज की ओर विशेष रूप से ध्यान देना है। इस प्रस्ताव का अभिप्राय वास्तव में यह था कि पिट्ठू देशों की पंचवर्षीय योजनाओं को रूस की योजना के अनुकूल बनाया जाए और उसके संग जोड़ दिया जाये।

सोवियत गुट के आर्थिक संगठन के लिए मास्को कान्फ्रेंस में प्रस्तुत योजना को परस्पर आर्थिक सहयोग की समिति जिसे "सैमा" तथा "कौमीकोन" के नाम से भी पुकारा जाता है, कार्यान्वित करती है। १९५८-५९ में कौमीकोन की जो बैठकें हुईं, उनमें ज़ोर दिया गया कि चीनी-सोवियत गुट के सब सदस्यों के बीच आर्थिक तथा सैनिक सहयोग हो और कम उन्नत देशों को तेज़ी से व्यापारिक सहायता देने का काम आरम्भ किया जाए।

इस प्रोग्राम के अन्तर्गत मध्य पूर्व अफ्रीका और एशिया को पिट्ठू देशों के निर्यात में १९५७ के मुकाबले में डालर के मूल्य के अनुसार २० प्रतिशत की वृद्धि हुई। पिट्ठू देशों में निर्यात करने वाले विशेष वर्णन योग्य देश चेकोस्लोवाकिया, पूर्वी जर्मनी तथा रूमानिया हैं।

कम्यूनिस्ट सरकारें देश के अन्दर अपने माल के प्रचार तथा विज्ञापन की ओर बहुत थोड़ा ध्यान देती हैं, परन्तु विदेशी व्यापार से संबंधित प्रकाशन बहुत सुन्दर और सचित्र होते हैं। उनमें ऐसे माल की विज्ञप्तियाँ होती हैं जो या तो देश के अंदर मिलता ही नहीं या उसके मूल्य क्रयशक्ति से बाहर होते हैं।

७. क्या पूर्व और पश्चिम में सीमित व्यापार पश्चिम की ओर से लगाए प्रतिबन्धों का परिणाम है ?

ब्रिटिश साप्ताहिक "दि आवज़रवर" ने १८ अप्रैल, १९५४ को लिखा था। "इस व्यापार के सीमित होने का कारण पश्चिम की ओर से लगाए गए प्रतिबंध नहीं हैं। इसका वास्तविक कारण यह है कि सोवियत आर्थिक व्यवस्था अधिकतर आत्म-निर्भर है। निर्यात के लिए निश्चित पदार्थों की मात्रा बहुत कम होती है। सब आवश्यकताएं ही पूरी करने पर बल देने के फलस्वरूप विदेशों से व्यापार घट जाता है। अनाज का निर्यात केवल उसी समय बढ़ सकता है जबकि देश में पशुओं की संख्या में वृद्धि के आन्दोलन को त्याग दिया जाए। लकड़ी का निर्यात (जो युद्ध से पूर्व की निस्बत केवल दस प्रतिशत रह गई है) बढ़ाया जाएगा तो स्वयं देश के अन्दर लकड़ी का अभाव हो जायेगा)।

पूरे सोवियत गुट में गत कुछ वर्षों में ऐसी आर्थिक क्रान्तियां आई हैं जिनसे मशीनी माल की मांग बहुत बढ़ गई है और उनका मूल्य चुकाने के लिए पौराणिक निर्यात वस्तुओं की योग्यता बहुत कम हो गई है।

८. सोवियत विदेशी व्यापार का राजनीतिक अभिप्रायों के लिए किस प्रकार प्रयोग किया जाता है ?

व्यापार को "कम्यूनिज़्म का शस्त्र" किस प्रकार बनाया जाता है, इसका एक उदाहरण ईरान के मामले में मिलता है। वहां सोवियत यूनियन ने व्यापार के हेतु ईरान की कम्यूनिस्ट संस्था को आर्थिक सहायता दी।

एक उदाहरण और भी है। दिसम्बर १९४८ में जब रूस द्वारा नियन्त्रित "कोमिनफार्म" से यूगोस्लाविया की कम्यूनिस्ट पार्टी के बहिष्कार को कुछ मास ही हुए थे कि मास्को से घोषणा की गई कि यूगोस्लाविया के साथ रूस का व्यापार १९४९ में गत वर्ष के व्यापार का केवल आठवां भाग रह जाएगा। पिट्ठू देशों ने तत्काल ही रूसी घोषणा का पालन किया। परन्तु उन सबके सांझे प्रयत्न विफल रहे और आर्थिक प्रतिरोध से टीटो की सरकार को हटाकर मास्को की अनुयायी नई सरकार को पदारूढ़ करने की नीति असफल रही।

१९५८ में दोनों देशों के बीच फिर सीमित मात्रा में व्यापार होने लगा है। मास्को ने यूगोस्लाविया को एक भारी रूबल ऋण भी दिया। परन्तु १९५८ में जब रूस और यूगोस्लाविया के सम्बन्ध पुनः भंग हुए तो मास्को ने यूगोस्लाविया को दिया जाने वाला कर्ज़ा रोक दिया।

९. कम्यूनिस्ट सरकार व्यापार को आर्थिक हथियार के रूप में कैसे प्रयोग करती है ?

सोवियत सरकार और पिट्ठू देशों ने इन दिनों विदेशों से व्यापार वृद्धि का जो आन्दोलन चला रखा है वह वास्तव में मास्को की इस नीति का ही भाग है कि कुछ देशों में आर्थिक लगाम उनके हाथ में आ जाए, कुछ देशों में महत्वपूर्ण आर्थिक तथा राजनीतिक सुविधाएँ मिल जाएँ। कम्यूनिस्ट गुट तथा गैर कम्यूनिस्ट देशों के बीच जो व्यापार सन्धियां होती हैं उनमें वह गैर-कम्यूनिस्ट देशों को बहुत आकर्पक तथा प्रलोभक शर्तें पेश करते हैं जैसे कम ब्याज पर ऋण, लम्बी अवधि के कर्जे इत्यादि।

सोवियत यूनियन तथा अन्य कम्यूनिस्ट सरकारें ये सब कुछ इसलिए करती हैं कि व्यापारिक सौदों से उनका अभिप्राय तत्काल लाभ उठाना नहीं है। बल्कि उनकी इच्छा यह होती है कि गैर-कम्यूनिस्ट देशों में उनका आर्थिक प्रवेश हो सके और जो देश औद्योगिक रूप में पिछड़े हुए हैं उन पर इच्छानुसार अपनी सत्ता कायम की जाए।

व्यापार को किसी देश में आर्थिक-प्रवेश का साधन वह किस प्रकार बनाना चाहते हैं उसका उदाहरण अफगानिस्तान का मामला है। इस देश में कम्यूनिस्ट गुट का आर्थिक तथा राजनीतिक जाल फैलाने के लिए सोवियत सरकार ने कई कटु नीतियों का प्रयोग १९५१ में आरम्भ किया था। इस षड्यंत्र का प्रारम्भ "इस एकान्तप्रिय" राज्य में गैसोलीन के ज़खीरों का सिलसिला स्थापित करने के लिए औद्योगिक विशेषज्ञ भेज कर किया।

इसके उपरान्त सोवियत सरकार ने अफगानिस्तान में कई एक कारखाने स्थापित करने के लिए आर्थिक सहायता दी है। यह सहायता ऋण के रूप में दी गई जिसका भुगतान अफगान माल देकर किया जाएगा। मास्को की आर्थिक सहायता तथा व्यापार की नीतियों के कारण अफगानिस्तान सोवियत आर्थिक बंधनों में बुरी प्रकार जकड़ा गया है और कम्यूनिस्टों के राजनीतिक जोड़-तोड़ में फंस गया है।

अनुमान है कि ५००-६०० सोवियत नागरिक अफगानिस्तान में मौजूद हैं। उनमें राज मज़दूर भी हैं और टैक्नीशियन भी, उनमें से बहुत से प्रायः अफगानी भाषा में बातचीत करते हैं। कुछ सोवियत टैक्नीकल "सलाहकार" कम्यूनिस्ट प्रोपेगण्डा प्रकाशन बांटते हुए भी पाए गए हैं। एक बार ऐसा भी

हुआ कि एक नई बन रही बिल्डिंग में कम्यूनिस्ट नारे बना दिए गए और बाद में उन्हें मिटाना पड़ा।

इस काल में गैर-कम्यूनिस्ट देशों से अफगानिस्तान का व्यापार कम हो गया। व्यापार तथा वस्तुविनिमय की सन्धियों के अंतर्गत अफगानिस्तान का ५० प्रतिशत तक निर्यात केवल रूस को ही रह गया। सोवियत यूनियन से आयात बढ़ रहा है, परन्तु रूस से आने वाले माल का घटिया स्तर प्रमाणित हुआ है।

एक बार यदि कोई गैर-कम्यूनिस्ट देश रूस के आर्थिक नियन्त्रण में आ जाये तो उसे अपने आपको सोवियत ब्लैकमेल के समर्पित करना पड़ता है। रूस उसे किसी समय भी डरा-धमका सकता है कि उसने यदि कम्यूनिस्टों के राजनीतिक लक्ष्य पूरे न किये तो उसके साथ तमाम व्यापार सम्बन्ध तत्काल ही तोड़ लिए जाएंगे। एक ऐसे देश के लिए जो स्वतन्त्र देशों से पहले ही व्यापारिक सम्बन्ध लगभग तोड़ चुका हो, यह धमकी भीषण संकट की द्योतक हो सकती है।

१०. कम्यूनिस्ट व्यापारिक धावे का क्या अर्थ है ?

कम्यूनिस्ट गुट के व्यापारिक अभियानों से, जिन्हें "शान्तिपूर्ण मुकाबले" का नाम दिया जाता है, प्रोपेगण्डा, राजनीतिक तथा आर्थिक लाभ उठाये जाते हैं। १९५५ से निकट पूर्व, मध्य पूर्व और दूर पूर्व में चीनी सोवियत गुट के व्यापारिक अभियान दिन प्रति दिन ज़ोर पकड़ रहे हैं।

नवम्बर, १९५७ में संसार भर से आए हुए कम्यूनिस्ट पार्टियों के नेता भविष्य के कार्यक्रम को निर्धारित करने के लिए मास्को में एकत्रित हुए। उनकी कांफ्रेंस के बाद से कम्यूनिस्टों के व्यापारिक अभियानों का निशाना विशेषरूप से लेटिन अमरीका और अफ्रीका के नए देश बने हैं। १९५९ में इन देशों से सोवियत व्यापार की मात्रा तो अधिक नहीं थी परन्तु इससे कम्यूनिस्टों के राजनीतिक उद्देश्यों के बारे में अवश्य ही पता चल गया।

कम्यूनिज्म के "व्यापारिक तथा सहायता देने के" आन्दोलनों और इसके राजनीतिक उद्देश्यों में कितना गहरा सम्बन्ध है इसका एक और उदाहरण देखिये—नवम्बर और दिसम्बर, १९५५ में सोवियत प्रधानमन्त्री बुलगानिन तथा कम्यूनिस्ट पार्टी के सेक्रेटरी ख्रुश्चेव ने भारत तथा बर्मा का दौरा किया। उन्होंने इन देशों को व्यापार सम्बन्धी बड़े-बड़े आश्वासन दिये और उनमें प्रोपेगण्डे और पश्चिमी प्रजातन्त्र देशों के लिये कटु शब्दों का खूब मिश्रण किया।

इस प्रकार जब पेपिंग के अधिकारी अपने आए हुए जापानी व्यापारी अथितियों को व्यापार सम्बन्धी सब्ज़बाग दिखा रहे थे तो सरकार द्वारा अधिकृत समाचार एजेंसियाँ और प्रचार तथा प्रसारण संस्थान जापानी सरकार के विरुद्ध झूठे तथा मिथ्या का तूफान तोल रहे थे। कम्यूनिस्टों के इस प्रोपेगण्डा अभियान के मुख्य उद्देश्य दो थे। टोकियो पर दवाव डाल कर पेपिंग सरकार को स्वीकार करने पर विवश करना। जापान से सैनिक सामग्री के क्रय पर वल देकर यह प्रयत्न करना कि स्वतन्त्र देशों द्वारा चीन का युद्ध उपयोगी सामान बेचने पर प्रतिवन्धों को निष्फल वना दिया जाये।"

११. राजनीतिक उद्देश्यों के अतिरिक्त कम्यूनिस्ट व्यापारिक अभियान के विशेष आर्थिक कारण क्या हैं ?

चूंकि कम्यूनिज़्म में विदेशी व्यापार में निजी लाभ का कोई दख्ल नहीं होता, इसलिये कम्यूनिस्ट देशों के सरकारी इजारादार संस्थानों को "लाभ" उसी रूप में होता है कि निर्यात तथा आयात की आवश्यकता चालू सरकारी योजना में भली-भांति निर्धारित हों (दसवां अध्याय देखिए)।

विदेशों के साथ व्यापार सन्धियां सोवियत गुट की अर्थ-व्यवस्था की दो परस्पर विरोधी परन्तु सामान्यरूप से मूल आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। पहली आवश्यकता तो यह है कि सोवियत गुट को मूल कच्चा माल चाहिए ताकि औद्योगिक विकास होता रहे। दूसरे सारे गुट की परन्तु विशेषतया रूस की यह प्रवल इच्छा है कि उसकी सीमित टैक्नीकल दक्षता में वृद्धि हो जो आजकल सैनिक सामान, मीजाईल और भारी उद्योगों में केन्द्रित है और नए क्षेत्रों में (जैसे रसायन, प्लास्टिक्स तथा कृत्रिम रेशे इत्यादि) औद्योगिक उन्नति से लाभ उठाने का अवसर हाथ आ जाए।

सोवियत गुट में रूस सबसे प्रभुताशाली देश है और अपनी मुख्य पोज़ीशन के कारण वह अपने पिट्ठू देशों के लिए मूल वस्तुओं का स्रोत है। इन देशों के लिए रूस दलाली का काम करता है। चुनाचे १९५६ में रूस ने १,४०,००० टन से अधिक कच्चे रवड़ का आयात किया और इसका लगभग ९७ प्रतिशत भाग चेकोस्लोवाकिया, पूर्वी जर्मनी और पोलैण्ड को पुनः निर्यात कर दिया। इसी वर्ष में सोवियत अशोधित तेल के निर्यात का दो तिहाई भाग कम्यूनिस्ट चीन तथा पूर्वी यूरोप को भेजा गया। इसके अतिरिक्त सोवियत रुई

के निर्यात का ८० प्रतिशत और कोयले का ७४ प्रतिशत पूर्वी यूरोप के भाग में आया ।

सोवियत गुट में तमाम निर्यात तथा आयात किए जाने वाले माल का विनिमय मूल्य मास्को ही निश्चित करता है। इसलिए सोवियत व्यापारिक इजारादार नियमित रूप से माल कम दाम पर खरीद कर वही वस्तुएँ अधिक मूल्य पर वेचते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि पिट्ठू देशों के नागरिकों को मास्को से व्यापार संबन्ध रखने का दण्ड आवश्यक वस्तुओं के अभाव तथा वहुमूल्य के रूप में देना पड़ता है।

मशीनों, फार्मूलों तथा आविष्कारों के जो निर्यात कर्ता पश्चिम में हैं, उन्हें रूस से सदा भय रहता है कि वह केवल एक बार ही आर्डर देंगे। और इसके पश्चात् स्वयं ही वैसी वस्तुएँ बना कर मण्डियों में मुकाबला शुरू कर देंगे क्योंकि रूस अन्य देशों के 'पेटेन्ट' के अधिकारों को स्वीकार नहीं करता।

तेरहवां अध्याय

कम्यूनिज़्म का विस्तार

१. १९३९ में सोवियत विस्तारवादी नीति प्रारम्भ होने के बाद कितने व्यक्ति कम्यूनिस्ट आधिपत्य में लाए जा चुके हैं ?

१९३९ के बाद से ७० करोड़ व्यक्ति बलपूर्वक कम्यूनिस्ट आधिपत्य में लाए जा चुके हैं। इनमें पूर्वी यूरोप के पिट्ठू देशों की जनता, चीन के उपमहाद्वीप के नागरिक, उत्तरी कोरिया, उत्तरी वीयमनाम तथा तिब्बत के लोग भी शामिल हैं। इस संख्या में रूस के २०.८० करोड़ व्यक्ति मिला कर कम्यूनिस्ट सरकारों द्वारा शासित लोगों की संख्या नब्बे करोड़ अर्थात् विश्व जनसंख्या का एक तिहाई है। आज जितनी आबादी चीनी सोवियत कम्यूनिज़्म के शासनाधीन है। इसका आधिक्य द्वितीय महायुद्ध के अन्त से लेकर १९५० तक अर्थात् केवल पांच वर्ष में कम्यूनिज़्म का शिकार हुई।

एक ओर कम्यूनिस्ट गुट के कैम्प में करोड़ों व्यक्तियों को बलपूर्वक भरती किया जा रहा था तो दूसरी ओर नव-स्वतन्त्रता प्राप्त देशों की ६५ करोड़ जनता थी जिसने स्वतन्त्र देशों की बिरादरी में शामिल होने को श्रेयस्कर समझा। इनमें से अधिकतर दूर पूर्व और अफ्रीका के रहने वाले थे। पश्चिमी देशों ने इन नए प्रजातन्त्रों को सहायता दी है और उनको प्रोत्साहित किया है।

२. कम्यूनिस्ट विस्तार का क्या क्रम रहा है ?

१९३९ की स्टालिन-हिटलर सन्धि से सोवियत यूनियन को पूर्वी पोलैण्ड पर कब्जा करने और उसको राज्य में मिला लेने का अधिकार मिल गया। इस अभियान के तुरन्त बाद ही रूस ने बाल्टिक के प्रजातन्त्र राज्यों, लिथुआनिया, लेटेविया तथा एस्टोनिया को भी अनुबद्ध कर लिया। इसके उपरान्त रूस ने रूमानिया को भी अपना एक बड़ा इलाका देने पर विवश कर दिया। फिनलैंण्ड ने अपने बलवान पड़ोसी से युद्ध में पराजित होने के बाद दक्षिण में सामरिक महत्व के इलाके रूस को दे दिए और दूर उत्तर में कारेलिया का एक जिला भी छोड़ दिया जिन्हें रूस ने अपने राज्य में शामिल कर लिया।

द्वितीय महायुद्ध अभी जारी था कि क्रेमलिन ने छल और कपट की ऐसी चालें चलीं जिनके फलस्वरूप अल्पसंख्यक कम्यूनिस्ट पार्टियां पूर्वी यूरोप के सीमावर्ती राज्यों की शासक बन गई। १९४७ और १९५० के बीच पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया, हंगरी, रूमानिया, बल्गारिया और अल्बानिया में कठपुतली सरकारें स्थापित हो गईं। बर्लिन का सोवियत क्षेत्र और पूर्वी जर्मनी (जिस पर रूसका कब्जा है) भी मास्को के अधिकार में आ गए। १९४६ में युगोस्लाविया पर मार्शल टीटो के नेतृत्व में कम्यूनिस्टों की सरकार बन गई।

उधर उत्तरी कोरिया पर कब्ज़ा करने वाली रूसी सेना ने वहाँ पर कठपुतली सरकार बना दी। चीनी कम्यूनिस्ट सोवियत सैन्य सहायता से १९४९-१९५० में पूरे चीनी उपमहाद्वीप पर अपना आधिपत्य जमाने में सफल हो गए। उत्तरी वीयतनाम की सहायता चीन ने की और परिणामस्वरूप वहां भी कम्यूनिस्ट सरकार स्थापित हो गई।

१९३९ के बाद से एक करोड़ चालीस लाख वर्ग मील इलाका कम्यूनिस्टों के आधिपत्य में आया है। यह सारा इलाका कुछ तो सशस्त्र बल से और कुछ षड्यन्त्र, तोड़-फोड़ तथा आतंक फैला कर हथियाया गया है। १९५९ में पेंपिंग की विस्तारवादी प्रवृत्ति प्रत्यक्ष हो गई। इसने तिब्बत की आंतरिक स्वाधीनता छीन ली। भारत के सीमावर्ती इलाकों पर अपना अधिकार जताना आरम्भ कर दिया और दक्षिण-पूर्वी एशिया के लिए चिरस्थायी खतरा बन गया।

३. क्या किसी देश ने कम्यूनिस्ट शासन प्रणाली को स्वेच्छा से ग्रहण किया है?

लोकमत के आधार पर आज तक सोवियत यूनियन सहित किसी भी देश ने कम्यूनिस्ट शासन को स्वीकार नहीं किया। वास्तव में जब कभी जनता को स्वेच्छा से सरकार चुनने का अवसर मिला है उसने कम्यूनिज़म को ठुकराया है। प्रथम महायुद्ध के उपरान्त हंगरी तथा चेकोस्लोवाकिया में आमचुनाव में यही हुआ।

कम्यूनिस्टों को कहीं-कहीं स्थानीय विजय अवश्य हुइ है। मिसाल के तौर पर गोएटेमाला में एक "क्रांतिमयी स्थिति" में कम्यूनिस्टों ने बड़ी गड़बड़ की। (पन्द्रहवां अध्याय देखिए)। इसके उपरान्त सरकार में कम्यूनिस्टों का प्रभाव बढ़ गया। परन्तु जून, १९५४ में एण्टी कम्यूनिस्ट (कम्यूनिस्ट विरोधी) दल ने अकस्मात् धावा बोलकर सरकार पर कब्ज़ा कर लिया।

भारत में केरल प्रदेश में कम्यूनिस्ट पार्टी ने १९५७ के आमचुनाव में ३५ प्रतिशत से भी अधिक मत प्राप्त किए और स्वतन्त्र विधायकों के सहयोग से प्रदेश में सरकार बनाने में सफल हो गए। परन्तु जब कम्यूनिस्ट सरकार ने स्कूलों की व्यवस्था को अधिकार में लेने का प्रयास किया तो उसका असली रूप सामने आ गया। १९५९ की वसन्त ऋतु तक इसकी सर्वाधिकारी वृत्ति प्रत्यक्ष रूप से ज्ञात हो चुकी थी। सारे प्रदेश में शासन-व्यवस्था विगड़ गई। ३१ जुलाई को केन्द्रीय सरकार ने प्रदेश सरकार को पद-मुक्त कर दिया। फरवरी १९६० के विशेष चुनाव में कम्यूनिस्ट केरल विधान सभा में पहले की अपेक्षा केवल आधे सदस्य ही सफल करा सके। (आठवां अध्याय देखिए)

४. पूर्वी यूरोप के देश, पिट्ठू देश क्यों कहलाते हैं ?

पूर्वी यूरोप के जो देश कम्यूनिस्टों के अधीन हैं उन्हें पिट्ठू देश इसलिए कहा जाता है क्योंकि वह सोवियत संघ की अर्थ-व्यवस्था, राजनीति तथा सैनिक व्यवस्था से सम्बद्ध हैं।

यह कठपुतली सरकारें नाम को लोकतन्त्र कहलाती हैं परन्तु वे किसी प्रकार भी गणतंत्र राज्य कहलाने के पात्र नहीं क्योंकि वहां की जनता का सरकार के निर्वाचन में कोई दख्ल नहीं और न ही वह सरकारी नीतियों के निर्धारण पर प्रभाव डाल सकती है।

इन कठ पुतली सरकारों की राष्ट्र तथा परराष्ट्र नीतियों का निर्देशन मास्कों से होता है। राष्ट्र के कम्यूनिस्ट नेता मास्को 'लाईन' पर चलते हैं।

पोलैण्ड में १९५६ में पार्टी के आन्तरिक संघर्ष के फलस्वरूप एक नई कम्यूनिस्ट सरकार स्थापित हुई जिसने समाजवाद (कम्यूनिज़्म) के "नव, स्वतंत्र पथ" पर चलने की शपथ ली परन्तु १९५९ तक यह सरकार मास्को लाईन के निकट आ गई। फिर भी अन्य कम्यूनिस्ट देशों की अपेक्षा पोलिस्तानी जनता को आज भी अधिक स्वतन्त्र्य प्राप्त है।

५. क्या युगोस्लाविया भी रूस का पिट्ठू देश है ?

युगोस्लाविया रूस का पिट्ठू देश नहीं है। १९४७ में युगोस्लाव कम्यूनिस्ट पार्टी कोमिनफार्म की सदस्य थी। परन्तु एक वर्ष के पश्चात् ही इसका बहिष्कार कर दिया गया। इसके कारण नीति के मतभेद थे। विशेष कारण यह था कि टीटो स्तालिन के आदेश तथा निर्देशानुसार चलने को राज़ी नहीं थे। तबसे युगोस्लाव सरकार अपनी राष्ट्र तथा परराष्ट्र नीतियों का स्वतंत्रता से निर्धारण करती है।

६. पूर्वी यूरोप में अल्प संख्यक कम्यूनिस्ट शासन पर कब्ज़ा करने में किस प्रकार सफल हुए ?

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् फैले विप्लव में पश्चिमी गणतंत्र राज्य तेज़ी से सैन्य वियोजन में लगे हुए थे ताकि लाखों नवयुवक सैनिकों को शान्तिपूर्ण व्यवसायों में लगाया जाए और उनकी सरकारें अपनी शक्ति युद्ध में हुए विध्वंस तथा विनाश के स्थान पर पुनर्निर्माण में लगा सकें।

परन्तु सोवियत संघ ने अपनी सेनाओं को मुक्त नहीं किया बल्कि पूरे पूर्वी यूरोप में उन्हें फैला दिया। कहीं वह अधिपत्य सेना के रूप में उपस्थित थी, कहीं सीमाओं पर नियुक्त थी और स्वतंत्र राज्यों के लिए खतरा बनी हुई थी।

लाल सेना वास्तव में एक और सोवियत "सेना", की सशस्त्र सहायता कर रही थी। इस दूसरी "सेना" में कम्यूनिस्ट एजेन्ट, गुप्त पुलिस के सिपाही, आतंकवादी, कम्यूनिस्ट षड्यंत्र के स्थानीय अनुयायी जो उन्हीं देशों के वासी थे, सब शामिल थे। धीरे-धीरे इस सेना ने सब विरोधियों को कुचल डाला। (सोलहवां अध्याय देखिए)

७. क्या पश्चिमी गणतन्त्र राज्य पूर्वी यूरोप के गैर कम्यूनिस्टों की रक्षा करने योग्य नहीं थे ?

पश्चिमी सरकारें उन महत्वपूर्ण सन्धियों पर भरोसा किए बैठी रहीं जिन पर सोवियत प्रधानमंत्री स्तालिन ने याल्टा तथा पोस्टडम में हस्ताक्षर किए थे और इनके अनुसार नाज़ियों के भूतपूर्व अधिकृत देशों की स्वाधीनता और प्रादेशिक तथा राजनीतिक अखण्डता की जमानत दी गई थी। जर्मनों द्वारा परास्त जनता को स्तालिन ने बार-बार आश्वासन दिलाया था कि रूस भविष्य में उनकी स्वतंत्रता पर किसी प्रकार से प्रभाव नहीं डालेगा।

१९४२ के एक "आज का आदेश" में प्रधानमंत्री स्तालिन ने कहा था : "हमारा यह युद्धोद्देश्य न है और न हो ही सकता है कि हम अपनी ओर सहायता के लिए देख रहे स्लावों तथा यूरोप की अन्य दास बनाई गई जनता पर अपनी इच्छा तथा अपना शासन लागू करें। हम तो केवल इतना चाहते हैं कि हिटलर के अत्याचार से मुक्ति प्राप्त करने के संघर्ष में उनकी सहायता करें और उसके पश्चात् उन्हें स्वेच्छा से सरकार के निर्वाचन की पूर्ण स्वतंत्रता दे दी जाए।"

पश्चिमी देशों ने स्वतंत्र निर्वाचन के संबंध में रूस द्वारा याल्टा तथा

पोस्टडम सन्धियों के उल्लंघन का वार-वार विरोध किया परन्तु रूस ने सदैव यही उत्तर दिया कि पश्चिमी देशों ने यदि कोई हस्तक्षेप किया तो इसे "राष्ट्रीय प्रभुसत्ता" पर अतिक्रमण समझा जाएगा। साथ-ही-साथ क्रेमलिन स्वयं सक्रिय रूप से इन देशों की वैध सरकारों का तख्ता उलटने के लिए षड्यंत्रों में लगा रहा।

उदाहरण के लिए, १९४५ में फरवरी के अन्त में सोवियत विदेशी मामलों के उपकमिसार स्वर्गीय आंद्री विशिस्की ने स्तालिन के निर्देश के अनुसार रूमानिया के नरेश माईकल से मांग की कि प्रधानमंत्री के पद पर रूस के पिट्ठू पेट्रो गरोज़ा को नियुक्त किया जाए। नरेश को यह मांग स्वीकार करने पर विवश कर दिया गया और आगामी वर्ष के अन्त तक गरोज़ा ने कम्यूनिस्ट प्रतिरक्षा सैनिक टुकड़ियों की सहायता से नरेश को राज त्याग के लिए विवश कर दिया।

८. कम्यूनिस्टों ने पूर्वी यूरोप में राज सत्ता प्राप्त करने के लिए किन-किन पदों का दुरुपयोग किया ?

कम्यूनिस्टों ने अपना सारा ज़ोर इस बात पर लगाया कि प्रमुख पदों पर अपने सदस्य या अनुयायी नियुक्त कर दिए जाएं। गृह मंत्रालय जो गुप्त पुलिस को भी कंट्रोल करता है, न्याय मंत्रालय जो न्यायालयों को अपने अधिकार में रखता है और सूचना तथा प्रसार मंत्रालय जिसके द्वारा प्रेस, रेडियो इत्यादि पर नियंत्रण रखा जाता है, उनकी दृष्टि में बहुत महत्वपूर्ण है। कम्यूनिस्टों ने पहले इन पर अधिकार किया। ज़ब्त की हुई भूमि के पुर्नवितरण के लिए कृषि मंत्रालय को भी अपने कब्ज़े में लेना कम्यूनिस्टों के लिए आवश्यक था।

मंत्रालयों और भिन्न-भिन्न विभागों के अतिरिक्त ट्रेड यूनियनिज़्म भी कम्यूनिस्टों के लिए कुछ कम महत्व नहीं रखता। पहले वह मज़दूर संगठनों में किसी-न-किसी तरह घुसकर अपने पांव जमाते थे और उनको पूरी तरह अपने नियंत्रण में ले लेते थे। इसके उपरान्त वे इन्हें राजनीतिक हथियार के रूप में प्रयोग में लाते हैं।

९. कम्यूनिस्टों ने चुनाव को अपने लिए अधिकार-प्राप्ति का साधन कैसे बनाया ?

द्वितीय महायुद्ध के वाद पूर्वी यूरोप के केवल दो देशों में चुनाव किसी हद तक स्वतन्त्र वातावरण में हुए हैं। हंगरी में मई, १९४५ के चुनाव में कम्यूनिस्टों ने कुल मतों में केवल १७ प्रतिशत मत प्राप्त किए। चेकोस्लोवाकिया

में मई, १९४६ के मतदान में कम्यूनिस्ट पार्टी सबसे शक्तिशाली पार्टी रही इसे ३८ प्रतिशत मत मिले। परन्तु दोनों देशों में सरकारी विभागों में कम्यूनिस्ट पहले ही पहुँच चुके थे। विरोधी पार्टियों को उन्होंने षड्यंत्र और छल-कपट से दवा रखा था।

फरवरी, १९४८ में कम्यूनिस्टों ने अकस्मात् आक्रमण द्वारा चेकोस्लोवाकिया की सरकार का तख्ता उलट दिया। इससे भलीभाँति स्पष्ट हो गया कि मतदाताओं पर इनका प्रभाव क्षीण पड़ गया और मतदान द्वारा उन्हें अपनी सफलता का विश्वास नहीं रहा था।

पूर्वी यूरोप में और भी जितने चुनाव हुए उनमें कम्यूनिस्टों ने छल-कपट और हिंसा से अधिक काम लिया। उनके इशारे पर विरोधी दलों के सदस्यों पर अनुचित आरोप लगाए गए, उन पर मुकदमे चलाए गए, वह गिरफ्तार हुए और कारावास में डाल दिए गए। सशस्त्र गुण्डों ने गैर-कम्यूनिस्टों के जलसों में हुड़दंग मचाई और तितिर-वितिर कर दिया। विरोधी दलों के मुख्य कार्यालयों पर हमले किए, उन्हें लूट लिया गया या उनकी पूर्ण तालावन्दी कर दी गई।

कठपुतली कम्यूनिस्ट शासकों ने नित नए हीले बना कर नागरिकों की बड़ी संख्या से मताधिकार छीन लिया। विरोधी पार्टियां अवैध घोषित कर दी गईं, वोट की पर्चियों में गड़बड़ और बेईमानी की और चुनाव परिणामों में इच्छानुसार परिवर्तन कर दिए।

१०. पिट्ठू देशों में जनता को राष्ट्र-प्रेम की भावनाएँ प्रकट करने की आज्ञा कहाँ तक है ?

सोवियत नीतियों से राष्ट्रवाद का जब भी टकराव हुआ है पिट्ठू देशों की कठपुतली सरकारों ने इस पवित्र परन्तु "अनिश्चित" भावना को कुचल दिया। इन देशों में यदि किसी कम्यूनिस्ट नेता ने मास्को के हितों पर अपने देशों के हितों को श्रेष्ठ माना तो उसका पद घटा दिया गया या पथभ्रष्टता का आरोप लगा कर मुकदमा चला कर ठिकाने लगा दिया।

सोवियत यूनियन की कम्यूनिस्ट पार्टी की बीसवीं कांग्रेस में जबसे स्तालिनवाद के विरुद्ध अभियान आरम्भ हुआ है, और विशेषतया जबसे पार्टी सेक्रेटरी निकिता ख्रुश्चेव ने स्वयं भूतपूर्व डिक्टेटर की निन्दा की है, पिट्ठू देशों में मास्को के वर्तमान नेताओं की आलोचना कभी कभार सुनने में आ जाती है।

१९५६ की ग्रीष्म ऋतु तक आलोचना कुछ दबी-दबी-सी थी परन्तु पतझड़ के आने तक आलोचना पब्लिक तौर पर और कठोरता से की जाने लगी।

पोलैण्ड तथा हंगरी की कम्यूनिस्ट पार्टियों में रूस विरोधी भावनाएं प्रबल हो गईं। पोलैण्ड में पार्टी के नेतृत्व में तुरन्त ही परिवर्तन किए जाने से उफ़ान रुक गया। परन्तु हंगरी में रूस तथा कम्यूनिज़्म के विरुद्ध जनता के रोष तथा क्रोध ने विद्रोह का रूप धारण कर लिया। परन्तु रूस के आतंक तथा हिंसा ने राष्ट्रवाद का यह दीप अधिक समय तक जलने न दिया।

११. सोवियत उपनिवेशवाद का अर्थ क्या है ?

कठपुतली कम्यूनिस्ट देशों पर मास्को के आर्थिक दबाव तथा आधिपत्य को ही सोवियत उपनिवेशवाद का नाम दिया गया है। इस परिभाषा में वह इलाक़े भी शामिल हैं जो सोवियत गुट से बाहर होने पर भी किसी न किसी प्रकार रूस के आर्थिक राजनीतिक तथा सैन्य नियंत्रण में हैं।

वोलशेविक क्रान्ति के बाद ही से सोवियत सीमाओं से बाहर दूर, पूर्व में रूस राजनीतिक तथा सैन्य दबाव डालता रहा है।

कम्यूनिस्ट सरकार दावा तो यह करती है कि इसने एशिया के प्रति ज़ारों की साम्राज्यवादी नीति का परित्याग कर दिया है परंतु वास्तव में रूस अब भी उन नीतियों में, कोई परिवर्तन किए बिना ही उन पर चल रहा है। चीन में कम्यूनिस्ट क्रांति की सफलता के बाद भी रूस ने विस्तारवाद की नीति नहीं छोड़ी।

चीनी वाहरी मंगोलिया में रूस द्वारा हस्तक्षेप तथा प्रवेश १९२० में ही आरम्भ हो गया था। १९२४ में सोवियत सहयोग से मास्को द्वारा ट्रेंड मंगोल कम्यूनिस्टों ने "मंगोल लोक गणतन्त्र" का स्थापन किया। १९४५ तक रूस वाहिरी मंगोलिया पर चीन का नाममात्र अधिराज्य स्वीकार करता रहा परन्तु उसी वर्ष लोकमत का स्वांग भर कर मंगोलिया को पूर्णतया स्वतंत्र देश घोषित कर दिया गया। यह "गणतंत्र" अब रूस का अर्ध उपनिवेश है। बाहरी मंगोलिया की इस स्थिति को स्वयं चीनी कम्यूनिस्ट सरकार को भी १९५२ में स्वीकार करना पड़ा।

बाहरी मंगोलिया का समीपवर्ती टन्नूटवा, भी चिरसमय तक चीन का ही भाग था। परन्तु १९२० में वह भी सोवियत हस्तक्षेप का निशाना बना। १९४४ में रूस ने इसको पूरी तरह सोवियत संघ में शामिल करके अखण्ड भाग बना दिया। इसे टोवियन आत्मशासित राज्य का नाम दिया। इसे कठपुतली राज्य का दर्जा भी नहीं दिया गया।

चीन का सिक्यांग प्रदेश भी शुरू में सोवियत विस्तार क्रम में अंकित था परन्तु १९५४ के अन्तिम चरण में रूस वहां पर अपने आर्थिक स्वार्थ चीन के हित में छोड़ने पर राज़ी हो गया था।

१९४० और १९४५ के बीच में रूस ने तीन बालटिक रियासतों को अपने राज्य में मिला लिया और रूमानिया, पूर्वी पोलैण्ड, पूर्वी चेकोस्लोवाकिया, पूर्वी प्रशिया और फिनलैण्ड के कुछ भाग भी अपने आधिपत्य में ले लिए। युद्ध से पूर्व इन इलाकों की जनसंख्या दो करोड़ चालीस लाख से भी अधिक थी।

इसके अतिरिक्त १९४६ और १९४८ के बीच में सोवियत यूनियन ने पूर्वी जर्मनी और पूर्वी यूरोप के पांच देशों का दर्जा घटा कर उन्हें राजनीतिक तथा आर्थिक रूप में अपने आधीन बना लिया। इस पूरे इलाके की कुल जनसंख्या कोई नौ करोड़ तीस लाख थी।

१२. रूस की कम्यूनिस्ट पार्टी का अन्य देशों की कम्यूनिस्ट पार्टियों से क्या सम्बन्ध है ?

युगोस्लाव कम्यूनिस्ट पार्टी को छोड़कर संसार की सब कम्यूनिस्ट पार्टियां रूसी कम्यूनिस्ट पार्टी द्वारा निर्धारित नीतियों के अनुसार चलती हैं। (चीनी कम्यूनिस्ट पार्टी कुछ मामलों में सी० पी० एस० यू० की अनुयायी नहीं है)।

१९४७ और १९५५ के दौरान में सी० पी० एस० यू० विश्व आन्दोलन की अगुआयी कोमिनफार्म द्वारा करती थी। इस संगठन में रूस, फ्रांस, इटली और पांच पिट्ठू देशों के प्रतिनिधि थे।

अप्रैल १९५६ में कोमिनफार्म को तोड़ दिया गया। परन्तु बोलशेविक क्रान्ति की चालीसवीं वर्षगांठ के अवसर पर १९५७ में कम्यूनिस्ट नेताओं का अधिवेशन मास्को में हुआ और उसमें सी० पी० एस० यू० और अन्य कम्यूनिस्ट पार्टियों के परस्पर सम्बन्ध नए ढंग से निश्चित किए।

इस अधिवेशन के उपरान्त "बारह पार्टी कार्यक्रम" घोषित किया गया। इसमें कम्यूनिज़्म के विश्व उद्देश्यों का वर्णन था और एक "शान्ति ज्ञापन पत्र" भी शामिल था जिसके द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिज़्म में सी० पी० एस० यू० के पथ-प्रदर्शन की सराहना की गई थी। ज्ञापन-पत्र पर ६५ पार्टी नेताओं ने हस्ताक्षर किए थे। १९५७ के अधिवेशन के उपरान्त सी० पी० एस० यू० और इसकी अनुयायी पार्टियों ने "संशोधनवाद" अथवा स्वतन्त्र साम्यवाद की पद्धति की निन्दा की और उसे कम्यूनिस्ट आन्दोलन के लिए "घोर खतरा" घोषित किया।

१३. राजनीतिक संस्थाओं के अतिरिक्त और कौन-कौन से संस्थाओं को कम्यू-निस्ट स्वतंत्र देशों में मार्क्सवाद तथा लेनिनवाद के प्रचार का साधन बनाते हैं ?

अपने सिद्धान्तों के प्रचार के लिए कम्यूनिस्ट बहुत-सी अग्र संस्थाएं बनाते हैं ताकि कम्यूनिज़्म की विचारधारा का प्रचार किया जा सके। इसके अतिरिक्त वह सुधार वादी आन्दोलनों में भी घुस जाते हैं और उन्हें अपने राजनीतिक तथा सैद्धान्तिक हितों के लिए प्रयोग करते हैं।

"लेननिज़्म की आधार शिला" में स्टालिन ने लिखा था। 'पूंजीवादी प्रशा-सन के अधीन क्रान्तिकारी कार्यरीति में सुधारवादी आन्दोलनों में शामिल हो कर प्रशासन को खण्डित करना और क्रान्ति को सुदृढ़ बनाना भी शामिल है।"

१४. क्या कम्यूनिस्ट अपनी बात से या धारणा से कभी पीछे हटते हैं ?

"सी० पी० एस० यू० का संक्षित इतिहास" में लिखा है—"अक्तूबर की क्रान्ति की अवधि में लेनिन ने पार्टी को सिखाया कि यदि स्थिति अनुकूल हो तो साहस के साथ अभय होकर आगे बढ़ा जाए। ब्रैस्ट-लिटोविस्क शान्ति के दिनों में (जबकि सोवियत संघ ने जर्मनी को बहुत-सी सुविधाएं दीं।) लेनिन ने शिक्षा दी थी कि जब शत्रु शक्तिशाली हो तो किस प्रकार क्रमानुसार पीछे हटना चाहिए और इसके पश्चात् नए हमले के लिए पूर्ण शक्ति से तैयारी की जाए।"

इस प्रकार, यदि दबाव इतना अधिक हो कि कम्यूनिस्ट न तो इस पर विजयी हो सकें और न ही प्रतिरक्षा के समर्थ हों तो वह कुछ समय के लिए पीछे हटजाते हैं। परन्तु उनका पश्चगमन कपटपूर्ण होता है। इस अवधि को वह नए हमले की तैयारी के लिए प्रयोग करते हैं।"

१५. क्या सब कम्यूनिस्ट समाज सिद्धान्तों पर विश्वास रखते हैं ?

सोवियत यूनियन, पूर्वी यूरोप और दूर पूर्व के सभी कम्यूनिस्ट देश मार्क्स-वाद-लेनिनवाद के आम सिद्धान्तों में विश्वास रखते हैं, परन्तु कम्यूनिस्ट चीन में कम्यूनिस्ट सिद्धान्तों में कुछ संशोधन हुआ है। वहां इन्हें कम्यूनिस्ट चीन के नेता माओत्से तुंग के नाम पर "माओवाद" का नाम दिया गया है।

माओवाद, मार्क्सवाद-लेनिनवाद का कुछ परिवर्तित रूप है। इसमें उन विशेष समस्याओं को भी दृष्टिगोचर रखा गया है जिनका सामना पेपिंग सर-कार को करना पड़ता है और यूरोप की समस्याओं से भिन्न हैं। किसी हद तक

यह भेद इसलिए अनिवार्य थे क्यों कि चीन औद्योगिक तौर पर पिछड़ा हुआ देश है । और वहां पर औद्योगिक श्रमिकों की संख्या किसानों की उपेक्षा बहुत ही कम है । मार्क्सवाद के सिद्धान्त के अनुसार "श्रमिक वर्ग की क्रांति का पथ-प्रदर्शन" औद्योगिक श्रमिक वर्ग ही को करना था । कम्यूनिस्ट चीन में किसानों की स्थिति को तथा किसानों की समस्याओं को अधिक महत्व दिया जाता है ।

चीन में अधिकार तथा प्रभाव का केन्द्र, प्रथा अनुसार कुटुम्ब ही रहा है । इसके पश्चात् गाँव की बारी आती है । इसलिए चीनी कम्यूनिस्टों ने पहले कुटुम्ब पर ही वार किया है और कोशिश की है कि परिवार के संगठन का विच्छेद हो जाए । १९५८ में उन्होंने कम्यून सिस्टम चालू कर दिया था । इसके अन्तर्गत पचास करोड़ व्यक्ति चींटियों की भाँति समाजी जीवन व्यतीत करने पर विवश हैं (दूसरा अध्याय देखिए) ।

१६. कम्यूनिस्ट प्रशासन के अधीन देशों में विद्रोह कहाँ तक हुए हैं ?

१९२० के बाद के दशक के प्राथमिक चरण को छोड़कर रूस में कोई संगठित विद्रोह नहीं हुआ है । १९२१ में एक भयंकर उपद्रव हुआ था । पेट्रोग्राड से बाहर करोनस्टाफ में नौसेना का एक दुर्ग था । वहां के सैनिकों ने लेनिन को सत्तारूढ़ होने में सहायता दी थी । १, मार्च, १९२१ को उन्होंने मांग की कि "गुप्त मतदान द्वारा दोबारा चुनाव कराया जाए ।" इसके अतिरिक्त उन्होंने भाषण, मुद्रण तथा श्रमिक संगठन के स्वातंत्र्य की मांग भी की थी । उन्होंने इस बात की भी अभियाचना की थी कि सशस्त्र सेना में राजनीतिक कमिसार न रखा जाए । करोनस्टाट के विद्रोह को गुप्त पुलिस तथा सोवियत सेना के ६०,००० सिपाहियों ने निर्दयता से कुचल दिया । विद्रोही नौसैनिकों और उनके परिवारों को कत्ल कर दिया गया । सख्त मुकाबले के उपरान्त १७, मार्च को करोनस्टाफ ने हथियार डाल दिए ।

१९२९ से १९३२ तक खेतों के जबरी समूहीकरण का युग था, स्थानीय किसानों तथा ग्रामवासियों ने इस आन्दोलन को रोकना चाहा । विरोधियों के लाखों परिवारों को खत्म कर दिया गया या जबरी श्रम के कैम्पों में भेज दिया गया ।

पूर्वी यूरोप में पहली बार उपद्रव १७ जून, १९५३ को पूर्वी बर्लिन में जनता के बलवे के रूप में हुआ जो कि तुरन्त ही पूर्वी जर्मनी के अनेकों औद्यौगिक केन्द्रों में फैल गया । फिर २८ से ३० जून, १९५६ को पोज़ान, पोलैंड

में तीन दिन तक विप्लव रहा। इन दोनों विद्रोहों का प्रारम्भ शान्ति प्रदर्शनों से हुआ और फिर अकस्मात् ही वड़े पैमाने पर जनता की ओर से दंगे फ़साद होने लगे।

हंगरी में स्वतन्त्रता संग्राम २०-२२ अक्तूवर को विद्यार्थियों के शान्तिपूर्ण प्रदर्शन से प्रारम्भ हुआ और कुछ दिनों में ही विद्रोह की ज्वाला बुडापेस्ट से निकल कर सारे देश में फैल गई। लड़ाई के दौरान में हज़ारों हंगेरियन और कुछ सोवियत सैनिक घायल तथा हताहत हुए। ३ नवम्बर को सोवियत सैनिकों ने बड़ी क्रूरता तथा वहशीपन से इस विद्रोह को दवा दिया। सोवियत सेना सारे देश में फैल गई और इसे अपने अधिकार में ले लिया।

१६५६ की वसन्त ऋतु के अन्त में चीनी कम्यूनिस्ट सरकार के विरुद्ध तिब्बत में विद्रोह हुआ। वहुत दिनों तक गोरिला युद्ध का सिलसिला जारी रहा। १६५६ तक यह उपद्रव वढ़ते-वढ़ते सारे देश में फैल गया। (दूसरा अध्याय देखिए)।

१७. सोवियत केन्द्रीय सरकार का मध्य-एशिया की गैर-रूसी जनता से क्या सम्बन्ध है?

इरान, अफगानिस्तान, पाकिस्तान तथा भारत के उत्तर में मध्य-एशिया का चालीस लाख वर्गमील क्षेत्र रूसी अधिराज्य में है। इनमें सोवियत गणतन्त्र सम्मिलित हैं जिनकी कुल जनसंख्या लगभग एक करोड़ सत्तर लाख है।

सोवियत यूनियन में जो "गणतंत्र" सम्मिलित हैं, उन्हें संविधान के अन्तर्गत वहुत से अधिकार प्राप्त हैं। अधिकारों की सूची लम्वी है और उपरिष्ट रूप में प्रभावशाली भी। इन अधिकारों में गणतंत्रों को सोवियत यूनियन से अलग होने का अधिकार भी शामिल है। परन्तु वास्तविक रूप में इन अधिकारों का कोई अस्तित्व नहीं है। प्रत्येक स्थान पर रूसी लोगों को और रूसी भाषा को श्रेष्ठ समझा जाता है। स्थानीय तौर पर यदि कहीं राष्ट्रवादी भावना उजागर प्रतीत होती हो अथवा इस्लाम के अनुयायी बढ़ने लगें तो उन्हें रूढ़िवाद का नाम देकर कुचल दिया जाता है। इस युग के असली उपनिवेश का यही कारनामा है।

१८. कम्यूनिस्ट चीन में राष्ट्रीय अल्पसंख्यक जातियों के साथ कैसा व्यवहार होता है?

कम्यूनिस्ट चीन में कोई साठ अल्प संख्यक जातियां हैं जिनकी कुल जनसंख्या साढ़े तीन करोड़ से भी अधिक है। यह सब (चीन वंश) हान की प्रजा

हैं। ऐतिहासिक महत्व रखने वाली इन "महान अल्पसंख्यक जातियों" में मंगोल
मुस्लमान तथा तिब्बती शामिल हैं और इनकी जनसंख्या एक करोड़ है। इन अल्प संख्यक जातियों ने अपनी आंखों के सामने अपनी सांस्कृतिक विरासत का विध्वंस होते देखा है।

१९४९ में चीन के अवामी गणतंत्र के "अधिकार पत्र" के अन्तर्गत सांझा प्रोग्राम शुरू हुआ जिसके अधीन अल्प संख्यक जातियों की स्वतंत्रता और स्वायत्त शासन को सीमित कर दिया गया। यद्यपि दिखावे के लिए पेपिंग सरकार ने अल्प संख्यक जातियों के लिए स्वायत्त शासित प्रदेश स्थापित कर रखे हैं जिन्हें सैद्धान्तिक रूप में आन्तरिक स्वतंत्रता भी प्राप्त है, परन्तु इन शासन इकाइयों पर भी हान या उनके कठपुतली व्यक्तियों का ही नियंत्रण है।

स्वायत्त शासन को भंग करने का क्रूर उदाहरण तिब्बत में मिला जहां पर प्रादेशिक स्वतंत्रता को १९५९ में खत्म कर दिया गया और हान आक्रमणकारियों ने पेपिंग की सेना के सहयोग से तिब्बतियों पर बहुत अत्याचार किए हैं। (देखिए अध्याय नम्बर २) १९५९-१९६० में तिब्बतियों और अन्य राष्ट्रीय अल्पसंख्यक जातियों के लाखों व्यक्तियों का पुनर्वास बहुत बड़े पैमाने पर किया गया।

चौदहवां अध्याय

शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व और सैन्यवाद

१. कम्यूनिस्टों की परिभाषा में शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व का क्या अर्थ है ?

कम्यूनिस्ट सिद्धान्त का आधार इस विश्वास पर है कि "पूंजीवाद" और "समाजवाद" के बीच संघर्ष अटल है। मार्क्स और लेनिन तो खुले तौर पर क्रान्तिकारी थे और नादध्वनि से कहते थे कि "पूंजीवादी प्रशासन पद्धति" को खत्म कर देना चाहिए, परन्तु स्तालिन और उसके अनुवर्तियों का भी यही विचार था कि सोवियत स्टेट का अधिपत्य ही "समाजवाद" की विजय है। इस सिद्धान्त को "शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व" तथा "शान्तिपूर्ण मुकाबले" के फार्मूलों ने कुछ समय से धुंधलके में धकेल दिया है।

१९१९ में लेनिन ने घोषणा की कि "कल्पना भी नहीं की जा सकती कि सोवियत गणतंत्र के संग साम्राज्यीय रियासतें भी बहुत समय तक उपस्थित रहेंगी। अन्त में इनमें से किसी एक को विजयी होना है और जो विजय पाएगी उसी का अस्तित्व रहेगा। इससे पूर्व सोवियत गणतन्त्र और पूंजीवादी राज्यों के बीच भयानक टक्कर होती रहेगी।" वर्तमान सोवियत नेता सरकारी तौर पर इस दृष्टिकोण का समर्थन नहीं करते।

१९३१ में शुरू होने वाली आक्रमात्मक कार्रवाइयों के एक दीर्घ क्रम के पश्चात् स्तालिन ने अपने प्रवक्ता जार्जी मालिनकोव द्वारा संसार को विश्वास दिलाया कि सोवियत यूनियन "पूंजीवाद से शान्तिपूर्ण मुकाबले" के अतिरिक्त कुछ नहीं चाहता। सोवियत यूनियन का कोई ऐसा विचार नहीं कि जीवन के प्रति अपना सिद्धान्त अथवा अपनी आर्थिक पद्धति किसी पर बलपूर्वक ठोंसे।"

फरवरी, १९५६ में सोवियत कम्यूनिस्ट पार्टी की बीसवीं कांग्रेस में पार्टी सेक्रेटरी निकिता खू्श्चेव ने भी ऐसी ही भावना प्रकट की थी। "यह सोचना हास्यस्पद है कि क्रान्ति आदेश के अनुसार तैयार की जा सकती है।" परन्तु पूर्वी यूरोप में १९४४-४८ की क्रान्तियां "आदेशानुसार ही लाई गई थीं।

आदेश देने वाले मास्को और उसके एजन्ट और पिट्ठू थे।"

इसलिए आज सोवियत "सामूहिक नेतृत्व" यदि "शान्तिपूर्ण मुकाबले" पर बल डाल रही है और इसके साथ ही संसार के बहुत से क्षेत्रों में कम्यूनिस्टों की तोड़-फोड़ की कार्रवाइयाँ जारी हैं, तो इसे भी कम्यूनिस्टों की कूटनीति ही समझना चाहिए, जिसे आवश्यकतानुसार किसी समय भी बदला जा सकता है।

२. क्या सोवियत यूनियन की "शान्ति आयोजना" कोई ताज़ा आविष्कार है ?

बोलशेविक क्रान्ति के उपरान्त ही से सोवियत नेता (कम्यूनिस्ट ढंग के) "शान्ति" का ढोल पीटते रहे हैं। इसके साथ मास्को की लालसा का प्रदर्शन भी होता रहा है। इसने छोटे-छोटे पड़ोसियों को हड़प करके अपने राज्य का विस्तार किया है। इसके लिए इसने इच्छा तथा आवश्यकता अनुसार सैन्य शक्ति, षड्यन्त्र तथा तोड़-फोड़ सभी का प्रयोग किया है।

३. कम्यूनिस्ट सिद्धान्तों में "शान्ति" का क्या महत्व है ?

१९१६ में लेनिन ने लिखा था: "यदि शान्ति आयोजना जनता को क्रांति की आवश्यकता तथा महत्व नहीं जताती, क्रान्ति में जनता के संघर्ष को सहयोग देने और संघर्ष को सुदृढ़ बनाने के लिए उत्साहित नहीं करती, तो वह जनता के लिए धोखा है।

१९२८ में कम्यूनिस्ट इंटरनैशनल की विश्व कांग्रेस में "शान्ति" के प्रति सोवियत नीति की व्याख्या इस प्रकार की गई।

"रूस की विश्व शान्ति का उद्देश्य रूस के शासक वर्ग अर्थात् सर्वहारा वर्ग के हितों की रक्षा करना और सर्वहारा वर्ग की डिक्टेट्रशिप के सारे समर्थकों को अपने झंडे तले इकट्ठा करना है।"

"साम्राज्यवादी देशों के परस्पर झगड़ों से लाभ उठाने के लिए यह नीति अत्यधिक उपयोगी है।"

"इस नीति का उद्देश्य यह है कि विश्व क्रान्ति की रक्षा करे और सोशलिज़्म (अर्थात् कम्यूनिज़्म) के निर्माण के संघर्ष को रुकावटों से सुरक्षित रखे —क्योंकि सोशलिज़्म के विजयी होने के फलस्वरूप संसार में एक नई क्रान्ति पैदा होगी। इस नीति का लक्ष्य है कि साम्राज्यवाद से सशस्त्र टक्कर जितनी देर तक सम्भव हो, रोके रखे।"

इससे व्यक्त है कि सोवियत सरकार की "शान्ति की नीति" इसलिए निर्धारित की गई है कि गैर-कम्यूनिस्ट देशों से टक्कर न हो और इस अवधि में

कम्यूनिस्टों को मिश्रित होकर अपनी तोड़-फोड़ की कार्रवाइयाँ जारी रखने का अवसर मिलता रहे। वे अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिज़्म की विजय के लिए प्रयत्नशील रहें और संसार भर के देश कम्यूनिज़्म को अपनाने पर विवश हो जाएं। "शांतिपूर्ण सहअस्तित्व" की नीति रूस को इस आंतरिक अथवा स्थानीय संग्राम में हस्तक्षेप करने से नहीं रोकती जो कम्यूनिस्ट ताक़तों तथा उनके समर्थकों ने आरम्भ कर रखा हो और जो मास्को के हित में हो।

४. स्टाकहाम की तथाकथित शान्ति अपील क्या थी ?

मार्च, १९५० में मास्को की प्रेरणा पर स्टाकहाम में विश्व शान्ति कांग्रेस हुई। "स्टाकहाम अपील" इस कांग्रेस ने प्रस्तुत की थी। अन्तर्राष्ट्रीय प्रोपेगण्डे के लिए रूस के सबसे बड़े सूत्र कामिन फार्म ने इस अपील को विश्व भर में वितरण के लिए एक विस्तारपूर्वक योजना बनाई। सारी दुनिया में इस अपील का चर्चा कराया गया। इस कार्य में सहयोग देने वालों में कम्यूनिस्टों तथा उनके समर्थकों के अतिरिक्त वे लोग भी शामिल थे जो अपने स्वभाव के कारण इस आकर्षक जाल में फंस गए थे।

करोड़ों लोगों ने इस संक्षिप्त अपील से धोखा खाया। क्योंकि वे समझे कि यह अपील युद्ध निषेध की मांग करती है हालांकि इसमें केवल परमाणु हथियारों पर प्रतिबन्ध लगाने की मांग की गई थी। इसमें साधारण हथियारों अथवा युद्ध तथा आक्रमण के अन्य रूपों का जिक्र तक न किया गया था। इसका वास्तविक उद्देश्य दूर पूर्व में आयोजित रूसी आक्रमण की तैयारियों पर पर्दा डालना था।

यह अपील अन्तिम क्षण तक देश-विदेश में गूंजती रही। फिर अकस्मात ही इसका भेद खुल गया। उत्तरी कोरिया ने अपने दक्षिण में शान्तमयी तथा दुर्बल पड़ोसी, दक्षिणी कोरियाई गणतंत्र पर धावा बोल दिया। इस आक्रमण का आयोजन क्रेमलिन में ही हुआ था और रूस ने इस हमले में उत्तरी कोरिया को हर प्रकार की सहायता दी थी।

५. कम्यूनिस्टों द्वारा आयोजित "शान्ति आन्दोलन" को गतिरूढ़ रखने के लिए सोवियत सरकार ने और किन-किन साधनों का प्रयोग किया है ?

मास्को के आधुनिक "शान्ति आन्दोलन" का श्रीगणेश अगस्त, १९४८ में हुआ था। उसदिन कोमिन फार्म को स्थापित हुए एक वर्ष ही हुआ था। मास्को ने "शान्ति" का पहला आन्दोलन शान्ति के बनाये रखने के लिए 'शांति

के लिए बुद्धिवादियों की विश्व कांग्रेस' के रूप में प्रारम्भ किया। यह कांग्रेस १९४८ में रोक्ला, पोलैंड में हुई थी। इसके बाद से "शान्ति आन्दोलन" चलाने के लिए कई संस्थाएँ बनाई जा चुकी हैं।

(कोमिन फार्म अथवा कम्यूनिस्ट सूचना व्यूरो अप्रैल, १९५६ में तोड़ दिया गया)

आजकल कम्यूनिस्ट प्रकाशन और प्रसारण के प्रत्येक साधन तथा जनता को प्रभावित करने की प्रत्येक विधि अपने शान्ति के बहुरूप पर संसार भर का विश्वास जमाने के लिए प्रयोग कर रहे हैं। वे जनसाधारण को विश्वास दिलाने का प्रयत्न करते हैं कि कम्यूनिस्ट शान्ति प्रेमी हैं जबकि पूंजीवाद के अनुयायी "जंगबाज़" हैं और आक्रमण कार्रवाइयों को प्रोत्साहन देते हैं। कम्यूनिस्टों के अधीन तमाम समाचारपत्रों, पत्रिकाओं, रेडियो स्टेशनों और मंचों से मास्को के "शान्ति प्रेम" के गीत गाये जाते हैं। मास्को द्वारा आयोजित विश्व कान्फ्रेंस भी ऐसे ही प्रस्तावों पर बहस करती है और उन्हें स्वीकार करती रहती है जिनमें सोवियत "शान्ति प्रियता" का ढोल पीटा गया हो।

इस प्रकार एक ओर तो कम्यूनिस्टों द्वारा "शान्ति आन्दोलन चलाये जाते हैं और दूसरी ओर संसार के भिन्न-भिन्न भागों में षड़यन्त्र तथा उपद्रव रचे जाते हैं।

९. क्या कम्यूनिस्टों ने अपने शान्ति के कार्यक्रम के अन्तर्गत कोई स्थायी संस्था भी बना रखी है।

अप्रैल १९४९ में कम्यूनिस्टों के चलाए गए शान्ति आन्दोलन के समर्थकों ने पैरिस में विश्व शान्ति कौंसिल स्थापित की। इस पर कम्यूनिस्टों का पूर्ण नियन्त्रण पहले की तरह अब भी है। प्रतिवर्ष यह कौंसिल 'विश्व शांति कांग्रेस' का आयोजन करती है। यह कांग्रेस सोवियत प्रापेगण्डा ही का साधन है। नवम्बर, १९४९ में कोमिनफोर्म की सरकारी पत्रिका "स्थायी शान्ति के लिए, अवामी प्रजातंत्र के हित में" (जिसका प्रकाशन अप्रैल, १९५६ में बन्द कर दिया गया) में कम्यूनिस्ट पार्टी के सब सदस्यों को हिदायत की गई कि मास्को द्वारा चलाए गये "विश्वशान्ति आन्दोलन" को बढ़ावा दें और इसका सम्भवतः गैर कम्यूनिस्टों को समर्थक बनाए।

इस आन्दोलन को बढ़ावा देने के लिए ऐसी संस्थाओं का आश्रय लिया गया जैसे "श्रमिक संघ नारियों तथा नवयुवकों की संस्थाएँ, परस्पर सहयोग के

संस्थापन, सांस्कृतिक, शिक्षा सम्बन्धी, धार्मिक तथा इस प्रकार की अन्य संस्थाएँ, वैज्ञानिक, लेखक, सांस्कृतिक कार्यकर्ता, प्रजातन्त्रीय नेता जो शान्ति के समर्थक और युद्ध के विरोधी हों।

इस आन्दोलन के पीछे कम्यूनिस्टों की यह आकांक्षा छिपी हुई थी कि विद्वानों के संघ, ट्रेड यूनियन कार्यकर्ता लोकप्रिय सिद्धान्त "शान्ति" के हित में एकत्रित हो जाएँ जिसकी प्रियता सार्वजनिक है, परन्तु जिसे मास्को ने पहले भी अपने लाभ के लिए प्रयोग किया था और भविष्य में भी करना चाहता है।

७. कौन-कौन सी विशेष संस्थाएँ कम्यूनिस्टों के "शान्ति आन्दोलनों" को चलाती हैं?

सोवियत संघ की "शान्ति" के लिए आन्दोलन चलाने वाली संस्थाएँ ये हैं—नारियों की विश्व गणतन्त्रीय परिषद्, ट्रेड यूनियनों की विश्व फैडरेशन, वैज्ञानिकों की विश्व फैडरेशन और गणतन्त्रीय नवयुवकों की विश्व फैडरेशन। इन सब संस्थाओं पर कम्यूनिस्टों का कब्ज़ा है।

सोवियत ब्रांड "शांति" के प्रापेगण्डा के लिए कुछ और संस्थाएँ भी प्रयत्नशील रहती हैं। विद्यार्थियों की विश्व यूनियन। गणतन्त्रीय कानूनदानों की विश्व एसोसिएशन और पत्रकारों की विश्व संस्था। भिन्न-भिन्न स्थानों पर इन संस्थाओं की शाखाओं की संख्या इतनी अधिक है कि उन्हें गिनाना असम्भव है। (सोलहवां अध्याय भी देखिए)।

८. अमन कमेटियां (शान्ति समितियां) क्या हैं और उनका अभिप्राय क्या है?

विश्व शान्ति कौन्सिल मास्को के इशारे पर चलती है। इसने स्थानीय "अमन कमेटियों" का जाल बिछा रखा है जिनमें कम्यूनिस्टों और उनके समर्थकों के अतिरिक्त कुछ ऐसे गैर-कम्यूनिस्ट भी शामिल हो गये हैं जो इनके वास्तविक उद्देश्यों से अपरिचित हैं।

कुछ देशों में "अमन कमेटियां" राष्ट्रीय स्तर पर भी काम करती हैं। इनके मुख्य कर्त्तव्य ये हैं: (१) शहरों जिलों तथा कारखानों में, जहां भी सम्भव हो, अमन कमेटियां स्थापित करना। (२) कम्यूनिस्ट पार्टी के मेम्बरों की हिदायत पर ऐसे गैर-कम्यूनिस्टों को फुसलाना जिन्हें विश्व-शान्ति से लगाव हो और (३) शान्ति के प्रापेगण्डे की आड़ में सोवियत की परराष्ट्र नीति के उद्देश्यों को पूरा करना या स्थानीय कम्यूनिस्ट पार्टी को मज़बूत बनाना।

९. "पूर्ण निरस्त्रीकरण" के विषय में सोवियत प्रस्ताव क्या है? क्या इसमें कोई विशेष गुण भी है?

सितम्बर, १९५९ में "पूर्ण निरस्त्रीकरण का प्रस्ताव राष्ट्र संघ की बृहत् सभा में प्रधान मंत्री ख्रुश्चेव ने स्वयं रखा यह उनके अमरीकी दौरे का चरम चरण था। उन्होंने कहा : हमारे प्रस्ताव का सारतत्त्व यह है कि चार वर्ष के अन्दर-अन्दर सब देश पूर्ण निरस्त्री करण की नीति को ग्रहण कर लें। इसके उपरान्त जंग छेड़ने का कोई साधन किसी के पास न रहे।"

१९३२ के जेनेवा विश्व निरस्त्रीकरण सम्मेलन में सोवियत विदेश मंत्री लिटवीनोफ ने जो सुझाव रखा था, ख्रुश्चेव का प्रस्ताव उससे काफी मिलता-जुलता है। परन्तु उस सम्मेलन के सात वर्ष बाद ही हालत यह थी कि एक ओर स्टालिन के प्रवक्ता रूस की 'शान्तिपूर्ण" नीति के गुण गा रहे थे और दूसरी ओर पूर्वी यूरोप में रूस ने ऐसी आक्रमणात्मक कार्रवाइयां शुरू कर रखी थीं जिनका उदाहरण आधुनिक काल में कहीं नहीं मिलता। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् सी. पी एस. यू. ने विश्व कम्यूनिस्ट संस्थान स्थापित किए जो आज भी दोमुखी नीति अपनाए हुए हैं। एक ओर तो वह सोवियत प्रोपेगण्डे के नारों को दोहराते हैं : "भयानक बमों पर प्रतिबंध लगाओ" इत्यादि और दूसरी ओर जब कोरिया, हंगरी और तिब्बत में चीनी सोवियत गुट की ओर से सशस्त्र शक्ति का प्रयोग किया जाता है तो वह चुप रहते हैं। इसलिए ख्रुश्चेव का यह प्रस्ताव खाली प्रापेगण्डा से अधिक महत्व नहीं रखता, जिसे देश के अन्दर और बाहर जनता को छल देने के लिए फैलाया जाता है। उनकी कोशिश यह है कि किसी-न-किसी तरह मास्को को "शान्ति कैम्प" का बना कर पेश किया जाए।

१०. शान्ति के नाम पर आक्रमणात्मक कार्रवाइयों को कम्यूनिस्ट किस प्रकार उचित सिद्ध करते हैं?

मास्को की वास्तविक आकांक्षाओं पर पर्दा डालने के लिए रूस जो प्रयत्न करता है उसे उचित सिद्ध करने के लिए सोवियत प्रोपेगण्डा शब्दों की रचना से खूब काम लेता है।

उदाहरण के लिए, पूर्वी पोलैण्ड पर लाल सेना के आक्रमण से एक दिन पूर्व १६ सितम्बर, १९३९ को सोवियत समाचार पत्रों में इस प्रकार के समाचार प्रकाशित हुए :

संसार भर के देशों को मोलोटोव का आश्वासन : रूस युद्ध में (द्वितीय महायुद्ध) तटस्थ रहेगा :

सोवियत आक्रमण से अगले दिन इन्हीं समाचार पत्रों द्वारा पोलैण्ड में सुर्ख सेना के प्रवेश पर प्रसन्नता प्रकट की और घोषणा की कि सोवियत हमला "स्वतंत्रता तथा विश्व शान्ति के हित" में था। जब अक्टूबर में नाज़ियों और रूसियों ने पोलेण्ड को आपस में बांट लिया तो सोवियत प्रेस ने तुरन्त ही ढिंडोरा पीटा : पूर्वी यूरोप में शांति स्थापित।"

सोवियत दृष्टिकोण के अनुसार किसी झगड़े का "शान्तिपूर्ण निपटारा उसे कहा जाता है कि या तो महत्वपूर्ण समस्याओं पर गैर कम्यूनिस्ट सरकार मास्को का आधिपत्य स्वीकार करने अथवा हिंसा, दमन तथा तोड़-फोड़ की कारवाइयों से कम्यूनिज़्म अधिकारारूढ़ हो जाए।

११. क्या सोवियत सरकार ने दूसरे देशों से की गई युद्ध न करने की संधियों का उल्लंघन किया है ?

जी हाँ—कई वार ! १६२७ में ईरान तथा सोवियत सरकार ने तटस्थता की संधि पर हस्ताक्षर किए। निर्णय हुआ कि कोई भी देश एक दूसरे के आंतरिक मामलों में दखल नहीं देगा। परन्तु द्वितीय महायुद्ध के अन्त के बाद मास्को ने उन सोवियत सैनिक दस्तों को वापस बुलाने से इन्कार कर दिया जो युद्धकाल में ईरान भेजे गए थे। संयुक्त राष्ट्र का दवाव पड़ने पर ही कहीं १६४७ में यह दस्ते ईरान से निकाले गए।

१६२६ में सोवियत सरकार ने पोलैंड, एस्टोनिया, लटेविया और रूमानिया के साथ जंग न करने की संधियाँ कीं। फिर मास्को ने एस्टोनिया तथा लटेविया के साथ व्यक्तिगत रूप से भी सन्धियां कीं और लिथवानिया से मैत्री-संधि की। इसके बाद पूर्वी पोलैंड पर सोवियत सैनिक दस्तों ने कब्जा कर लिया और १६३६ में इस इलाके को सोवियत यूनियन ने अपने राज्य में मिला लिया। एस्टोनिया, लटेविया, और लथवानिया पर भी लाल सेनाएं चढ़ दौड़ीं, और १६४० में उनको भी राज्य का अंग बना दिया गया। रूमानिया की वैधानिक सरकार को सोवियत सैन्य शक्ति तथा षड्यन्त्र ने खत्म कर दिया १६३३ में सोवियत सरकार ने फिनलैंड के साथ युद्ध न करने की सन्धि पर हस्ताक्षर किए। १६३६ में बिना सूचना दिए अकस्मात् ही सोवियत सेनाओं ने फिनलैंड पर धावा बोल दिया।

१६३७ में मास्को ने राष्ट्रवादी चीन की सरकार से जंग न करने की संधि की। अगस्त, १६४५ में इसी सरकार को चीन की वैध सरकार मानकर मैत्री

सन्धि की। परन्तु फिर १९४५ से ही रूसियों ने चीनी प्रदेश मन्चूरिया के उद्योगों को लूट लिया, चीनी कम्यूनिस्टों को हथियार दिए और उन्हें राष्ट्र-वादी सरकार का तख्ता उलट देने के लिए प्रत्येक सहायता दी। रूस ने चीनी कम्यूनिस्टों को अधिक सैनिक सहायता देकर इतना शक्तिशाली बना दिया कि वह चीनी मेन लैंड पर काबिज हो गया।

१२ फरवरी, १९४५ को स्तालिन ने अपने पश्चिमी मित्र देशों के साथ याल्टा सन्धि पर हस्ताक्षर किए। फिर २, अगस्त को उन्होंने पोस्टडम संधि की। इन सन्धियों में उन्होंने विश्वास दिलाया कि पूर्वी यूरोप में सरकारें गण-तान्त्रिक विधियों के अनुसार स्थापित की जायेंगी।

इन सन्धियों पर हस्ताक्षर हुए अधिक समय नहीं हुआ था कि रूसियों ने, और पिट्ठू देशों में उनके सहायकों ने, उनकी अवहेलना शुरू कर दी।

१२. संयुक्त राष्ट्र संघ में सोवियत यूनियन का क्या व्यवहार रहा है ?

१९४५ में जब सानफरांसिसको की अंतर्राष्ट्रीय कांफ्रेंस में संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना की गई तो ४९ अन्य देशों के साथ सोवियत सरकार ने भी संकल्प किया कि अंतर्राष्ट्रीय झगड़ों के शान्तिपूर्ण निपटारे के लिए वह सदा ही प्रयत्न-शील रहेगा। परन्तु रूस ने अपने इस संकल्प का कभी पालन नहीं किया। राष्ट्र संघ में रूस ने प्रायः रोड़े अटकाने तथा अड़चनें पैदा करने का व्यवहार अपनाए रखा है। सोवियत गुट के प्रतिनिधि सदैव विफल प्रयत्न करते रहते हैं कि ऐसे प्रस्ताव स्वीकार कराए जाएं जिनमें स्वतन्त्र देशों की निन्दा की गई हो। १९५९ में सोवियत प्रतिनिधियों ने सुरक्षा परिषद में अस्सी बार वीटो का प्रयोग किया।

अगस्त, १९४५ में सोवियत सेना टुकड़ियों ने उत्तरी कोरिया पर कब्जा किया। सोवियत प्रशासकों ने उत्तरी कोरिया के लिए सेना भर्ती की, उन्हें युद्धकला सिखलाई, हथियार दिए और २५ जून, १९५० को उनसे कोरिया के गणतन्त्र पर आक्रमण कराया। संयुक्त राष्ट्र मण्डल ने उत्तरी कोरिया को आक्र-मणकारी घोषित किया परन्तु सोवियत यूनियन के प्रतिनिधि ने न केवल आक्र-मण का समर्थन किया बल्कि बाद में चीन के सशस्त्र हस्तक्षेप को भी उचित सिद्ध किया। दिसम्बर १९५६ में रूस ने तथा हंगरी की कठपुतली सरकार ने राष्ट्र मण्डल के एक प्रस्ताव को कार्यान्वित करने से इन्कार कर दिया। इस प्रस्ताव में राष्ट्र मण्डल के प्रेक्षक हंगरी में भेजने की अनुमति दी गई थी।

१३. युद्ध के विषय पर मार्क्सी-लेनिनी दृष्टिकोण क्या है ?

लेनिन ने १९१८ में कहा था : यदि सर्वहारा वर्ग अपने देश के पूंजीपति वर्ग को परास्त करने के पश्चात् युद्ध करे और यदि उस युद्ध का उद्देश्य यह हो कि कम्यूनिज़्म सफल तथा शक्तिशाली बने तो ऐसा युद्ध उचित है, "पुण्य" है।

इस दृष्टिकोण के समर्थन में "वृहत् सोवियत सर्वभौमकोष" (Encyclopaedia) के दूसरे संस्करण में युद्ध के विषय पर एक लेख है जिसमें "गणतान्त्रिक (कम्यूनिस्ट) आन्दोलन के विरुद्ध साम्राजी पूंजीपति वर्ग" की ओर से छेड़ी गई "अन्यायपूर्ण तथा प्रतिक्रियावादी लड़ाइयों" का कम्यूनिस्ट सरकारों द्वारा "न्याय संगत स्वाधीनता दिलाने वाले" युद्धों का अन्तर बताया गया है।

इस दृष्टिकोण के अनुसार यह निर्णय करने के अधिकारी केवल कम्यूनिस्ट हैं कि कौन-सी लड़ाई "अन्यायपूर्ण और प्रतिक्रियावादी" है और कौन-सी "न्याय-संगत तथा आजादी दिलाने वाली।" इस तर्क के अनुसार जब रूस ने एक छोटे से राज्य फिनलैंड पर हमला किया तो उसे "न्यायपूर्ण" लड़ाई कहा गया। कोरिया गणतन्त्र पर उत्तरी कोरिया की सरकार का आक्रमण भी उनकी दृष्टि में न्याय संगत था।"

१४. क्या कम्यूनिस्ट शिक्षा पद्धति भी सैन्य वृत्ति पैदा करती है ?

रूस तथा समस्त अन्य कम्यूनिस्ट देशों की शिक्षा पद्धतियों में सैन्य वृत्ति आच्छादित है और शिक्षा अधिकारी इसी वृत्ति को प्रबल बनाने के उद्देश्य को सामने रखकर ही पाठ्यक्रम तैयार करते हैं। प्राथमिक स्तर से गुजरने के उपरान्त कोमसोमोल (Young Communist League) युद्धकला के प्रशिक्षण तथा ट्रेनिंग पर अधिक बल देती है (नवां अध्याय देखिए)। क्रीड़ा क्षेत्र भी इस वृत्ति से सुरक्षित नहीं है। १९५३ में सोवियत सेना तथा नौ सेना की वर्ष गांठ मनाई गई। इस अवसर पर "सोवियत" ने थल, नौ तथा वायु सेना की सहायक समिति के उद्देश्यों की व्याख्या की।

"हमारी नवीन पीढ़ी इस बात की इच्छुक है कि वह युद्धकला तथा विज्ञान में कुशल हो। वह खेल-कूद के उन विशेष पहलुओं में बहुत दिलचस्पी लेती है जो युद्ध में उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं—जैसे निशाने बाजी, पैराशूट का इस्तेमाल, मोटर तथा मोटर साइकल चलाना, जल क्रीड़ाएं, विमानों तथा जल

यानों के नमूने बनाना इत्यादि।" इसी मार्ग पर चल कर हमारी नवीन पीढ़ी

सोवियत समाज की आत्मा बन सकेगी।"

कोमसोमोल की सरकारी पत्रिका "कोमसोमोलस्काया" ने अपने २७ फरवरी १९५३ के अंक में नवीन पीढ़ी को आदेश दिया कि हर कोमसोमोल सदस्य को डी० ओ० एस० ए० एफ० का भी मेम्बर बनाना चाहिए। कोमसोमोल के मेम्बरों पर यह जिम्मेवारी आती है कि देश भर के नवयुवकों के प्रमुख अपने आपको युद्ध कुशलता का मिसाली नमूना बना कर पेश करें।

कोमसोमोल हर प्रकार की सैनिक सामग्री से लैस रहती है। हर तरह की सैनिक गतिविधियों के लिए सदैव प्रबन्ध रहता है। थल सेना के हथियार, विमान, छोटे जहाज, इसके पास रहते हैं। परन्तु इनकी व्यवस्था सैनिक बजट के अन्तर्गत नहीं होती, बल्कि इनके खर्च सरकारी व्यापारी संस्थापना तथा नागरिक संस्थाओं के हिसाब में डाले जाते हैं।

१५. क्या लाल सेना का नियन्त्रण सोवियत कम्यूनिस्ट पार्टी के हाथ में है ?

लाल सेना पर सी० पी० एस० यू० नियंत्रण की व्यवस्था बहुत जटिल है। यह सिस्टम वर्षों तक भिन्न-भिन्न युद्ध सेवाओं तथा जिम्मेदारियों, जो सर्वहारा वर्ग के राज्य के लिए आवश्यक समझी गई थीं, के अध्ययन के पश्चात् निश्चित किया गया।

१९२० के बाद के दशक में इस बात पर पूर्ण बल दिया गया था कि सोवियत सेनाएं एक ओर नागरिक आबादी को काबू में रखने का विश्वसनीय साधन हों और दूसरी कम्यूनिज़्म की "मातृ-भूमि" की सुरक्षा का कार्य संभाल सकें।

इसी दौरान में कम्यूनिस्ट पार्टी ने राजनीतिक कमिसारों का सिस्टम कायम किया (१९४४ में यह तोड़ दिया गया था)। इसके अन्तर्गत लाल सेना में प्रत्येक स्तर पर पार्टी के प्रतिनिधि नियुक्त किए गए। उनके अधिकार सैनिक अफसरों के बराबर अथवा उनसे भी अधिक थे। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उन्हें फिर से नियुक्त कर दिया गया। इस बार उन्हें राजनीतिक सलाहकार का नाम दिया गया। 'स्तालिनग्राड के हीरो' मार्शल ज़ुखोव के मामले से व्यक्त है कि सेना पर पार्टी का नियंत्रण कितना कड़ा है। स्तालिन को युद्ध काल के बहुत से जरनैलों पर भरोसा नहीं था। उन्होंने ज़ुखोव को भी एक मामूली से पद पर नियुक्त कर दिया। स्तालिन की मृत्यु के पश्चात् ज़ुखोव को पुनः प्रतिष्ठित

किया गया। और उन्हें सुरक्षा मंत्री का पद सौंपा गया परन्तु फिर अक्टूबर, १९५७ में ख्रुश्चेव ने "पार्टी विरोधी ग्रुप" को पार्टी से निकालना शुरू किया तो ज़ुखोव भी सफाई की महिम का शिकार हो गया। उन पर लाल सेना पर पार्टी का नियं- त्रण कमज़ोर करने का आरोप लगाया गया।

१६. क्या लाल सेना में गुप्त पुलिस भी काम करती है ?

के० जी० वी० (गुप्त पुलिस) ने लाल सेना पर निगरानी रखने के लिए विशेष व्यवस्था बना रखी है।

के० जी० बी० के विशेष दस्ते लाल सेना में असन्तोष के लक्षणों की तलाश में रहते हैं। इस निगरानी से सेना के उच्चतम अधिकारी भी नहीं बचे रहते। प्रत्येक सैनिक के चरित्र का लेख प्रमाण रखा जाता है और उसकी वैयक्तिक फाइल का विस्तार से निरीक्षण किया जाता है कि इसने भूतकाल में कभी सोवियत विरोधी कार्यविधियों तथा सोशलिज़्म विरोधी आन्दोलनों में भाग तो नहीं लिया। के० जी० वी० अपने गुप्तचरों को सैनिकों तथा उनके अधिकारियों पर मुखबरी का प्रोत्साहन करती है और इस प्रकार सैनिक तथा अधिकारी सामान्य रूप में राज्य विरोधी कार्यविधियों के आरोप दण्ड दिए जाने के खतरे से सदा दो-चार रहते हैं।

१७. लाल सेना में वर्गीय भेदभाव कहाँ तक मौजूद हैं ?

शाही काल की रूसी सेना की तरह लाल सेना में भी साधारण सैनिकों तथा अफसरों के बीच वर्गीय भेद-भाव मौजूद हैं।

पद तथा अलंकरण का प्रदर्शन, ऊंचा वेतन तथा आनन्दपूर्ण जीवन उच्च सैनिक अधिकारियों के विशेपाधिकार हैं।

फौजी अफसर का वेतन सामान्यतः उच्च व्युरोक्रेट के बराबर होता है। सेना में कोआप्रेटिव स्टोरों का एक विशेष सिलसिला कायम है जिसे "वोइन-टोर्ग" कहते हैं। इन दुकानों से फौजी अफसर तथा उनके परिवार विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ तथा कपड़े और अन्य सामग्री—हासिल कर सकते हैं जो साधारण सैनिकों तथा शहरी आबादी को नहीं मिलती। सुविधापूर्ण मकान भी अफसरों को सबसे पहले दिए जाते हैं।

१८. लाल सेना के बहुत से अफसर रूस से भाग क्यों आए हैं ?

लाल सेना से भगौड़े अफसर कम्यूनिज़्म से अपने सम्बन्ध विच्छेद का बड़ा कारण यह बताते हैं कि गुप्त पुलिस की निरन्तर निगरानी से उन्हें हर समय

अरक्षित होने की भावना बनी रहती थी और डर लगा रहता था।

यों तो सोवियत फौजी अफसर प्रतिष्ठित तथा विशेषाधिकार वर्ग से सम्वन्ध रखते हैं परन्तु के० जी० बी० द्वारा उन पर निगरानी उन्हें हर समय याद दिलाती रहती है कि स्वाभाविक रूप में मुंह से निकला हुआ कोई शव्द या गुप्तचर की कोई अप्रमाणित सूचना किसी समय भी उनका सैनिक जीवन से वहिष्कार या जीवन के अन्त का कारण वन सकती है।

१६. क्या पिट्ठू देशों में भी बड़ी-बड़ी सेनाएँ हैं ?

पूर्वी यूरोप के सव देशों ने वड़ी-वड़ी सेनाएं रख छोड़ी हैं जो प्रायः लाल-सेना के प्रभावाधीन होती हैं और बहुधा उसके प्रत्यक्ष नियंत्रण में रहती हैं। पिट्ठू देशों की सेनाएं सोवियत शस्त्रों से लैस होती हैं या फिर उन्हें वही सामान दिया जाता है जो पूर्वी यूरोप में सोवियत सैनिक कोटि के अनुसार तैयार किया गया हो। १६५५-१६५६ में पिट्ठू देशों की सेनाओं में सीमित कमी की घोषिणा की गई थी।

२०. क्या कम्यूनिस्ट चीन ने भी सोवियत रूस की भांति आक्रमणात्मक वृत्ति व्यक्त की है ?

१६५० के वाद ही से पीपिंग सरकार ने आक्रमणात्मक कार्यविधियों तथा विस्तारात्मक कार्रवाइयों को अपना नियम वना रखा है।

इसी वर्ष में कम्यूनिस्ट चीन ने तिव्वत पर आक्रमण करके उसका अपने राज्य में प्रदेश के रूप में विलय कर लिया है। तिव्वती लोगों के साथ भी वह यही क्रूर व्यवहार कर रहे हैं जो चीनी मेन लेण्ड में लोगों के साथ किया जाता है।

सितम्बर, १६५० में चीनी कम्यूनिस्ट सैनिक वड़ी संख्या में उत्तरी कोरिया में प्रविष्ट हुए। वे अपने आपको स्वयंसेवक कहते थे। उन्होंने राष्ट्र संघ की उन सेनाओं से जंग छेड़ दी जो कोरियाई गणतन्त्र की प्रादेशिक अखण्डता तथा स्वतन्त्रता की सुरक्षा के लिए वहां गईं थीं। इस हस्तक्षेप के कारण राष्ट्र संघ ने चीन को भी आक्रमणकारी घोषित किया।

२१. कम्यूनिस्ट सशस्त्र सेनाओं की आधुनिक सांख्यिक ताकत क्या है ?

सोवियत सशस्त्र सेना की कुल संख्या का ठीक अनुमान लगाना कठिन है, क्योंकि सशस्त्र सेना के अतिरिक्त कोमसोमोल जैसी अर्ध सैनिक संख्याओं में भी बड़े पैमाने पर भर्ती होती है। ख्रुश्चेव ने अपनी १४ फरवरी, १६६० के

भाषण में कहा था कि आगामी दो वर्षों में रूसी सैनिकों की संख्या ३६,००,००० से घटाकर २४,००,००० कर दी जाएगी। उन्होंने यह घोषणा भी की कि लगभग सारी वायु सेना का स्थान अब राकेट मशीनरी ले रही है। (एक गैर सरकारी ब्रिटिश अनुमान के अनुसार सोवियत सेना में १९५९ में ३९,००,००० सैनिक थे। यानी १९५३ में स्तालिन के निधन के बाद से सैनिकों की संख्या में केवल दस लाख की कमी हुई है)

पिट्ठू देशों की सेनाओं में एक अनुमान के अनुसार दस लाख सिपाही हैं। कम्यूनिस्ट चीन के बारे में विश्वास किया जाता है कि वहां २६,००,००० व्यवसायी सैनिक हैं और कोई साठ लाख व्यक्ति सशस्त्र अगामी सेना) में हैं। अवरोक्त को युद्ध-कुशल नहीं समझा जाता।

२२. राष्ट्रीय क्रान्तियों को कम्यूनिस्ट किस प्रकार अपने उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल करते हैं ?

१९५५ के बाद से (विशेष रूप से १९५७ में और इसके उपरान्त) अंतर्राष्ट्रीय कम्यूनिज़्म की नीति, मास्को के निर्देशानुसार यह रही है कि कट्टर राष्ट्रवादी पार्टियों तथा आन्दोलनों की सहायता की जाये ताकि कम्यूनिज़्म को उनमें घुसने तथा अधिकृत करने में सफलता मिल सके।

१९५५ में सोवियत गुट से युद्ध सामग्री बड़े पैमाने पर मध्य पूर्व को भेजी जाने लगी। यह इस क्षेत्र में सोवियत राजनीति के हस्तक्षेप का संकेत था। कम्यूनिस्टों ने हथियारों की सप्लाई के साथ-साथ व्यापार तथा आर्थिक सहायता की पेशकश भी की। ताहम इन कार्यविधियों के राजनीतिक प्रभाव उपेक्षणीय रहे क्योंकि निकट पूर्व तथा मध्य पूर्व में कम्यूनिस्ट पार्टियों का कोई राजनीतिक महत्व नहीं है।

परन्तु जब जुलाई/अगस्त, १९५८ में ब्रिगेडियर कासिम ने इराक़ में सैनिक विप्लव के पश्चात् सरकार कायम कर ली तो कम्यूनिस्टों को यहाँ पर उच्छेदक कार्य विधियाँ करने का अवसर मिला। इराक़ की कम्यूनिस्ट पार्टी इतनी शक्तिशाली नहीं है परन्तु इस उपद्रव से पार्टी ने पूर्ण लाभ उठाया और किसानों तथा औद्योगिक श्रमिकों को संगठित करना शुरू कर दिया (इस क्रान्ति से पूर्व मज़दूर संगठन नाम मात्र ही था)। कम्यूनिस्टों ने सोचा था कि ये नई संस्थाएं उनके अधिकार में रहेंगी। और वह जिस प्रकार चाहेंगे इन्हें इस्तेमाल करेंगे। उन्होंने कोशिश की कि पूर्वी यूरोप की "कार्रवाई समितियों के नमूने पर इराक़

में भी एक "अवामी सेना" बनाई जाए। (जब पूर्वी यूरोप पर कम्यूनिस्टों का

कब्जा हुआ था तो यह प्रशिक्षित "कारवाई समितियाँ" शासन व्यवस्था को संभालने के लिए तुरन्त ही मैदान में आ गईं थीं और उन्होंने प्रशासन का प्रत्येक विभाग अपने हाथ में ले लिया था)। कम्यूनिस्ट इस बात के लिए भी प्रयत्नशील रहे कि क्रान्तिकारी सरकार में प्रत्येक स्तर पर उनका रसूख कायम रहे। प्रत्येक विभाग में उनकी आवाज प्रबल हो और सशस्त्र सेना में उनके विश्वस्त व्यक्ति नियुक्त हों। परन्तु जब कम्यूनिस्ट षड्यंत्र तथा चालें अभिव्यक्त होने लगीं तो कम्यूनिस्टों ने स्थायी तौर पर यह सिलसिला बंद कर दिया। चालों तथा घातों के मामले में स्वयं कम्यूनिस्ट पार्टी में फूट पड़ने लगी। और १९६० तक प्रत्येक बात अनिश्चित थी। कोई नहीं कह सकता था कि आगामी दिन क्या रंग दिखाएगा।

जनवरी, १९५९ में फीडल कास्ट्रो और उनके साथियों ने क्यूबा में क्रान्ति करके अपनी सरकार स्थापित कर ली। क्यूबन कम्यूनिस्टों को स्वर्ण अवसर हाथ लगा। उन्हें एक नया मार्ग दीखा। उन्होंने पूरा ज़ोर दिया कि क्रान्ति की धारा वे निश्चित करें, कास्ट्रो सरकार की नीतियाँ उनकी इच्छानुसार बनें। इसमें वे सफल भी हुए। सोवियत घात नीतिज्ञ तो अक्टूबर, १९५८ से ही इशारों ही इशारों में समझा रहे थे कि कम्यूनिस्टों की नई मंजिल क्यूबा है। उनकी दृष्टि विशेष रूप से क्यूबा के मज़दूर संघठन पर थी। कम्यूनिस्टों के निकट क्यूबा बहुत महत्वपूर्ण मोर्चा था। उन्हें आशा थी कि वहां से लेटिन अमरीका में उनका प्रभाव बढ़ेगा। षड्यंत्र फैलाने में सहायता मिलेगी। परन्तु १९५९ अभी समाप्त भी न हुआ था कि लेटिन अमरीका के विषय में सोवियत घातों का सर्वस्व संसार को पता चल गया। इसलिए वहां पर कम्यूनिस्ट भेदन की गति को रोक दिया गया। ताहम कम्यूनिस्टों ने अभी तक साहस नहीं छोड़ा है। लेटिन अमरीका और अफ्रीका के देश, मध्यपूर्व और दूर पूर्व आज भी कम्यूनिस्टों के विध्वंसक षड्यंत्र कार्य-क्रम में प्रथम स्थान पर हैं।

१९५९ में सोवियत गुट के कष्टपूर्ण षड्यन्त्रों में सीमित रूप में चीन भी भाग लेता रहा। वह लेटिन अमरीका और अन्य देशों में अपना प्रापेगण्डा अभियान अलग चलाता रहा और इस प्रकार सोवियत ब्लाक की विध्वंसक कार्य विधियों को सक्रिय बनाने में सहयोग देता रहा।

पंद्रहवां अध्याय

कम्यूनिज़्म और स्वतन्त्र संसार

१. कम्यूनिस्टों की गैर-कम्यूनिस्ट देशों पर अपना नियन्त्रण स्थापित करने की कौन-कौन सी विधियां हैं ?

कम्यूनिस्टों ने गैर-कम्यूनिस्ट देशों को निम्नलिखित चार विधियों में से किसी एक के द्वारा या इनके सम्मिश्रण से अपने नियन्त्रण में लिया है और इस बात के लिए प्रयत्नशील हैं।

(१) ऐतिहासिक तौर पर, २ सैन्य-समाजी क्रांतियों द्वारा कम्यूनिस्ट अधिकारारूढ़ हुए। बोलशेविक पार्टी ने रूस में अक्तूबर, १९१७ की क्रान्ति को सफल बनाया और सैन्य बल से अन्तिम रूप में अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। कम्यूनिस्ट चीन के विषय में भी यह बात सत्य है। (सोवियत नेता अब इस विधि को अधिक महत्व नहीं देते)।

(२) दूसरी विधि अंकित देश की सीमाओं पर सैन्यशक्ति का प्रदर्शन तथा दबाव डालना है। मास्को ने पूर्वी यूरोप में राजनयिक दबाव डालने और आंतरिक गड़बड़ फैलाने की विधि से काम लिया है।

(३) तीसरे तरीके में जोकि दूसरे से बहुत मिलता-जुलता है, षड्यन्त्र, अन्त:सरण, राज्योच्छेदन इत्यादि शामिल हैं जिनसे गैर-कम्यूनिस्ट सरकार का तख्ता उलट दिया जाता है। इस विधि का अत्युत्तम उदाहरण चेकोस्लोवाकिया पर कम्यूनिस्टों का कब्जा है। बीसवीं पार्टी कांग्रेस में सोवियत नेताओं ने यह प्रस्ताव रखा था कि कम्यूनिस्ट वैधानिक तरीकों से भी सत्तारूढ़ हो सकते हैं। फिर भी उन्होंने हिंसा का विशेषरूप से, जहां कम्यूनिस्टों के सरकार पर कब्जा का विरोध हो, परित्याग नहीं किया है। यह बात उल्लेखनीय है कि कम्यूनिस्टों ने किसी भी देश में वैधानिक क्रिया विधि से सफलता प्राप्त नहीं की।

(४) किसी वैधानिक सरकार का तख्ता उलटने का, अथवा इस कार्य के लिए प्रयत्नशील होने का चौथा तरीका यह है कि कम्यूनिस्टों द्वारा स्थापित

"स्वाधीनता कमेटी" या इसी प्रकार के किसी दूसरे ग्रुप को इस्तेमाल किया जाए। ऐसे ग्रुप प्रायः अंकित राज्य से बाहर स्थापित किए जाते हैं। यह ग्रुप देश से बाहर एक "स्वतन्त्र सरकार" की स्थापना घोषित करके सारे देश पर अपने अधिकार का दावा करता है। पोलैण्ड में यही युक्ति प्रयोग की गई थी। वहां पहले लिबलिन में सोवियत निर्देशन के अधीन "राष्ट्रीय स्वाधीनता कमेटी" बनाई गई जिसमें रूस में बहुत देर से रहने वाले पोलिस्तानी कम्यूनिस्टों को शामिल किया गया। धीरे-धीरे पोलैंड पर कम्यूनिस्टों का कब्जा हो गया। कम्यूनिस्ट पोलैण्ड में लिबलिन कमेटी के सदस्यों को उच्च पदों पर नियुक्त किया गया।

किसी स्वतन्त्र देश के भीतर या उसकी सीमा के निकट ही कम्यूनिस्ट "तटगत मोर्चे" की कार्य रीति दूर पूर्व के देशों में सफलता से आज़माई गई है। बाद में यही मोर्चा कम्यूनिस्ट सरकार के फैलने और आगे बढ़ने के लिए अड्डा बन जाता है। लाओस को ले लीजिए। वहां कम्यूनिस्ट पाथेट लाऊ सरकार ने उत्तरी लाओस के १३,००० वर्ग मील इलाके पर कब्जा कर लिया और इस प्रकार जुलाई, १९५४ की जेनेवा युद्ध-स्थगन सन्धि का खुल्लमखुल्ला उल्लंघन किया।

बाद में लाओस की सरकार और पाथेट लाऊ कम्यूनिस्टों में एक सन्धि हुई जिसके अन्तर्गत दोनों पक्षों के सशस्त्र सेनाओं के एकीकरण का निश्चय किया गया। परन्तु यह निश्चय कार्यान्वित न हो सका। कुछ पाथेट लाऊ सैनिक एकीकरण के विरुद्ध थे, इसलिए उन्होंने इसकी राह में बाधाएं डालीं और उत्तरी लाओस के अपने अड्डों में चले गए और शुरू-शुरू में इक्का-दुक्का हमले करते रहे। धीरे-धीरे स्थिति बिगड़ने लगी। १९५९ की ग्रीष्म ऋतु तक कम्यूनिस्ट गुरेला युद्ध इस इलाक़े में दूर-दूर तक फैल गया था। उत्तरी वियत-नाम इस युद्ध में शस्त्र चलाने तथा युद्ध नीति में कुशल सैनिक देकर उन्हें पूर्ण सहयोग दे रहा था।

जब स्थिति संकटपूर्ण हो गई तो लाओस की सरकार ने संयुक्त राष्ट्रमंडल को सूचित किया कि उत्तरी वियतनाम ने इस पर आक्रमण की धमकी दी है तथा इसकी भावी आक्रमण से रक्षा की जाए। सितम्बर में संयुक्त राष्ट्रमंडल ने मौका पर जाकर जांच-पड़ताल के लिए एक आयोग भेजा। उसने स्थिति की छानबीन के उपरान्त रिपोर्ट पेश की कि यद्यपि प्रत्यक्ष रूप में आक्रमणकारी तैयारियां नहीं हो रही हैं, परन्तु उत्तरी वियतनाम की कम्यूनिस्ट सरकार ने

पाथेट लाऊ कम्यूनिस्टों की सहायता अवश्य की है। कमीशन ने इस आरोप की भी पुष्टि की, कि पाथेट लाऊ के गुरेला सैनिकों को उत्तरी वियतनाम में ट्रेनिंग दी गई है।

२. कम्यूनिस्ट किन विचारों का विशेष रूप से प्रचार करते हैं और उनके प्रोपेगण्डा के लिए धन कहां से आता है ?

कम्यूनिस्ट प्रचार-व्यवस्था बहुत विस्तृत होती है। रूस तथा कम्यूनिस्ट चीन की सरकारें इसके लिए विशाल हृदय से धन देती हैं। जिन देशों में कम्यूनिस्ट पार्टियाँ स्थापित हो चुकी हैं वहां पार्टी भी इस काम के लिए धन एकत्रित करती है।

कम्यूनिस्ट नेता प्रांपेगण्डे को वही महत्व देते है जो वह कम्यूनिज्क के विस्तार के अन्य साधनों को प्रदान करते हैं। इनके लिए यह भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितना सैन्य-शक्ति, कूटनीति तथा विध्वंस की कारवाइयां। यह कम्यूनिज्म-लेनिनज्म का मूल तत्त्व है और मूल सिद्धांत के रूप में जनता को उकसाता है कि तमाम गैर-कम्यूनिस्ट सरकारों तथा सुस्थित समाजी संस्थानों का विनाश कर दो। परन्तु आधुनिक कम्यूनिस्ट प्रापेगण्डा लोगों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने और उन्हें कम्यूनिज्म का समर्थक बनाने के लिए अब पुरानी परिभाषाओं जैसे सर्वहारा वर्ग की क्रांति (प्रोलतारी क्रान्ति) तथा "सर्वहारा वर्ग की पूर्ण सत्ता" इत्यादि नारों का आश्रय नहीं लेता।

इसके स्थान पर पिछड़े हुए तथा उपनिवेश देशों में कम्यूनिस्ट प्रचारक तथा प्रवक्ता स्वाधीनता, राष्ट्रवाद, "भूमि पर किसान के आधिपत्य" और अन्य लोकप्रिय नारे लगाते हैं और अपने प्रचार में संसार भर में आधुनिक काल के सबसे बड़े, अत्याचारी सोवियत उपनिवेशवाद का ज़िक्र तक नहीं करते।

उद्योगों में उन्नत देशों में कम्यूनिस्ट मज़दूरों को' भड़काते हैं और झगड़े फैलाते हैं। इनका आशय मज़दूरों की भलाई नहीं होता वल्कि निजी लाभ, जिसमें राजनीतिक प्रभाव बढ़ाना तथा कम्यूनिस्ट पार्टी के अधिक समर्थक बनाना होता है। वह मज़दूरों को उद्योगों के राष्ट्रीयकरण का झांसा देते हैं। जिसमें "उत्पादन के तमाम साधनों पर उनका अपना कब्ज़ा होगा" हालांकि कम्यूनिस्ट देशों में उद्योगों के असली मालिक मजदूर नहीं स्टेट होती है जो कम्यूनिस्ट पार्टी द्वारा बनाई हुई योजनाओं तथा इच्छानुसार उन्हें चलाती है।

३. नवयुवकों को कम्यूनिज्म की ओर आकर्षित करने के लिए कम्यूनिस्ट प्रचारक किन विधियों से काम लेते हैं ?

१९४७ के उपरान्त नवयुवकों के विश्व मेले कई बार बड़ी धूमधाम से मनाए जा चुके हैं। गणतन्त्रवादी युवकों की विश्व संस्था (वर्लंड फैडरेशन आफ डेमोक्रैटिक यूथ—डब्लयू० एफ० डी० वाई०) तथा छात्रों के अन्तर्राष्ट्रीय संघ (इन्ट्रनैशनल यूनियन आफ स्टूडेंटस—आई० यू० एस०) ने बड़े पैमाने पर नवयुवकों के कई विश्व मेलों का प्रयोजन किया है। ढिंढोरा तो यही पीटा जाता है कि इन उत्सवों का राजनीति से दूर का भी सम्बन्ध नहीं परन्तु वास्तव में यह मेले प्रापेगण्डा की विराट् प्रदर्शनियां बनकर रह जाते हैं। अनुभवी कम्यूनिस्ट रूस के निर्देशन अनुसार इनका प्रबंध करते हैं।

नव युवकों का छठा विश्व उत्सव १९५७ मास्को में हुआ था। लगभग ३४,००० नवयुवकों ने इनमें भाग लिया था। "शान्ति तथा मित्रता" के लिए नवयुवकों तथा छात्रों का सातवां मेला वियाना में २४ जुलाई से ४ अगस्त, १९५९ तक हुआ। यह पहला अवसर था जबकि ऐसा उत्सव लौह आवरण से बाहर किसी देश में मनाया गया। इन उत्सवों का वास्तविक रूप यहीं अभिव्यक्त हुआ जबकि इस उत्सव में कम्यूनिस्ट हुल्लड़बाज़ जत्थों ने धक्केशाही से नवयुवकों को कम्यूनिस्ट बनाने की कोशिश की।

४. क्या सोवियत सरकार ने संयुक्त राष्ट्रमण्डल के प्रति अपने वचनों को पूरा किया है ?

संयुक्त राष्ट्रमंडल के चार्टर पर रूस ने भी हस्ताक्षर किए थे। चार्टर में लिखित है : हम संयुक्त राष्ट्रों के लोग..."अन्य बातों के अतिरिक्त इस बात का प्रण लेते हैं कि "मानव के मूल अधिकारों तथा उसकी प्रतिष्ठा तथा श्रेष्ठता और सब छोटे-बड़े देशों के, चाहे वह छोटे हों या बड़े, नर-नारियों के समान अधिकारों में दृढ़ विश्वास रखने पर सहमत हैं। इस अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञा पत्र के किसी अनुच्छेद पर भी सोवियत यूनियन ने स्थिरता तथा ईमानदारी से अमल नहीं किया।

इसके अतिरिक्त सोवियत संघ द्वारा किए गए आक्रमणों, अन्य देशों को बलपूर्ण अपने राज्य में शामिल करने और अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों के विच्छेद की कारंवाइयों के सम्मुख यह बात सिद्ध है कि सोवियत संघ ने संयुक्तराष्ट्र के प्रति अपनी प्रतिज्ञाओं का भी पालन नहीं किया है। राष्ट्रमण्डल चार्टर में लिखित

दूसरों के प्रति उदारता दिखाने तथा शान्ति से अच्छे पड़ोसियों की तरह रहने से सम्वद्ध नियमों का खण्डन किया है। संक्षिप्त रूप में कहा जा सकता है कि कम्यूनिज्म का कार्यक्रम सशस्त्र शक्ति, आक्रमण, पुलिस आतंक तथा कम्यूनिस्टों द्वारा प्रेरित हिंसात्मक तथा विनाश पूर्ण कारंवाइयों पर निर्भर है।

५· "संयुक्त कोरिया" तथा "संयुक्त जर्मनी के विषय में कम्यूनिस्टों द्वारा प्रस्तुत सुझाव पश्चिमी देशों के प्रस्तावों से किस प्रकार भिन्न हैं ?

कोरिया तथा जर्मनी के एकीकरण के लिए पश्चिमी राष्ट्रों के सुझावों तथा कम्यूनिस्टों द्वारा प्रस्तुत प्रस्तावों में मूल भेद चुनाव का तरीका है।

दोनों ही देशों के विषय में सोवियत सुझाव बहुत हद तक समान हैं। कम्यूनिस्ट कहते हैं कि पहले एक अन्त:काल विधान सभा बनाई जाए जिसमें दोनों भागों से बराबर सदस्य लिए जाएं। परन्तु उनके सुझाव को कार्यान्वित करने का अर्थ यह होगा कि इन कृत्रिम विधान सभाओं पर कम्यूनिस्ट छा जाएंगे। क्योंकि उत्तरी कोरिया की जन संख्या दक्षिणी कोरिया से एक तिहाई से भी कम है। इस तरह पूर्वी जर्मनी तथा बर्लिन के रूसी क्षेत्र की आबादी बोन की गणतंत्र सरकार अर्थात गैर कम्यूनिस्ट जर्मनी की जनसंख्या के एक तिहाई से कुछ ही अधिक है।

दोनों परिस्थितियों में कम्यूनिस्ट इलाकों के प्रतिनिधि (जो नामजद कठ-पुतलियां होंगे) एक समान ही मत देंगे। इसके लिए उन्हें मास्को से (कोरिया के संबंध में सम्भवत: पीपिंग से) निर्देश मिला करेंगे। गणतंत्रीय प्रतिनिधियों में किसी प्रकार के मतभेद का लाभ कम्यूनिस्टों को ही होगा।

फिर एक बात और भी है। उत्तरी कोरिया तथा पूर्वी जर्मनी की सरकारें जनता द्वारा निर्वाचित नहीं हैं। इसके बावजूद कम्यूनिस्ट सुझावों के अनुसार यह अन्त:काल विधान सभाएं चुनाव सम्बंधी तमाम समस्याओं तथा शर्तों का निर्णय करेंगी। यह वही निश्चित करेंगे कि मतदाताओं की योग्यता का स्तर क्या होना चाहिए। मास्को अथवा पीपिंग ने ऐसी कोई प्रयोजना प्रस्तुत नहीं कि जिसके अन्तर्गत कम्यूनिस्ट अधिकृत इलाकों में वास्तविक रूप में स्वतंत्र चुनाव हो सकें।

दूसरी ओर, पश्चिमी राष्ट्रों के निकट दोनों देशों के एकीकरण का मूल आधार वहाँ पर स्वतंत्र चुनाव हैं जिनकी निगरानी के लिए उचित व्यवस्था हो ताकि मतदाता दबाव, त्रास और आतंक से सुरक्षित रहें, गुप्त मतदान का नियम न टूटे और चुनाव परिणाम बिल्कुल ठीक हों।

६. पश्चिमी बर्लिन की समस्या का कम्युनिस्ट उक्ति "शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व" से क्या सम्बन्ध है ?

नवम्बर, १९५८ में ख्रुश्चेव ने पश्चिमी बर्लिन के दर्जे में एक बड़ी तबदीली की मांग की। इससे संसार भर में एक संकटपूर्ण स्थिति पैदा हो गई। इस उदाहरण से भी सोवियत कूटनीति एक बार फिर परिव्यक्त होती है कि एक ओर तो कम्यूनिस्ट राष्ट्रों की शान्तिपूर्ण प्रवृत्ति तथा सद्व्यवहार के गुण गाए जाते हैं और दूसरी ओर यही राष्ट्र सशक्त आचार अपनाए हुए हैं।

पश्चिमी बर्लिन के लिए ख्रुश्चेव का फार्मूला एक आदेशात्मक तथा एकपक्षीय मांग थी कि पश्चिमी बर्लिन से तमाम अधिकारी सेनाओं को निकाल लिया जाए ताकि वह एक "स्वतंत्र नगर" बन जाए। इस धमकी का वैकल्पिक रूप यह था कि (बाद में इस धमकी में से समय निर्धारण की शर्त निकाल दी गई थी)। मास्को तथा कम्यूनिस्ट पूर्वी जर्मनी के बीच व्यक्तिगत रूप से संधि होगी जिसके अनुसार पश्चिमी बर्लिन से आने-जाने पर नियंत्रण पूर्वी जर्मनी का हो जाएगा। इस प्रकार की व्यवस्था में जो खतरे निहित हैं। वह स्पष्ट हैं। पश्चिमी जर्मनी चारों ओर सर्वाधिकारी पुलिस राष्ट्रों से घिरा हुआ है। इसकी सशस्त्र सेनाओं का दवाव इस पर बना रहेगा तो वह स्वतंत्र राजनीतिक इकाई के रूप में कायम नहीं रह सकेगा। ख्रुश्चेव ने तो यह भी पहले ही स्पष्ट शब्दों में कह दिया था कि इस आयोजना के अधीन "स्वतंत्र" पश्चिमी बर्लिन को कम्यूनिस्ट नीतियों पर बेरोक टोक आलोचना करने की आज्ञा नहीं होगी। न ही यह उन लोगों को आश्रय देगा जो पूर्वी जर्मनी में अत्याचार तथा जबरी संगठन से भाग कर इधर आते हैं। इन परिस्थितियों में पश्चिमी बर्लिन को "स्वतन्त्र नगर" का नाम देना पारिभाषिक शब्दों को प्रापेगण्डे का साधन बनाने का एक और उदाहरण है।

कम्यूनिस्ट दृष्टिकोण के अनुसार पश्चिमी बर्लिन अपनी सम्पन्न तथा उन्नत अर्थ व्यवस्था और वहाँ के उद्योगी उद्यमी नागरिकों सहित पूंजीवाद का प्रतीक है जिसे दबा देना अथवा खत्म कर देना ही उचित है। इसके बाद ही "शांति पूर्ण सहअस्तित्व" संभव है। पश्चिमी बर्लिन की स्वतन्त्रता के विनाश को मार्क्सी-लेनिनी फार्मूले के अनुकूल प्रमाणित किया जा सकता है जिसके अनुसार इस संसार में दो मुख्य समकालीन पद्धतियाँ हैं—पूंजीवाद तथा साम्यवाद। दोनों प्रकृतिस्थ एक दूसरे के विरोधी हैं और अन्त में कम्यूनिस्ट सिद्धान्त का विजयी होना अनिवार्य है।

७. स्वतन्त्र संसार में आर्थिक समृद्धि के लिए पश्चिमी देशों ने क्या-क्या प्रयत्न किये हैं ?

द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त पश्चिमी यूरोपीय देशों ने आर्थिक स्थिरता तथा राष्ट्रीय संरक्षण के लिए अनेकों उपाय किए। यूरोपीय सरकारों के एक ग्रुप ने आर्थिक सहयोग यूरोपीय संगठन (ओ० इ० इ०सी०) यूरोपीय भुगतान यूनियन (इ० पी० यू०), कोयेले तथा इस्पात की बिरादरी स्थापित कीं। यूरोपीय कौंसिल की स्थापना भी की गई जिसके जिम्मे केवल परामर्श देने का काम था।

१९४८ में मार्शल प्लान, (अमरीका का यूरोपीय पुनर्निर्माण प्रोग्राम में जिस का मुख्य उद्देश्य युद्ध के पश्चात् पश्चिमी राष्ट्रों में आर्थिक स्थिरता पैदा करना था, शामिल होने का निमन्त्रण प्रत्येक देश को दिया गया। रूस ने इस प्रोग्राम में शामिल होने तथा सहयोग देने से इन्कार कर दिया और अपने पिट्ठू देशों को भी इस प्रोग्राम से लाभ उठाने से रोक दिया। इस प्रोग्राम में शामिल देशों की कम्यूनिस्ट पार्टियों के मेम्बरों को आदेश मिला कि प्रत्येक सम्भव तरीके से प्लान का हड़तालों तथा तोड़-फोड़ की अन्य कारवाइयों से अन्तर्ध्वंस करें। परन्तु उनके तमाम प्रयत्न विफल सिद्ध हुए और यूरोप का आर्थिक पुनर्निर्माण जारी रहा।

एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमरीका के देशों को भी अमरीका के 'प्वाइन्ट फोर" प्रोग्राम के अधीन तकनीकी सहायता दी जा रही है। "आर्थिक सहयोग प्रशासन" (इ० सी० ए०) की ओर से आरम्भित इस प्रोग्राम को (फारेन् आप्रेशन्ज़ एजेन्सी) (F.O.A.) चला रही है।

अमरीका की ओर से विदेशों को सहायता प्रायः अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग एजेन्सी (I.C.A.) द्वारा दी जाती है। द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त अमरीका ने कुल मिला कर अस्सी देशों को असैनिक सहायता दी है। जून, १९५९ तक इस सहायता पर अमरीका ४६५ अरब डालर खर्च कर चुका था।

१९५० में श्रीलंका की राजधानी कोलम्बो में आयोजित ब्रिटिश राष्ट्रमंडल अधिवेशन ने कोलम्बो योजना की आधार शिला रखी। इसके अन्तर्गत दक्षिण तथा दक्षिण पूर्वी एशिया की आर्थिक उन्नति के लिये छः वर्ष की अवधि में ५० करोड़ से अधिक व्यय का निश्चय किया गया।

शुरू में कोलम्बो योजना में केवल सात देश शामिल थे। बढ़ते-बढ़ते १९५४ में सदस्यों की संख्या सोलह हो गई। सहायता देने वाले राष्ट्रों के नाम

हैं, ब्रिटेन, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, अमरीका तथा जापान। सहायता

प्राप्त करने वाले राष्ट्रों में भारत, पाकिस्तान, बर्मा, हिन्देशिया, (इन्डोनेशिया) श्रीलंका, लाग्रोस, कम्बोज (कम्बोडिया), वियतनाम, तथा थाईलैंड हैं। (थाईलैंड सहायता देता भी है)।

स्वतन्त्र संसार की आर्थिक समृद्धि के लिये नवीन मार्ग तथा उन्नति के अंतर्राष्ट्रीय बैंक (International Bank for Reconstruction and Development) ने भी बहुत सहायता दी है। यह बैंक राष्ट्र संघ की विशेषित संस्था है। इसे जून, १६४६ में स्थापित किया गया था। तत्काल यह ५४ देशों को ५० करोड़ डालर के ऋण दे चुका है। यह ऋण इसलिए दिये गये थे कि द्वितीय महायुद्ध में हुये विनाश के कुप्रभावों को खत्म किया जा सके और नवनिर्माण का काम तीव्रता से हो सके। बाद में यह ऋण स्वतन्त्र संसार के बहुत से भागों में विद्युत-उत्पादन, कृषि तथा उद्योग की उन्नति के लिये भी दिये गये। इस बैंक के ६८ मेम्बर देशों में न तो सोवियत यूनियन शामिल है, न इसके पिट्ठू देश।

राष्ट्रीय संघ की एक और विशेषित संस्था कृषि तथा खाद्य संगठन (F.A.O.), जो स्वतन्त्र संसार को, विशेष रूप से पिछड़े हुए देशों को, जहाँ खाद्य सामग्री का अभाव है, सहायता देती है। इस संगठन में सोवियत गुट का केवल एक ही देश, पोलैंड शामिल है। मानव की सेवा तथा हित के लिए राष्ट्र संघ की एक और संस्था विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organisation) है जिसका सारा खर्च स्वतन्त्र संसार देता है।

इसके अतिरक्त राष्ट्र संघ पिछड़े हुये देशों के लिए तकनीकी सहायता का एक प्रोग्राम चलाता है। इस प्रोग्राम के लिए अधिकतर आर्थिक व्यवस्था पश्चिमी देश ही करते हैं। पिछले दिनों तक सोवियत यूनियन इस प्रोग्राम में भाग नहीं लेता था। परन्तु कुछ समय से इसने भी एक छोटी-सी रक़म देकर अपना योग देने की इच्छा प्रकट की है।

८. "परमाणु शक्ति शान्ति के हित में" की योजना क्या है?

८ दिसम्बर, १९५३ को अमरीकी राष्ट्रपति आइज़न हावर ने राष्ट्रसंघ की वृहत् सभा में भाषण देते हुए एक अछूता और प्रभावशाली प्रस्ताव पेश किया। उनका भाषण आधुनिक परमाणु हथियारों के विनाशक प्रभावों के प्रकाश में दिया गया था। राष्ट्रपति ने कहा :

अमरीका को इस बात का ज्ञान है कि यदि परमाणु शक्ति के मुकाबले का रुख मोड़ दिया जाए, इसे विनाश तथा विध्वंस के लिये प्रयोग न किया जाए तो तबाही की यह महान् शक्ति एक ऐसा पारितोषक बन सकती है जिससे संसार भर को लाभ है······इसलिये मैं यह प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूँ कि जो देश परमाणु शक्ति के अनुसंधान में अग्रसर हैं उन्हें चाहिये कि अपने हितों का संरक्षण करते हुये जहाँ तक हो सके अपने यूरोपियन तथा अन्य विस्फोटक पदार्थों के भण्डार का एक भाग परमाणु शक्ति की अंतर्राष्ट्रीय संस्था को देना आरम्भ कर दें और भविष्य में भी देते रहें। इस प्रकार एक साझा अन्तर्राष्ट्रीय ज़खीरा बन जाएगा। ऐसी संस्था राष्ट्र संघ के अन्तर्गत ही स्थापित हो सकती है। परमाणु शक्ति की इस संस्था का मुख्य कर्त्तव्य होगा कि ऐसे तरीक़े निकाले जिनके विस्फोटक पदार्थों को शान्तिपूर्ण कार्यों के लिये नियत कर दिया जाये। उस समय यह सम्भव हो सकेगा जब कि योग देने वाले देश अपनी शक्ति का एक अंश मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए खर्च करेंगे न कि भय तथा आतंक फैलाने में।

आठ राष्ट्र—अमरीका, ब्रिटेन, कनाडा, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, बैलजियम, पुर्तगाल तथा दक्षिण अफ्रीका के प्रस्तावित अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु शक्ति संस्था के चार्टर सदस्य बने और उन्होंने इस संगठन के स्थापन के लिए अक्तूबर, १९५५ में राष्ट्र संघ को परिनियम प्रविधान पेश किया।

१९५६ के शुरू में नई अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के स्थापन के आधार कर्म के लिए बारह राष्ट्रों की प्रारम्भिक बैठकें हुईं। अन्त में २६, अक्तूबर, १९५६ को सत्तर राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु शक्ति एजेन्सी (International Atomic Energy Agency) में परिनियम प्रविधान पर हस्ताक्षर कर दिए।

८ नवम्बर, १९५८ को ब्रुसेल्ज़ में अमरीका तथा यूरोपीय अणुशक्ति समुदाय (European Atomic Energy community EURATOM) के छः मेम्बर देशों में अणुशक्ति के असैनिक प्रयोग में सहयोग देने के विषय में एक समझौता हुआ। इस समझौते का लक्ष्य है कि आने वाले पांच या सात वर्षों में समुदाय के राष्ट्र आणविक् शक्ति से दस लाख किलोवाट बिजली तैयार करने लगेंगे। इसके लिए अमरीका में बनाये गये रिएक्टर काम में लाए जाएंगे। यह समझौता केवल अणुशक्ति की महान् उन्नति का ही द्योतक नहीं है बल्कि धीरे-

धीरे यूरोप के आर्थिक संगठन में भी लाभदायक सिद्ध होगा—और यह लक्ष्य अब बहुत दूर नहीं।

९. निरस्त्रीकरण के सोवियत तथा पश्चिमी राष्ट्रों के प्रस्तावों में क्या अन्तर है ?

१९४७ के बाद से राष्ट्र संघ के निरस्त्रीकरण आयोग के सोवियत प्रतिनिधियों ने निरस्त्रीकरण के लिए पश्चिम की ओर से प्रस्तुत सुझाओं को कभी स्वीकार नहीं किया। पश्चिमी देशों के आग्रह पर सार्थक निरीक्षण के लिये रूस ने जो प्रस्ताव रखे उनमें भी निरीक्षण की उचित गारंटी नहीं दी गई। १९५९ भी बीत गया परन्तु रूस ने गतिरोध बनाये रखा।

निरस्त्रीकरण के विषय में अमरीकी सरकार की पोज़ीशन इस पत्र से प्रत्यक्ष होती है जो १७ नवम्बर, १९५९ को अमरीकी राष्ट्रपति आइज़न हावर ने अमरीकी सैनेटर हवर्ट हमफ्रे को लिखा था। राष्ट्रपति आइजन हावर ने अन्य बातों के अतिरिक्त यह भी लिखा :

"गत छः वर्ष में अमरीका की यह विशेष कोशिश रही है कि हथियारों पर नियंत्रण के लिये और हथियारों की दौड़ खत्म करने के लिए प्रभावी तरीके तलाश किये जाएँ। इस जुस्तजू में उन्हें सफलता होगी तो सब देश अपने आप को सुरक्षित समझेंगे और आणविक युद्ध का खतरा टल जायेगा। पिछले दिनों (नवम्बर, १९५९ में) अमरीका और वृहत् सभा के अन्य सदस्यों द्वारा पेश किये हुये राष्ट्र संघ के प्रस्ताव में पूर्णतया साधारण निरस्त्रीकरण का जो लक्ष्य निश्चित किया गया है उसको पूरा करने के लिए हमारी सरकार ने यह नीति अपना रखी है कि हथियारों की पूरी समस्या के जिन भागों पर समझौता हो सकता है, उन पर संसार भर के राष्ट्रों की स्वीकृति प्राप्त की जाए।"

११ फरवरी, १९६० को अमरीकी राष्ट्रपति ने सुझाव दिया कि अन्तरिक्ष में आणविक टैस्टों पर प्रतिबन्ध लगाया जाए ताकि तेजोदिग्गरि पात के सम्बन्ध में अन्तर्राष्ट्रीय चिन्ता निवारण की जा सके। परन्तु सोवियत सरकार ने इस अमरीकी प्रस्ताव को भी अस्वीकार कर दिया।

सोलहवां अध्याय

कम्यूनिज़्म का मुक़ाबला कैसे किया जाए ?

१. साधारण व्यक्ति कम्यूनिज्म विरोधी संघर्ष में किस प्रकार सहायता दे सकता है ?

इस प्रश्न का कोई एक ही उत्तर नहीं हो सकता क्योंकि कम्यूनिज्म का खतरा बहुमुखी है। अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए वह कभी तोड़-फोड़ की कारंवाइयों को अपनाता है और कभी अधिकार युक्त पदों पर कब्जा करके उन्हें साधन बनाता है, कभी शक्ति को प्रयोग करता है तो कभी इन तीनों विधियों को इकट्ठे इस्तेमाल करके कार्य सिद्ध करने की कोशिश करता है। अपनी षड्यंत्रकारी गतिविधियों को बढ़ावा देने और प्रायः उनको छिपाने के लिये कम्यूनिस्ट रेडियो, समाचा-पत्रों और भाषणों द्वारा निरन्तर प्रापेगण्डा करते रहते हैं। उनका प्रभावपूर्ण प्रापेगण्डा अधिकतर महाजी संस्थाएँ ही करती हैं। देखने में यह ग्रुप भोले-भाले और हानि शून्य नजर आते हैं परन्तु इनकी बाग-डोर कम्यूनिस्टों के हाथ में होती है।

स्थानीय रूप में जहाँ-कहीं भी कम्यूनिज्म की आशंका हो, वहाँ स्वाधीनता की सुरक्षा के लिए तुरन्त ही इसका प्रतिरोध करना चाहिए। इस खतरे को दूर करने के लिए एक हथियार अति आवश्यक है : वह है सत्य का ज्ञान। इसलिये जो लोग इस खतरे की रोक-थाम के लिये मैदान में आयें उन्हें पहले इसे पूरी तरह समझना चाहिये। उन्हें इस बात का बोध होना चाहिये कि कम्यूनिस्ट अपने अनिच्छुक तथा अज्ञानी आखेट पर कौन-सी विधियां तथा चालें प्रयोग में लाते हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें कम्यूनिज्म के विरोधियों को इस खतरे का सामना करने के लिये दृढ़ता से संगठित किया जाए।

२. कम्यूनिस्टों की 'महाज़ी' संस्था क्या होती है ?

कम्यूनिस्ट महाज़ी संस्था ऐसा संगठन होता है जिसे कम्यूनिस्ट पार्टी हिदायतें देती है नियन्त्रित करती है तथा अपने स्वार्थ के लिये इस्तेमाल करती

है। कम्यूनिस्ट उद्देश्यों की पूर्ति में सहायता तथा सहयोग देने के लिये इसे संगठित किया जाता है। प्रायः इसका नाम कुछ और ही होता है और यह प्रत्यक्ष रूप में कम्यूनिस्ट पार्टी से विभिन्न दीख पड़ती है। यह प्रायः कम्यू-निज़्म से असम्बन्धित लोकप्रिय उद्देश्यों का समर्थन करती हैं। इसके अतिरिक्त कम्यूनिस्ट बहुधा प्रतिष्ठित नागरिकों के नाम अपनी महाज़ी संस्था के प्रवर्त्तकों अथवा उसके मुख्य सदस्यों के रूप में इस्तेमाल करते हैं ताकि वह भोले-भाले लोगों को अपनी संस्था की ओर आकर्षित कर सकें।

३. मुख्य अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट महाजी संस्थाएं कौन-कौन-सी हैं और वे क्या काम करती हैं ?

१९४५ में जब द्वितीय महायुद्ध का अन्त हुआ और संयुक्त राष्ट्रसंघ स्थापित किया गया, तो सोवियत यूनियन के तत्त्वावधान में अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिस्ट महाज़ी संगठनों के स्थापनक्रम का प्रथम चरण प्रारम्भ हुआ। १९५४ तक ऐसे तेरह संगठन बन चुके थे। इन संस्थाओं के संगठन का उद्देश्य यह था कि इनके हेतु कम्यूनिस्ट प्रापेगण्डा फैलाया जाए। चीनी-सोवियत गुट की विदेश-नीतियों के समर्थक बनाए जाएं और ऐसे व्यक्तियों को जो कम्यूनिस्टों से आशं-कित न हों और उनके वास्तविक उद्देश्यों का बोधन रखते हों, उन्हें कम्यूनिस्टों को सहयोग देने पर सहमत कराया जाए।

१९४५ में स्थापित तीन कम्यूनिस्ट महाज़ यह थें : ट्रेड यूनियनों की विश्व-फैड्रेशन, (World Federation of Trade Unions) लोकतंत्रीय नवयुवकों की विश्व फैड्रेशन (World Federation Democratic Yauth) नारियों की विश्व लोकतंत्रीय फैड्रेशन (Womens International Democratic Feder-ation)।

आगामी वर्ष में पांच महाज़ और बने। विद्यार्थियों की विश्व यूनियन (International Students Union) अध्यापकों के संगठन की विश्व फैड्रेशन (World Federation of Teachers Unions), लोकतंत्रीय कानूनदानों की विश्व एसोसिएशन (International Association of Democratic Lawyers), पत्रकारों की अन्तर्राष्ट्रीय आरगेनाईज़ेशन (International Organisation of Journalists) तथा प्रसारण की अन्तर्राष्ट्रीय आरगे-नाईजेशन (International Broadcasting Organisation) १९४९ में कम्यू-निस्ट प्रापेगण्डे की सबसे शक्तिशाली संस्था विश्व शान्ति कौन्सिल स्थापित हुई (World Peace Council) (सोलहवां अध्याय देखिए)।

इन अन्तर्राष्ट्रीय महाज़ों से अनगिनत राष्ट्रीय तथा स्थानीय संस्थाएं सम्बद्ध होती हैं। इनमें से अधिकतर तो इतने छोटे होते हैं कि इनका कोई महत्व ही नहीं होता। इन महाज़ों का दावा है कि इनके करोड़ों सदस्य हैं, परन्तु सत्य यह है कि इस संख्या के ८० प्रतिशत सदस्य चीनी-सोवियत गुट के वासी हैं, जहां औद्योगिक श्रमिकों तथा व्यवसायिकों के लिए स्टेट द्वारा बनाई हुई यूनियनों के सदस्य बनना अनिवार्य है।

प्रत्येक महाज़ का प्रबन्ध कम्यूनिस्टों तथा उनके सहगामियों के अधिकारारूढ़ गुट के हाथ में होता है। किसी भी महाज़ के चुनाव लोकतंत्रीय प्रणाली अनुसार नहीं होते। इन संस्थाओं की तमाम कार्रवाइयों और प्रस्तावों का अधिकारारूढ़ वर्ग पहले ही से निर्णय कर लेता है। यह मास्को लाइन के अनुकूल होते हैं। हंगरी में सोवियत हस्तक्षेप के पश्चात् पश्चिमी यूरोप तथा अन्य देशों की महाज़ी संस्थाओं के सदस्य अपनी मान-प्रतिष्ठा खो बैठे हैं। कुछ स्थानों पर तो प्रबन्धक कमेटियों के अन्दर हंगरी की समस्या पर बहुत विवाद हुआ। तिब्बती जनता पर चीनी कम्यूनिस्टों ने जो अत्याचार किए हैं, उनकी निन्दा किसी महाज़ ने नहीं की है।

४. कम्यूनिस्ट महाज़ी संस्थाओं से कैसे निबटा जाए ?

पहले तो कम्यूनिस्ट "महाज़ी" संस्थाओं को भलीभांति पहिचान लेना चाहिए, इस प्रकार कि शंका की कोई संभावना न रहे। इसके उपरान्त घोषित कर देना चाहिए कि यह संस्थाएं कम्यूनिस्टों की पिट्ठू हैं और इनका उद्देश्य उन्हीं लोगों पर विदेशी नियंत्रण स्थापित करना है जिनको यह सहायता की अपीलें करती हैं। आमतौर पर इन संस्थाओं के रहस्योद्घाटन से ऐसे व्यक्ति अपनी सदस्यता त्याग देते हैं जो नासमझी से इन महाज़ों के मेम्बर बन जाते हैं। इसकी महत्वपूर्ण बात यह है कि वे महाज़ को चन्दा इत्यादि देना भी बंद कर देते हैं। सदस्यों के बिना ये संस्थाएं निरर्थक हो जाती हैं।

५. मजदूर यूनियन के सदस्य कम्यूनिस्टों की यूनियन को स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करने से कैसे रोक सकते हैं ?

कम्यूनिस्ट (जिनकी पार्टी सदस्यता गुप्त रखी जाती है) छल तथा कपट से यूनियन की बैठकों को इतना लम्बा कर देते हैं कि बहुत से मेम्बर घर चले जाएं। इसके उपरान्त कम्यूनिस्ट ग्रुप अपने मनोनीत प्रस्ताव स्वीकार करा लेता है। बैठक के रिकार्ड में लिख दिया जाता है कि सब मेम्बरों ने बैठक में

प्रस्तुत आयोजनों का समर्थन किया है जबकि सत्य यह होता है कि उनका समर्थन केवल कम्यूनिस्ट ही करते हैं। इन छलपूर्ण विधियों के प्रतिरोध के लिए यह अनिवार्य है कि तमाम सदस्य बैठक के अन्त तक बैठें अथवा उस समय बैठक स्थगित करने की मांग कर दें जब उन्हें विश्वास हो जाए कि कम्यूनिस्ट जान-बूझकर बैठक को लम्बा कर रहे हैं। कम्यूनिस्टों की यह चाल और भी ज्यादा खतरनाक है जबकि वह यूनियन के महत्वपूर्ण पदों पर अधिपत्य करके यूनियन को स्वार्थ की पूर्ति के लिए प्रयोग करते हैं। अन्य संस्थाओं की भांति मज़दूर संघ के सदस्य भी साधारणतः अपनी-अपनी रूचियों अनुसार विभिन्न गुटों में बट जाते हैं। कम्यूनिस्ट सदस्य ऐसी स्थितियों का लाभ उठाते हुए गुटों के बीच फूट डालते हैं और गुट के नेताओं में वैर-भाव को उजागर करते हैं। उचित समय पर (आमतौर पर चुनाव के अवसर पर) कम्यूनिस्ट किसी एक गुट को अपनी शर्तों पर संगठित सदस्यों की सहायता पेश करते हैं। उनकी शर्तें आमतौर पर यूनियन कौन्सिल में अपना स्थान निश्चित करने के विषय में होती हैं।

कम्यूनिस्टों के अन्तिम लक्ष्य हैं : यूनियन की केन्द्रीय अथवा कार्य संचालक समिति में काम चलाने योग्य बहुसंख्या, यूनियन के प्रधान अथवा मंत्री के पद पर अधिकार, कोषपाल के पद की प्राप्ति क्योंकि इससे यूनियन को आर्थिक रूप में नियंत्रित करने का अवसर मिलता है, ट्रेड यूनियन के प्रकाशनों पर सम्पादकीय नियंत्रण अथवा वर्कशापों में कारिन्दों की आसामियों पर कब्जा ताकि श्रमिक के साथ उनका गहरा सम्पर्क बना रहे। कम्यूनिस्टों की इन चालों की रोकथाम केवल सचेत तथा तथ्य ज्ञाता यूनियन मेम्बर और उनके नेता ही कर सकते हैं।

६. राज्य सत्तारूढ़ होने की कम्यूनिस्ट विधि का उचित उदाहरण कौन-सा देश प्रस्तुत करता है ? ऐसी परिस्थिति को कैसे रोका जा सकता है ?

चेकोस्लोवाकिया का मामला एक ऐसा ही उदाहरण है। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व यह देश अपने उदार प्रशासन के लिए प्रसिद्ध था। कम्यूनिस्टों को चुनाव में कभी दस प्रतिशत से अधिक मतदान प्राप्त नहीं हुए थे। परन्तु १९४५ में उन्होंने जनता को यह कह कर फुसलाया कि युद्ध के दौरान में उनके देश को सोवियत नेताओं ने संयुक्त किया है और प्रोत्साहन दिया है। इस आधार पर कम्यूनिस्टों ने देश के मन्त्रिमण्डल की २३ सीटों में से ८ की माँग की और वह उन्हें दे दी गईं। इसके अतिरिक्त कम्यूनिस्टों के दो सहगामी जो निरन्तर उनके

एजेन्ट बने रहे, प्रधानमन्त्री तथा राष्ट्रीय प्रतिरक्षा मंत्री बन गए। संक्षेप में कम्यूनिस्टों ने पुलिस, सेना तथा देश के प्रापेगण्डा साधनों को अपने नियंत्रण में ले लिया। कम्यूनिस्टों को यह सुविधाएं वेन्स सरकार ने मई, १९४६ के चुनाव के बाद दी, जिसमें कम्यूनिस्टों ने ३६ प्रतिशत वोट प्राप्त किए।

नई सरकार ने कम्यूनिस्टों के दबाव के कारण तीन राजनीतिक पार्टियां जिनमें शक्तिशाली एग्रेरियन पार्टी भी शामिल थी, तोड़ दीं और अन्य पांच पार्टियां, जिनमें कम्यूनिस्ट पार्टी भी शामिल थी, का अस्तित्व बनाए रखने की अनुमति दे दी। पराधिकृत पार्टियां तब राष्ट्रीय फ्रंट में मिलकर काम करने पर सहमत हो गईं। यह व्यवस्था गैर-कम्यूनिस्ट पार्टियों के लिए घातक सिद्ध हुई।

फरवरी, १९४८ में, जब कम्यूनिस्ट वेन्स सरकार का तख्ता उलटने के लिए अन्तिम प्रहार की तैयारियों में लगे हुए थे, केन्द्रीय मज़दूर यूनियन पर उनका नियन्त्रण था। इसलिए सार्वजनिक हड़ताल तथा प्रदर्शन कराने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं थी। गृह-मंत्रालय तथा पुलिस पर अधिकार होने के कारण यह कम्यूनिस्ट विरोधी विद्यार्थियों के प्रदर्शनों को कुचल सकते थे। प्रधान वेन्स जो कम्यूनिस्टों के योग देने में कोई बुराई नहीं समझते थे, एक नई सरकार बनाने पर विवश कर दिए गए, नए मंत्रिमण्डल में इतने कम्यूनिस्ट घुस आए कि समूचे प्रशासन पर उनका कब्ज़ा हो गया। वेन्स ने निराश तथा अधीर होकर त्यागपत्र दे दिया। कम्यूनिस्टों ने अधिकारारूढ़ होते ही एक नया संविधान लागू कर दिया जिसके द्वारा बहुत से मूल अधिकार जनता से छीन लिए गए।

इस प्रकार की स्थितियों को रोकने के लिए अनिवार्य है कि गैर-कम्यूनिस्ट पहले तथाकथित "राष्ट्रीय फ्रंट" की तकनीक को समझें, दूसरे इनमें भाग लेने से साफ इन्कार कर दें। कम्यूनिस्टों के साथ मिलकर सरकार बनाने का अर्थ गैर-कम्यूनिस्टों के लिए आत्महत्या के समान है।

दिखावे में तो तथाकथित "राष्ट्रीय फ्रंट" का अभिप्राय समान लक्ष्यों के लिए राष्ट्रीय एकता होता है परन्तु वास्तव में इस चाल का सारांश यह होता है कि तमाम राजनीतिक शक्तियों की मर्जी को कम्यूनिज़्म के उद्देश्यों के अधीनस्थ किया जाए। नवम्बर, १९५७ के बाद से मास्को ने कई देशों में विशेषरूप से पिछड़े हुए देशों में "संयुक्त फ्रंट" अर्थात् कम्यूनिस्ट तथा कट्टर राष्ट्रवादी

पार्टियों की मिली-जुली सरकारें स्थापित करने के प्रयत्न किए हैं परन्तु इस बात में उसे अधिक सफलता नहीं मिली।

७. क्या कम्यूनिस्ट विरोधी मिली-जुली सरकार सफल हो सकती है ?

अवश्य ही, भारत में केरल प्रदेश इस सफलता का चिन्ह है। सत्ताइस मास तक वहाँ कम्यूनिस्ट पार्टी का शासन रहा। इसके बाद जुलाई, १९५९ में केन्द्रीय सरकार ने उसे पदयुक्त कर दिया। १९५७ के चुनाव में कम्यूनिस्टों को केरल की जनता के कुल ३५ प्रतिशत मत प्राप्त हुए थे। विधानसभा की १२६ सीटों में से ६० उन्होंने प्राप्त की थीं। कम्यूनिस्टों की सफलता का बड़ा कारण उनका संगठन है। गैर-कम्यूनिस्ट पार्टियां बहुत-सी समस्याओं पर परस्पर बंटी हुई थीं।

मगर जब फरवरी, १९६० में चुनाव हुआ तो कम्यूनिस्ट विरोधी तीन बड़ी पार्टियाँ—कांग्रेस, प्रजा सोशलिस्ट पार्टी तथा मुस्लिम लीग—इकट्ठी हो गईं और उन्होंने संयुक्त प्रजातंत्रीय फ्रंट बना लिया। यद्यपि इस बार कम्यूनिस्टों को ४३ प्रतिशत वोट मिले परन्तु केरल विधानसभा में उनकी सीटें ६० से घट कर २६ तक रह गईं कम्यूनिस्ट विरोधी कोलीशन ने ८४ सीटें प्राप्त कीं।

भारतीय समाचार पत्रों में इस चुनाव पर टिप्पणियों में यही कहा गया कि कम्यूनिस्टों को इतनी बड़ी हार कम्यूनिस्ट विरोधी दलों की एकता तथा दृढ़ संकल्प के कारण हुई।

८. यदि कम्यूनिस्ट और उनके सहगामी गुप्त रूप से काम कर रहे हों तो उनकी कैसे पहिचान की जाए ?

जब पार्टी के नेताओं ने कम्यूनिस्टों को हिदायत दे रखी हो कि पार्टी से अपने सम्बन्ध को प्रत्यक्ष न होने दें तो उनकी पहिचान काफी कठिन हो जाती है परन्तु असम्भव नहीं होती। कम्यूनिस्ट मनोवृति रखने वाले व्यक्ति की एक विशेष पहिचान है। गैर-कम्यूनिस्ट देश में रहने वाले कम्यूनिस्ट सामान्यतः अपनी सरकार तथा अपने देश की स्थिति पर बेधड़क आलोचना करता रहता है। परन्तु सोवियत यूनियन या इसकी राष्ट्र तथा परराष्ट्र नीतियां उसकी आलोचना का निशाना कभी नहीं बन पाती। इसी तरह सहगामी भी (वह लोग जो कम्यूनिज़्म के समर्थक हैं यद्यपि वह वास्तविक रूप में कम्यूनिस्ट पार्टी से सम्बन्धित नहीं होते) "मास्को लाइन" पर प्रायः आलोचना नहीं करते।

जब से नए सोवियत नेतृत्व द्वारा स्तालिन की निन्दा तथा भर्त्सना के पश्चात्

पार्टी के अन्दर भी कड़ी आलोचना का काम शुरू हो गया। कुछ तो इस परिवर्तन से और कुछ टीटोजिम (जो सी॰ पी॰ एस॰ यू॰ से कम्यूनिस्टों की स्वतंत्रता का प्रतीक है) से सहगामियों की पहिचान और भी कठिन हो जाती है।

सोवियत सामूहिक नेतृत्व ने जब से स्तालिन की अधोगति की है, संसार भर के कम्यूनिस्टों ने कम्यूनिस्ट सिस्टम की तमाम त्रुटियों की जड़ "व्यक्तित्व-वाद" को करार दिया है, स्वयं कम्यूनिस्ट सिस्टम को नहीं।

९. क्या पूछताछ से कम्यूनिस्ट अथवा कम्यूनिस्टों के समर्थक का पता चल सकता है?

जिस व्यक्ति पर कम्यूनिस्ट होने की शंका हो, उसकी सही शनाख्त के लिए प्रश्नोत्तर का तरीका अधिक उपयोगी नहीं।

नीचे से ऊपर तक कम्यूनिस्ट पार्टी के सब सदस्य मार्क्सी तर्क शास्त्र की मौखिक कलाबाजियों में निपुण होते हैं। "आशक्त" कम्यूनिस्ट ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने में संकोच करेंगे जिनसे उसकी पहिचान सहल हो जाए। बस टालने के लिए वह तुरन्त ही असम्बद्ध विषयों पर वार्तालाप छेड़ देगा।

१०. क्या कम्यूनिस्ट पार्टी का सदस्य रह कर कोई नागरिक अपने देश का वफ़ादार हो सकता है?

कम्यूनिस्ट पार्टी के सदस्य की वफ़ादारी प्रथमतः अपनी पार्टी के प्रति होती है। अपने जन्म-स्थान तथा देश से नहीं। इसका अर्थ यह है कि कम्यू-निस्ट पार्टी का सदस्य जो पार्टी के अनुशासन के पालन के लिए विवश है अपने देशोहित के विरुद्ध काम करने पर हर समय तत्पर रहता है। यदि उसे आदेश मिले तो वह अपनी मातृभूमि को धोखा देने से और देश द्रोहियों को लाभ पहुँचाने में भी संकोच नहीं करेगा।

यह ठीक है कि सब कम्यूनिस्ट जासूसी में व्यस्त नहीं रहते फिर भी इस मामले में कोई भी कम्यूनिस्ट, जो पार्टी के नियमों तथा आदेशों का पालनकर्ता है, भावी जासूस हो सकता है। और आदेश मिलने पर किसी समय जासूसी सरगर्मियां शुरू कर सकता है। चूंकि कम्यूनिस्ट मास्को से (या कुछ इलाकों में पीपिंग से) हिदायतें लेते हैं इसलिए वे वास्तव में विदेशी एजेन्ट हैं। कुछ देशों के विधि संग्रहों में इनका वर्णन इन्हीं शब्दों में किया गया है।

बहुत से देशों में कम्यूनिस्ट पार्टी अवैध घोषित कर दी गई है। इसलिए नहीं कि यह एक राजनीतिक संगठन है बल्कि इसलिए कि विधि अनुसार स्थापित सरकार के अस्तित्व के लिए निरन्तर खतरा बनी रहती है।

११. क्या कम्युनिस्ट अन्तर्राज्य नीति भी उसी कार्यरीति पर चलती है जो राजनीतिक मैदान में अपनाई जाती है ?

अन्तर्राष्ट्रीय नीति के मैदान में मास्को ने प्रत्येक अवसर पर कोशिश की है कि पश्चिमी लोक तन्त्रीय देशों के बीच एकता तथा सहयोग को भंग कर दिया जाए तथा उनके परस्पर मतभेद से लाभ उठाया जाए।

प्रत्येक क्षेत्र में—राजनीतिक हो या आर्थिक, समाजी हो या अन्तर्राष्ट्रीय—कम्यूनिस्टों की विभाजनात्मक नीति के प्रतिरोध के लिए यह अनिवार्य है कि गैर कम्यूनिस्ट व्यक्ति तथा संस्थाएँ कम्यूनिस्टों की छलपूर्ण विधियों को भली भांति समझ लें और अपने सांझे हितों की रक्षा के लिए एक हो कर रहें।

१२. अध्यापक कम्यूनिज़्म के प्रतिरोध में किस हद तक उपयोगी हो सकता है ?

जिन लोगों ने शिक्षण का व्यवसाय ग्रहण किया है उनका विशेष रूप से यह कर्त्तव्य है कि अपने छात्रों को कम्यूनिस्ट प्रभाव से बचाए रखें क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिज़्म अपने विकास के लिए नई पीढ़ि को अपनी ओर आकर्षित करने पर बहुत ज़ोर देता है।

फिलपाइन के दौत्यकर्मी तथा राजनीतिज्ञ कार्लोस पी० रोमोलो ने अपनी पुस्तक "एशिया में धर्म युद्ध" में लिखा है।

"कम्यूनिस्टों की संसार भर में यही गुप्त विधि रही है। नवयुवकों को फांसो जो भावी नेता हैं, नई पीढ़ी के प्राण हैं...कम्यूनिज़्म का उद्देश्य अब भी यही है। संसार भर के नवयुवकों पर उनकी निगाह और मन में उनको कम्यूनिस्ट बनाने की लालसा है। और जहाँ कहीं सम्भव हो बच्चों को कम्यूनिज़्म का उपदेश देने का प्रयत्न करते हैं।"

कम्यूनिज़्म के विरोधी (जिन में सैनिक तथा नागरिक दोनों शामिल हैं) रूस से चीन और कोरिया तक कम्यूनिज़्म से लड़ने के "दोष" में बहुत दुःख सहन कर चुकें हैं। उन्होंने जीवन बलिदान किए हैं। करोड़ों लोग ऐसे भी हैं जिन्होंने क्षय तथा अभाव में जीवन व्यतीत किए हैं परन्तु कम्यूनिज़्म के आगे झुके नहीं। इनके उदाहरण से प्रत्येक साधारण व्यक्ति को प्रोत्साहन मिलना चाहिये कि इस राह में जो बलिदान तथा त्याग भी आवश्यक हो, पेश करे और कम्यूनिज़्म के उपल्पव को बचाए रखें।

कम्यूनिज्म के खतरे की रोक-थाम के लिए अधिक सतर्कता तथा होशियारी की आवश्यकता है। कम्यूनिस्टों की चालों से परिचित तथा स्वाधीनता की सुरक्षा के लिए उतने ही जोश तथा तत्परता की जरूरत है जो संसार भर की जनता को गुलाम बनाने के लिए कम्यूनिस्टों में पाया जाता है।
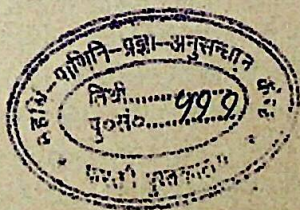
संयुक्त राज्य अमरीका
(U. S. A.)
के राष्ट्रपति
का यूनियन की दशा के विषय पर भाषण
से उद्धृत अंश
जो उन्होंने
७ जनवरी, १९६० को
सीनेट तथा हाउस ऑव रिप्रिजेन्टेटिवज़ के संयुक्त अधिवेशन में दिया

हम उस साझी मंज़िल के अभिलाषी हैं जहाँ हमारे अपने नागरिकों के लिए उज्ज्वल अवसर हों, समूचे संसार के लिए न्याय तथा शान्ति हो।

हमें और हमारे मित्रों को एक ऐसे सिद्धान्त का सामना करना है जिसने गत चालीस वर्ष से अपनी पद्धति से भिन्न शासन प्रणालियों पर विजय पाने के लिये उपद्रव उठा रखा है।

हमें इस बात का पूरा एहसास है कि हम साम्राज्यवादी कम्यूनिज्म के सिद्धान्तों को चाहे कितना ही अस्वीकार करें यह आज एक महान उपक्रम बन चुका है। इसके नेता अपनी जनता को मजबूर करते हैं कि वह अपनी काम करने की आज़ादी, आत्मा की स्वाधीनता तथा निजी उमंगों और अभिलाषाओं का बलिदान दे दें और इसके बदले में भविष्य के अदृश्य तथा मायामय लाभों को स्वीकार करलें। कम्यूनिस्ट गत पन्द्रह वर्षों में प्राप्त की गई आर्थिक सफलताओं की सूची प्रस्तुत कर सकते हैं जो उनके तटस्थ राष्ट्रों के साथ किए गए चमकीले नकली वादों को और पुरानी परिभाषाओं का अर्थ वह नहीं रहा जो हम जानते आए हैं। पुलिस राज्यों को अवामी गणतंत्र कहा जाता है। स्वतंत्र लोगों पर सशस्त्र विजय को "स्वाधीनता दिलाए जाने का" नाम दिया जाता है।

इन चिकने नारों के कारण सच्ची निष्ठा, धर्म तथा तथ्य का संचारण कठिन हो गया है।

हमें अपने शान्तिपूर्ण उद्देश्यों का, श्रेष्ठतर संसार के निर्माण सम्बन्धी अपनी आकांक्षाओं को स्पष्ट-रूप से व्यक्त करना चाहिए। इसके लिए हमें ऐसी भाषा का प्रयोग करना चाहिए जो मन को प्रबुद्ध करे, और उसे सत्य को भ्रष्ट करने तथा पूर्व निश्चत विक्रोक्ति का साधन नहीं बनना चाहिए।

उनकी ओर से मुकाबला बहुत सख्त है, यह हम स्वीकार करते हैं।

परन्तु अपनी मान्यताओं के क्रम में हम स्वतंत्रता को प्रथम स्थान देते हैं। हमारा राष्ट्रीय अस्तित्व, हमारी राष्ट्रीय उन्नति इस मूल सिद्धान्त पर निर्भर है। इसी सिद्धान्त ने हमें स्वतंत्र संसार का नेतृत्व प्रदान किया है। यह सबसे बड़ा इनाम है जो किसी देश को मिल सकता है। कम्यूनिज्म यह इनाम कभी नहीं दिला सकता। स्वतंत्रता का वातावरण रहते हुए अमरीका ने जो आर्थिक उन्नति की है उसका प्रमाण हमारी अपनी समृद्धि तथा सम्पन्नता ही नहीं वरन् वह खरबों डालर भी हैं जो हमने स्वतंत्र देशों के नव-निर्माण के लिए दिए हैं ताकि वह द्वितीय महायुद्ध के दौरान हुए विध्वंस तथा विनाश को दूर कर सकें। और खरबों डालर भी इसी बात के साक्षी हैं जो हमने उन देशों की स्वतंत्रता की सुरक्षा के लिए दिए जिनकी आजादी को बाहर से खतरा पैदा हो गया था। इतिहास के जिस नए युग में हम प्रवेश कर रहे हैं, उसकी समस्याओं को सुलझाने की योग्यता तथा साहस हम में अवश्य ही है।

हमें अपनी योग्यता तथा बुद्धिमता के साथ तथा अनथक ढंग से अपने नुकसान से विमुख होकर, काम लेना चाहिए।

हमारे नक्षत्र में जो दरार पड़ गई है वह गहरी तथा चौड़ी है।

इसके अतिरिक्त हम शब्दों के ठीक अर्थों को भंग कर देने वाले तूफान में रह रहे हैं जिसमें शब्दों के अर्थ बदल गए हैं।
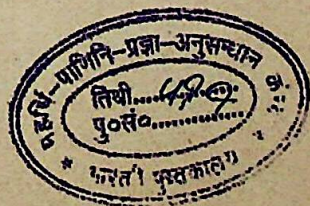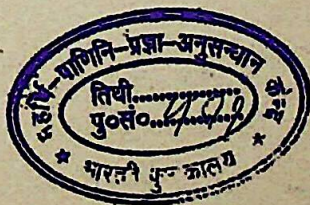
कम्युनिज़म के सम्बन्ध में
प्रश्न, विद्यार्थी, व्यापारी, धा
नेता, किसान, मजदूर तथा
दूसरे लोग साधारणतया पूछ
हैं इस पुस्तक में उन के ठोस
उचित उत्तर दिये गये हैं:

- कम्युनिज़्म की रूपरेखा
- कम्युनिस्ट शासन-प्रणाली
- कम्युनिज़्म और मज़दूर
- कम्युनिज़्म के अंतर्गत ज़मीन तथा जायदाद की मिल्कियत
- कम्युनिज़्म में समता
- कम्युनिज़्म के अधीन न्यायालय तथा न्याय
- साम्यवाद का लौह आवरण
- कम्युनिज़्म और धर्म
- कम्युनिज़्म के अधीन शिक्षा-प्रणाली
- कम्युनिज़्म के अधीन खाद्य वस्तुओं तथा माल का उत्पादन
- कम्युनिज़्म के अधीन पारिवारिक जीवन स्त्रियाँ और बच्चे
- कम्युनिज़्म में व्यापार
- कम्युनिज़्म का विस्तार
- शांतिपूर्ण सहअस्तित्व और सैन्यवाद
- कम्युनिज़्म और स्वतन्त्र संसार
- कम्युनिज़्म का मुक़ाबिला कैसे किया जाए
  अमरीका के राष्ट्रपति का यूनियन की दशा के विषय पर भाषण